अमर वाणी

अनुभवी अगम-वाणी

श्री सत्पुरुष पूज्य सद्‌गुरुदेव मंगतराम जी महाराज

संगत समतावाद (रजि०)

समता योगाश्रम

जगाधरी-135003

प्रकाशक :
संगत समतावाद (रजि०)
समता योग आश्रम
जगाधरी
© संगत समतावाद (रजि०)

द्वितीय संस्करण 2007

प्राप्ति स्थान :
(1) समता योग आश्रम
छछरौली रोड
जगाधरी–135003
(2) समता योग आश्रम
अंसल पालम विहार फार्म नं०45
गाँव–सलाहपुर
हूडा गुड़गाँव सेक्टर–21 के सामने
नई दिल्ली–110061

मुद्रक :
राजेश प्रिंटिंग प्रैस
7321–22, आराम नगर,
पहाड़ गंज, कुतुब रोड,
नई दिल्ली–110055

समता
अपार शक्ति

प्रस्तावना

यह अमर-वाणी श्री सद्‌गुरुदेव मंगत राम जी महाराज के मुखारविंद से सम्पूर्ण मानव जाति के कल्याण के लिए प्रकट हुई है।

श्री महाराज जी ने जन्म-सिद्ध स्वरूप में संसार के उद्धार हेतु भिन्न-भिन्न स्थानों पर बिगड़े हुए हालात देखकर विभिन्न प्रसंगों में तमाम वाणी का उच्चारण फरमाया और वर्तमान युग की जनता को 'समता' अथवा ईश्वर के मार्ग पर चलने का उपदेश दिया। इस सम्पूर्ण वाणी का एकत्र स्वरूप 'श्री समता प्रकाश' ग्रंथ के रूप में प्रकाशित हुआ है।

आजकल के व्यस्त जीवन में लगभग प्रत्येक व्यक्ति के पास समय का अभाव है जिसके कारण सम्पूर्ण ग्रंथ का अध्ययन जिज्ञासु नहीं कर पाते और इस अनमोल वाणी के लाभ से वंचित रह जाते हैं। साथ ही एक ही विषय पर सम्पूर्ण ग्रंथ में कई जगह वाणी उपलब्ध होने के कारण पाठकों को उसे ढूंढने में भी काफी असुविधा होती है। इसलिए इस पुस्तक में मूल ग्रंथ के सरल और महत्वपूर्ण विषयों की वाणी संकलित करके विषय-क्रमानुसार उपलब्ध करवाई गई है। पुस्तक के अंत में वाणी के कठिन शब्दों के अर्थ भी प्रकाशित किए गए हैं। जिज्ञासु इस वाणी का स्वाध्याय कम समय में ही करके जीवन का वास्तविक लाभ प्राप्त कर सकेंगे।

सभी सज्जन इस सहज, सरल और अगम-शिक्षा को अपनाकर अपने जीवन की उन्नति करें।

प्रकाशक

विषय सूची

क्र0 सं0	विषय	पृष्ठ क्रमांक
1	महामंत्र की महिमा	1
2	मंगलाचरण	3
3	ईश्वर महिमा एवं प्रार्थना	4
4	जीव उद्धारक नियम	60
5	सांसारिक जीवन	64
6	मानव जीवन का उद्देश्य	73
7	देह तथा आत्मा का भेद	81
8	सत्संग एवं सत्संगति	85
9	सत्विचार	97
10	सत्विश्वास	103
11	मन का स्वरूप एवं शान्ति	115
12	संसार की रचना	128
13	ईश्वर पूजा	
	(क) पूजा का गलत स्वरूप	130
	(ख) पूजा का सही स्वरूप	133
14	धर्म का स्वरूप	138
15	सदाचार	146
16	सादगी	158
17	शुद्ध आहार	160
18	शुद्ध व्यवहार	162
19	सेवा	165
20	बन्धन का स्वरूप	172
21	कल्याण का स्वरूप	175
22	सत्पुरुषार्थ	178
23	वैर का त्याग	179
24	सत्-विद्या	181
25	अहंकार का उपाय	185

क्र0 सं0	विषय		पृष्ठ क्रमांक
26	कर्म गति		188
27	गुरु शिष्य विज्ञान		
	(क)	सत्गुरु की आवश्यकता	203
	(ख)	सत्गुरु प्राप्ति का मार्ग	205
	(ग)	सत्गुरु महिमा तथा लक्षण	206
	(घ)	शिष्य के लक्षण	211
	(ङ)	सत्पुरुषों का जीवन	216
	(च)	सत्पुरुषों की समानता	219
28	गुरुमुख मनमुख मार्ग		221
29	प्रमु स्मरण का महत्व		227
30	प्रभु शरणागति		249
31	चेतावनी वाणी		251
32	वैराग्य वाणी		271
33	वाणी का महत्व तथा सार		312
34	आरती एवं समता मंगल		314
35	शब्दार्थ		316
36	हिन्दी ग्रंथ श्री समता प्रकाश (चतुर्थ संस्करण) तथा अमर वाणी की तुलनात्मक शब्द संख्या		331

महामन्त्र

ओ३म् ब्रह्म सत्यं
निरंकार अजन्मा अद्वैत
पुरखा सर्वव्यापक कल्याणमूरत
परमेश्वराय नमस्तं

महामंत्र की महिमा

तिरयोदश अक्षर मंत्र ये, सरब सिद्धी दातार।
जो सिमरे नित प्रेम से, मंगल पाये अपार।।

जनम जनम जाये भरमना, प्रभ चरन पाये विशवास।
मोह माया संकट मिटे, सब कारज होवें रास।।

महमा सत सरूप की, सब अक्षर पहचान।
चार वेद और सिमरती, सब का सार निधान।।

परम शकत परकाश अत धारे, कोट पिण्ड ब्रह्मण्ड।
सरब नियारा आप रहे, तत्त नाद रूप अखण्ड।।

रिखी मुनी और देवते, गायें गुरु अवतार।
महमा अबगत रूप की, पल पल करें विचार।।

ज्ञानी कथा विचारते, जुग जुग पूरन सार।
ओड़क निरना पाया, सरब रूप 'ओंकार'।।

कथा विचारें वेदान्ती, देवें अनक भाँत परमान।
'ब्रह्म सत्यम्' तत्त रूप का, निरना करें बखान।।

शबद रूप को पूजते, जो तीन काल निरदोख।
त्रै गुन से नित भिन्न है, 'निरंकार' शबद तत्त मोख।।

उतपत परलय जो होये, सो असत माया विकार।
'अजन्मा' कर प्रभ पूजते, जुग जुग गुनी अपार।।

केवल सत्ता तत्त रूप को, पूजें सिद्ध बुद्ध अनेक।
दृष्यमान सब भरम है, प्रभ केवल रूप 'अद्वैत'।।

परम शकत संसार में, ज्ञान मात्रक सार।
सरब आधारी तत्त सो, करें 'पुरखा' विचार।।

लाख चौरासी जन्त में, जो सम रस रह्या वियाप।
'सरब व्यापक' तत्त जान के, हरजन करते जाप।।

राग द्वेष जाँ को नहीं, शुद्ध सरूप त्रैकाल।
'कल्यान-मूरत' तत्त ध्यान से, तन मन होये निहाल।।

सरब शकत आधार जो, अतुल शकत निरधार।
'परमेश्वर' कर पूजिये, ताप तपन होये छार।।

नमों नमों प्रभ रूप को, जाँ की महमा अपरमपार।
अनंत शकत तत्त शबद को, 'नमस्तं' बारमबार।।

तत्त मन्तर महमा अपार है, ज्ञान सागर अथाह।
जिस बिध जो सिमरन करे, भव दुस्तर तरे असगाह।।

सत सरूप परमातमा, सब अक्षर महमा जाँ।
जो सिमरे चित प्रीत से, कलह ना व्यापे ताँ।।

सत मन्तर सिमरन करे, उट्ठत बैठत नर जोये।
जाये भरम की दूषना, चित शान्त परापत होये।।

विजय पाये संकट मिटे, सत गुन ले सुखसार।
आद व्याध जाये कलपना, पाये सूझ धरम अपार।।

जो ध्याये नित प्रेम से, परसे नहीं पखवाद।
समता तत्त रसना मिले, मोह ममता मिटे मूल परमाद।।

कलह कलेश सब दूर होये, पाये ज्ञान तत्त योग।
'मंगत' तत्त अक्षर नित गाइये, प्रभ दर्शन होयें संजोग।।1

मंगलाचरण

नारायन पद बंदिये, ताप तपन होये दूर।
नमों नमों नित चरन को, जो सरब आधार हज़ूर।।

हिरदे सिमरो नाम को, नित चरनी करो दण्डौत।
सत शरधा से पूजिये, रख सतगुर की ओट।।

दुबधा मिटे मंगल होये, जो चरन कँवल चित धार।
रिध सिद्ध आवे घर माहीं, पावें जय-जयकार।।

साचा ठाकर सरब समराथा, अपरम शकत अपार।
'मंगत' कीजे बन्दना, नित चरनी बलहार।।2

सत मारग सोझी मिली, तन मन भया निहाल।
गवन मिटी संसार की, सतगुर मिले दयाल।।

बार बार करुँ बन्दना, सतगुर चरनी माईं।
'मंगत' सतगुर भेंट से, फेर गरभ नहिं आईं।।3

ईश्वर महिमा
एवं
प्रार्थना

नमो निरंजन आद जुगादी, जो सरब शकत भरपूर।
निमस्कारं निमस्कारं, नित सत तत्त शबद हज़ूर।।

निमख निमख में दण्डवत करूँ। पारब्रह्म की सरनी पड़ूं।।
पूरण पुरख परमेश्वर ध्याऊँ। सरब सरिष्ट में सो दरसाऊँ।।
अखण्ड सरूप अबगत आपारी। निरमल नाम करूँ विचारी।।
सरब परकाशी जोत सरूप। तीन काल में रहे अनूप।।
अकाल सरूप तत्त निरवान। सहज भाये चित्त धरूँ धियान।।
मंगलकारी तत्त शबद अलेख। सरब जगत तेरा प्रभ भेख।।
नित बन्दूं नित करूँ विचार। परमानन्द शकत निरधार।।
अपरम अपार लीला बिसतारी। पूरण पुरख जाऊँ बलहारी।।
अन्तरगत में सरब समाई। नाम तेरा अखण्ड सुखदाई।।
परम धाम तूँ आप स्वामी। अच्छर अबगत तूँ अन्तरयामी।।
पाँच भूत का तूँ ही आधार। आदि पुरख तूँ सरजनहार।।
अचरज शकत अतुल परमान। तूँ ही सत केवल भगवान।।
डण्डवत करूँ पाऊँ अरदास। नित नित राखूँ चरण निवास।।
बिस्माद सरूप तेरा भगवन्त। तूँ ही विचरें रूप अनन्त।।
अन्तरगत में करूँ ध्यान। सतगुर सीख का पाऊँ निधान।।
अत ही अचरज जगत पसारा। रंचक भेद नहिं मिले दातारा।।
करूँ परणाम पल पल की सार। सत ठाकर तोहे नित निमस्कार।।
तेरी ओट पूरण जगदीश। सरणागत हो करूँ आदेस।।
निरमल चित्त से करूँ ध्यान। आद जुगादी तू सत भगवान।।

भवसागर में आय के, नारायण चित्त राख।
'मंगत' मिले सत शान्ती, सतगुर की सुन साख।।4

तूँ दीनदयाल सरब का स्वामी। पतितपावन तूँ परम सुखधामी।।
अनन्त सरूप शकत अनन्त। सरब पसरया तूँ ही भगवन्त।।
अनन्त महमा तेरा विवेक। अनन्त सरूप तेरा प्रभ एक।।
तृण-तृण अन्दर तूँ समाया। अखण्ड सरूप तेरा प्रभ राया।।
अकथ कथा विज्ञान सरूप। परम पुरख तूँ अत अनूप।।
जब देखूँ प्रभ अन्तर माहीं। तूँ एक समाया पार गुसाईं।।
अपना कौतक आप बिसतारी। अचरज लेख तेरा पारमुरारी।।
नित ही नित करूँ अरदास। सत ठाकर में करूँ निवास।।
तूँ रखयक सरब जग देवा। पल-पल माँगूँ निर्मल सेवा।।
दात करो अपनी प्रभ राये। तेरी कथा मन माहीं समाये।।
नित ही बाँछूँ चरनी धूड़। दीनदयाल समरथ्थ हज़ूर।।
अन्तर बाहर तेरा जस गाऊँ। दिवस रैन तेरी कीरत ध्याऊँ।।
तूँ समरथ्थ ठाकर बेपरवाहे। बारमबार महमा चित्त गाए।।
नाम ध्यान पाऊँ तत्त मूल। तूँ व्याप रिह्या सूक्षम अस्थूल।।
प्रभ दाते तेरी हूँ सरना। तूँ ठाकर हैं कारन करना।।
अत वडियाई तेरी प्रभ एक। कथ कथ थाके सिद्ध मुनी अनेक।।
राखनहार तूँ आप दयाल। सरब जियाँ पर होयें किरपाल।।
अपने भाने तूँ करे नित दात। निर्मल ध्यान तेरे चरन समात।।
परम परीत रहे चित्त माईं। तूँ ठाकर परम सुखथाईं।।

नित हूँ मैं सरनागती, पद परम पुरख प्रभ राये।
'मंगत' की सुन बेनती, नित प्रभ जी होत सहाये।।5

एक तूँ ही सरब सुखदाता। पूरन पुरख सकल गत जाता।।
नित ही चरनी पाऊँ आधार। सत ठाकर तोहे नित निमस्कार।।

औगुन भरया मन दुखदाई। अधिक सियानफ़ में भरमाई।।
जीवत की नहिं सार पहचानी। गरब धार भरमें अज्ञानी।।
मूढ़मती धारी दुखदाई। नहीं चित्त आवे तेरी वडयाई।।
सत परमेश्वर रखया कीजो। अपने भाने सब खेद हरीजो।।
तूँ साजन सरब दातारी। नित ही चरन जाऊँ बलहारी।।
पारब्रह्म अखण्ड आपार। शुद्ध सरूप तू ही निरंकार।।
सरब आधारी गोबिन्द देवा। आद पुरख नित माँगूँ सेवा।।
सब चतुराई मन की जाए। दीनानाथ तेरी प्रीत समाए।।
पूरन रूप तूँ अत बलवन्ता। घट घट व्यापक तूँ भगवन्ता।।
तेरी रसना सब में परकाशी। दीनदयाल तूँ ही अबनाशी।।
अधिक विकार जिया नित धारी। मोह माया में नित फँसारी।।
सत सोझी नहिं आवे देवा। मूढ़मती नित भरम लखीवा।।
अब कुछ किरपा कीजो स्वामी। निरमल ध्यान पाऊँ बिसरामी।।
अपनी महमा कीजो बख़शीश। प्रेम कमाऊँ चरन जगदीश।।
परचण्ड माया का वेग सब नासो। पततपावन घट में परगासो।।
खिमा ग़रीबी आवे चित्त धीरा। निरमल प्रीत पाऊँ सुखसीरा।।
मोह-माया पर विजय लखाऊँ। घट घट तेरा रूप दरसाऊँ।।

आध-व्याधी सब मिटे, मनुआँ होये सुचेत।
'मंगत' नित सरनागती, प्रभ जी हरो विखेप।।6

तूँ दाता तेरे दर आया। सकल आधार तूँ रूप धराया।।
साची भगत पाऊँ निषकामी। दीनदयाल दीजो बिसरामी।।
अजर अमर तत्त रूप लखाओ। जनम मरन दुख ताप मिटाओ।।
अकाल सरूप अकरम पद दीजो। भरम विकार सकल हर लीजो।।
अनादी सरूप पाऊँ प्रभ तेरा। आवागवन का नासे फेरा।।
नित सरनाई करूँ परनाम। निरमल प्रीत पाऊँ सतधाम।।
चंचल चित्त तजे चतराई। सत सील मन माहीं समाई।।

दुख सुख परसूँ तुम आधार। समता रस पाऊँ सुखसार।।
अखण्ड शान्त परसूँ पद स्वामी। करो उद्धार प्रभ अन्तरयामी।।
शोक मोह काटो बिख जाल। सरनागत को करो निहाल।।
साची सेव कीजे चित्त वास। अनन परीत पाऊँ अबनास।।
करूँ दंडवत पदपंकज देवा। निरमल चित्त से माँगूँ सेवा।।
आज्ञा तेरी में विचरूँ स्वामी। करम फाँस हरो बिख जामी।।
परम दयाल तू ही समराथा। आदी देव परम सुखदाता।।
नित ही अपनी उस्तत दीजो। मूढ़मती को चरनी लीजो।।
सत अरदास चित्त माहीं समाए। परम पुरख तूँ ही प्रभ राए।।
नमों नमों तेरे नित चरनां। आदी पुरख तूँ कारन करनां।।
सत उपमा तेरी चित्त गाए। साची प्रीत इक नाम धियाए।।
अखण्ड शान्त प्रभ तेरा धाम। सतगुर सीख पाऊँ बिसराम।।

सन्तन की सत सीख से, मन तन आवे धीर।
'मंगत' सेवा साध की, हरे भरम तकसीर।।7

करो आदेस नित पुरख बिधाता। बिषन वरंच जाँ को शिव ध्याता।।
नाना भाँत की रचना कीनी। हस्ती तृन आद की ख़बर नित लीनी।।
तुम परसाद चराचर सुख पाए। सबका राज़क हो रिज़क कहलाये।।
सबके अन्तर देवे परकास। चारखानी में सम करे बिलास।।
सिमरो ठाकर परम उपकारी। सरब के भीतर सरब आधारी।।
राजा राना होवे मीर। ज्ञानी ध्यानी गुनी फकीर।।
धनी दलिद्री हिकमत वादी। पण्डित क़ाज़ी और बाद-मुबादी।।
चोर चतर ठग और बकारी। शेख़ पीर और गुरु आचारी।।
दरिंद चरिंद अन्न घास के आहारी। सबका रखयक एक मुरारी।।
मिल सतगुर ये सार लखाई। हस्ती कीटी तृन रह्या समाई।।
तिसकी प्रभता सबमें दिखलाए। आलख पुरख गत लखी ना जाए।।
नदियाँ नीर सागर जल अथाहे। पवन पावक में रह्या समाए।।

परबत कन्द्रा उजाड़ बीबान। सबमें देखी तेरी इक शान।।
माँगूँ तुझसे नाम की भीख। दीनदयाल बखशो ये दीख।।
चौसठ घड़ी आवे तेरी याद। कठन मन नहीं परसे परमाद।।
अनन भगत दीजो मोहे देवा। प्रेम प्रीत करुँ चरन की सेवा।।
और आस जग की ना कोए। तेरा सिमरन मन लड़ी परोए।।
तुमरी याद मन करे सरजीत। तपन विनासे होए पुनीत।।
चरंजीव करे प्रभ तुमरा नाम। साची औखद में अन्तर बिसराम।।
ज्यों ज्यों नाम प्रभ अन्तर समाए। मन में धीरज आए अधकाए।।
विखया अगन मिल सतगुर वंजाई। आलख पुरख की सोभा मन पाई।।
एके नाम की माँगूँ बख़शीश। अनमत को राखो बीच चरन जगदीश।।

अधक वडाई नाम की, मन तन दे आनन्द।
'मंगत' विसरे ना पलक एक, साचा शबद अखण्ड।।8

दीनदयाल परमेश्वर ही तू मेरा। अनमत राखो नित चरनी केरा।।
तुम बिन दूजा ना कोई समराथा। अबगत पुरष तू नाथन-नाथा।।
माँगूँ भगत नाम बख़शीश। चरनी राखो सत जगदीश।।
औगनहार हाँ जनत तुम्हार। हो किरपाल तुम सरब आधार।।
नित निहथावाँ ना थाओं कोए। तुम विछोड़ा भरम चित जोए।।
कर किरपा तू साच मुरारी। अपने जन के संकट टारी।।
हरो विकार सत सेवा दीजो। भाओ भगत रस अन्तर सीजो।।
सिद्ध रिखीशर गुनी अपार। भए भिखारी प्रभ तेरे द्वार।।
होए किरपाल प्रभ आप मिलाए। अन्ध जीव को सार दिखलाए।।
जतन करे ना होवे काजा। माँगूँ दरस ग़रीब-निवाजा।।
अपनी माया का भेद उठाओ। झिलमिल ज्योती को दिखलाओ।।
आसा तृषना प्रभ हरो बिकार। सत सील दे नाम आधार।।
धूड़ बनाँ तेरे जन चरना। माँगूँ दान ग़रीबी सरना।।
हो रखयक तुम सदा उद्धारी। सरनागत की ख़बर गुज़ारी।।

अनेक जनम का हरो बिकार। देखूँ दरस सत सरजनहार।।
अनन भगत जो शिव कमाए। अटल ज्ञान जो सनकादक गाए।।
प्रेम प्रीत नारद जो राखी। अदभुत दरशन ध्रुव जो भाखी।।
सेवा टहल गुरमुख जो पाए। परम त्याग जो त्यागी में आए।।
सुन्न समाध जो चीने रसना। अधक प्रेम जो भगताँ मन वसना।।
माँगूँ अमरत जो सबकी रास। दरस तुम्हारे की अधक पियास।।
चंचल मनुआँ को दीजो धीर। परगट होके रमो शरीर।।
मैं तोहे देखूँ तू मोहे देख। मन में रहे ना अन्तर रेख।।
अघट प्रेम तन मन समाए। जल थल पुरियाँ में एको दिखलाए।।

साखी पुरष परगट होए, परतक्ख करूँ दीदार।
'मंगत' तेरे दरस सों, तन मन दीना वार।।9

करो आदेस प्रभ अन्तरयामी। नमस्कार करो पारगरामी।।
सरब निरन्तर सो परकासे। बारमबार कर तिस अरदासे।।
विगन हरे गुन को बरतावे। कीटी हस्ती को रस पहुँचावे।।
भवचर नभचर को प्रतिपाला। सबका ठाकर सो दीनदयाला।।
बार बार करयो आदेस। सकल स्वामी आपे जगदीश।।
अधक बडाई ना पारावार। साचा ठाकर सिमर मुरार।।
चन्दर सूरज जोती परकास। तारामण्डल आकास बिलास।।
दिवस रैन रुत पख मास। अचरज लीला धारी अबनास।।
थल के नीचे जल रचीना। जल के भीतर अगन रमीना।।
अगन माहीं वायू परगासे। वायू अन्दर आकास बिलासे।।
पाँच भूत की धारी रचना। आदेस करो नित पुरख अलपना।।
गिनी ना जाई प्रभता जगदीस। थलमण्डल में धारे बहु जन्त कीट।।
जाँ जाँ देखाँ ताँ पूर समाई। सरब का ठाकर सरब रमनाई।।
सकल भूत को चक्कर चढ़ावे। सकल जन्त को बहु रंग दिखलावे।।
निमख निमख में विचरे बिसमाद। नित अचम्भा पुरख आनाद।।

सबमें लाली तिसकी चमकाए। सबमें तेज तिसका दिखलाए।।
सबके अन्तर बाहर रखवारा। कर आदेस तिस चरन बलहारा।।
जड़ माया को परकाशक कीना। सरब अतीत आप रमीना।।
जिस देखा सो अचरज आपार। परम समरथ सरब दातार।।
जुग जुग अपना रंग दिखलावे। तीन गुनों में जगत भरमावे।।
अन्तरगत रमया इक रंग। करो आदेस पुरख सरभंग।।
सबको अन्तर राख परोए। एको सूत ज्यों माल समोए।।
सब रसों को करे रसवाह। सरब का ठाकर बेपरवाह।।

प्रभ अपना सिमरन करो, नित कीजो आदेस।
'मंगत' जग में सार है, सुन सतगुर संदेस।।10

शेष सहँस मुख महमा गाए। चतरमुख ब्रह्मा सेव कमाए।।
शेष शय्या पर विषन वराज। अबगत पुरख की लखे समाज।।
शिव सनकादक गौरी गनेश। सकल धियावें पुरख निरभेस।।
पीर पैग़म्बर कुतब ग़ौस रसूल। सबही सिमरें नित बुद्ध अनुकूल।।
अन्त ना पारावार सो आए। लख रसूल बैठ करें रज़ाए।।
लाखों गोरख लाखों शिव विरंच। पाए ना भेद रंचक रंच।।
अपनी लीला धारी बिसमाद। सरब निरन्तर आप आगाध।।
करो आदेस पुरख निरधारी। सेव बन्दगी चरन बलहारी।।
तिसका नाम सब संकट नासी। पततपावन सो आप अबनासी।।
दुरलभ भाग जो सिमरन पाए। सत परतीत ना गरभ में आए।।
अदभुत कौतक धारे निरंकार। नाना रंग परगट देखूँ संसार।।
जुग जुग आदी आप अनूप। करो आदेस नित आलख सरूप।।
अपनी शकत में आपे बलवाना। अपने आप में पसरे भगवाना।।
दूजा हुआ ना दृष्टी आए। आद जुगादी आप समाए।।
ऊँच नीच में आप समाना। राजा राना रंक नादाना।।
आपे ज्ञानी आपे मूढ़ा। आपे दाता सरब की धूड़ा।।

आपे पंडत आपे श्रोता। आपे सिद्ध आपे साधक होता।।
आपे चारखानी बिस्तारे। आपे चार बानी उच्चारे।।
आपे थल मण्डल को धारी। आपे जुगता आप आचारी।।
सरब जीवों में आपे आप। सरब जगत तिसका परताप।।
आपे दाना गहर गम्भीर। आपे धारे अनन्त सरीर।।
एको हो बहु रूप दिखाए। नाना पन्थ तिसका जस गाए।।
अपनी माया आप परगासे। वचित्तर लीला धारी अबनासे।।

ज्ञानी गुनी नित गाँवदे, पर पायो ना किसे अन्त।
'मंगत' दूजा ना कोए, सरब एक भगवन्त।।11

करूँ बन्दना पार मुरारी। नित किरपाल किरपाधारी।।
तूँ परमेश्वर नित आनन्दा। हरो विकार मन दुरगन्धा।।
तेरी दात अधक अपार। पवन पानी बसन्तर धार।।
सरब जीयाँ रिज़क़ रजाए। कुदरत तेरी अगम अगाहे।।
नित नित करूँ अरदास। परम पुरख तू ही अबनास।।
दीन ग़रीबी माँगू भीख। करुनाकर तूँ ठाकर अलेख।।
नित सलाहूँ तेरा नाम। नित ध्याऊँ तुद अमरत धाम।।
एको सिफ़त तेरी चित्त भाए। दूजा भाओ सभी विसराए।।
पिण्ड ब्रह्मण्ड सब तेरा खेल। तूँ क़ादिर सब कुदरत मेल।।
भाँत भाँत की रचना रचाई। एक भाओ सब माहीं समाई।।
खेल विनासे रह्यो आप सरूप। माया छाया तेरी शक्त अनूप।।
अपने भाने कीजो बख़शीश। दीनदयाल सरब का ईश।।
नित सरनाई तेरे दरबार। नाम पदारथ मागूँ सार।।
पलक ना विसरे तेरा परसंग। दीनदयाल रंगो ये रंग।।
सिद्ध बुद्ध ज्ञानी देव मुनीशा। करें अरदास तेरी जगदीशा।।
विषन वरंच आद महेशा। करें बन्दना नारद शेषा।।
तेरी महमा का नहिं पायो पार। अनमत जीया क्या करे विचार।।

पूरन दात से हो दयाल। दीजो सेव चरन रछपाल।।
सकल विकार हरयो चित नाथा। बारमबार करूँ अरदासा।।
तुद बिन जग में कोई ना थाओं। नित नेहथावाँ आऊँ जाऊँ।।
मेहर करो चित्त नाम बसाओ। अपनी महमा का भेद लखाओ।।
तेरे दरस की रहे पियास। मन तन माईं करो निवास।।
तूँ मात पिता तूँ ही संग साथी। तूँ ही आद अन्त में साखी।।
क्या वडियाई कह विध बखाना। अन्धमत राखे विचार अनजाना।।

दीनदयाल दया करो, चित्त चरन पावे विशवास।
'मंगत' कीजे वन्दना, तू परम पुरख अबनास।।12

सिमर गोबिन्द आठों याम। भाओ भगत में लियो बिसराम।।
करता हरता सरब का स्वामी। सदा आराध परम सुखधामी।।
बारमबार कर पद परनाम। सिमर दयाल पावें बिसराम।।
पततपावन करनाकर स्वामी। घट घट व्यापक अन्तरयामी।।
होवो दयाल सब दोख निवारो। भाओ भगत चित्त बसे विचारो।।
तुम रखयक चराचर गामी। बन्धन काटो तुम पार स्वामी।।
तुम बिन और नहीं भरवासा। पुरख अनादी घट करो परगासा।।
अनन भगत घट दीजो देवा। पलक ना विसरे तुमरी सच सेवा।।
जब जब भगतन पर आपदा आई। करनाकर स्वामी भए सहाई।।
बिपतकाल में दीजो धीरा। सत सील आए रमे सरीरा।।
चार पदारथ नौ निध पाए। तुमरी भगत मन माईं कमाए।।
तुमरा नाम सब ताप निवारे। दीनदयाल के चरन पधारे।।
निमख निमख फल माँगूँ स्वामी। अनन भगत में पाऊँ बिसरामी।।
जग जंजाल अधिक दु:खखानी। हाहाकार सब करें परानी।।
मद मान की अगनी अपार। जल जल पड़े सकल संसार।।
काल का भय करे चित्त छेद। हर भगत परापत जाए सब खेद।।
साचा नाम मन आवे परतीत। गुरमुख ज्ञान से पायो जीत।।

प्रान आधार पुरखोतम नारायन। सत भगत से भयो जीव परायन।।
जीवन जीया उद्दम ये धारे। मिल सतसंगत प्रभ नाम विचारे।।

करो अरदास समरथ की, जो सरब करे परगास।
भवजल से राखो प्रभू, 'मंगत' पूरन आस।।13

ग़फ़लत छोड़ उठ लेख विचार। बिन प्रभ भगत सब दु:ख सार।।
साध-जनाँ ने निरना कीयो। परम आनन्द केवल प्रभ थीयो।।
माया विकार नित भरमाई। खप खप मरे नहीं शान्त पाई।।
सत ठाकर की सुध नहिं जानी। धार गरब भरमें अज्ञानी।।
अचरज रचना जगत पसारी। देखके मोहे बड़े गुनकारी।।
बिना विचार नहिं परसे सुख सारा। इच्छया भरम नहिं मिटे अंधकारा।।
उठ रे गुनियाँ तूँ लेख विचार। अबगत रूप सिमरो करतार।।
बंध खुलासी प्रभ सिमरन से पाए। शास्त्र वेद गुनी भेद बताए।।
नित आनंद सरब सुखखानी। पारब्रह्म सिमर निरवानी।।
नित परिपूरन सरब गियाता। भज गोबिन्द सरब बिधाता।।
अबनाशी शकत सरब समराथा। भज परमेश्वर नाथन का नाथा।।
जुग जुग आदि सम रूप समाई। शबद सरूप चेतन सुखदाई।।
अगम निगम की जाननहारा। विज्ञान सरूप सिमर करतारा।।
नित अजनमा अकाल सरूप। सिमर दयाल शकत अनूप।।
सकल जगत को आप बिस्तारी। सरब नियारा रहे मुरारी।।
उस्तत कही ना कथनी आवे। जो जो सिमरे परम सुख पावे।।
सत परकाश सरब परकाशी। अनहद नाद पुरख अबनाशी।।
मन बानी से रहे नियारा। शून रूप आनन्द निरंकारा।।
सबका परगट तिससे होये। परम पिता भज प्रीत समोये।।

महमा सत सरूप की, रंचक कथी ना जाये।
'मंगत' जिस प्रभ पाया, तिस चरनी धूड़ रमाये।।14

तू करता करतार है, सब जग सरजनहार।
पल पल कीजूँ बन्दना, तूँ साखी पुरख अपार।।

बार बार करुँ बन्दना, तूँ दीनानाथ दयाल।
निहमानियाँ का मान तू, सरब काल रछपाल।।

अपनी कला को धार के, रचियो जगत पसार।
अनक भाँत उस्तत करूँ, तू दीनबन्धु दातार।।

सरब जगत का रखयक, नित ही करे प्रतिपाल।
निमख निमख सिमरन करो, गोबिन्द सरब किरपाल।।

चार वेद जस गाँवदे, गुनी मुनी जन अनेक।
सब जग तुमरा खेल है, नित राखूँ तुमरी टेक।।

अनमत मूढ़ा आया, प्रभ तोरे दर भीखार।
दीजो भगती दान प्रभ, नित मन करूँ पुकार।।

आठ पहर तुम प्रेम में, मनुआँ रहे लवलीन।
दीनदयाल दया करो, हरयो बुद्ध मलीन।।

शेष सहँस मुख गाँवदा, पल पल नाम अपार।
महमाँ तेरी क्या कथूँ, तूँ आपे सरब आधार।।

पाप कूप भसमत करो, दीजो सत विचार।
नित सिमरूँ तेरे नाम को, नित चरनी सुख धार।।

कलयुग घोर आ वरतया, सत धरम भयो नाश।
कूड़ कपट की सम्पता, सब घट कियो परगास।।
राखनहार आपार तूँ, नित ही तेरी आस।
'मंगत' नित सरनागती, हरयो भरम की प्यास।।15
तूँ सरब स्वामी आनन्द बिसरामी, सरब करें परगास।
निमस्कारं निमस्कारं, नित चरन कँवल अरदास।।

तूँ परमेश्वर तू जगदीश्वर, तू देवन का देव।
नित करूँ डंडौत प्रभ, चित्त चरन कँवल की सेव।।

बार बार करुँ बेनती, परम पिता के द्वार।
राख लें प्रभ आपने, आयाँ सरन तुम्हार।।

ना बुद्धी सत करम की, ना सत धरम विचार।
केवल प्रीती चरन की, दीजो पूरन सार।।

मन की हरो वखेपता, दीजो प्रेम परसाद।
पल पल हिरदे में रसे, केवल तुमरी याद।।

दीन ग़रीबी रसना की, माँगूँ निस दिन भीख।
तू दाता दातार हो, कीजो ये बख़शीश।।

भरम रूप संसार से, प्रभ जी करो उद्धार।
पततपावन तेरो नाम है, हरजन करें पुकार।।

धूड़ रमाऊँ सीस पर, सरब जियाँ कराँ सेव।
हिरदे जपूँ सतनाम को, सीख सुनूँ गुरुदेव।।

सत शरधा हिरदे बसे, पूरन हो विशवास।
केवल तेरी प्रीत में, राखाँ गिन गिन स्वास।।

बँध बँध सीस का कट जाये, पर प्रीती रहे चित माईं।
अनन भगत माँगाँ प्रभू, पल पल चरन धियाईं।।

रसना तेरे नाम की, रस जाये मोर शरीर।
'मंगत' पलक ना विसराँ, पद नारायन सुखसीर।।16

उस्तत तेरे नाम की, दिवस रैन चित्त भाये।
दीजो परम उद्धारता, गोबिन्द केशोराये।।

सकल पदारथ की दूषना, मन से होवे दूर।
चरन कँवल की प्रीत में, मन तन रहे मख़मूर।।

काल जाल सकला मिटे, परसाँ शबद अनूप।
प्रेम खुमारी नित चढ़े, जाये भरम का कूप।।

राग द्वेष मनसा जाये, मनुआँ हो इस्थीर।
घट घट देखूँ तुद रूप को, मिटे करम तक़सीर।।

मान मद सब नाश हो, खिमा करे परवेश।
दया धरम और धीरता, परसाँ सुख सन्देश।।

वैर बदी मन से मिटे, प्रेम पाऊँ परगास।
सिमरूँ निस दिन नाम को, धार पूरन विशवास।।

अन्तर का जाये पाट सब, परतक्ख करूँ दीदार।
नित ही तेरे रूप में, जीव रहे मस्तार।।

छल कपट को त्याग के, सब से राखाँ हेत।
समाँ विचारूँ अन्त का, तजूँ पाप की नीत।।

मोह माया के भरम से, जीवन होवे शान्त।
निर्मल दीजो ज्ञान प्रभ, मिट जायें सकल भरान्त।।

द्वैत भरम सब नास होये, समतत्त कराँ पछान।
निस दिन रसना नाम में, सुध बुद्ध हो गलतान।।

सम्पत माँगूँ सत धरम की, दात करो दातार।
अनमत 'मंगत' नित करे, प्रभ तुमरे दर पुकार।।17

तूँ परमेश्वर नित सुखदाता, दीजो चरन की सेव।
निमख निमख सिमरन कराँ, सत परतीती गुरुदेव।।

सूखे तरुवर को फल लावें, पाथर जन्त टिकायें।
सूखे सरोवर नीर बहावें, पिंगू गिरी चढ़ायें।।

बिन्द से तू पिण्ड को साजें, पाथर नीर तरायें।
गूँगा करे अकथ की कथना, तेरा अन्त पार नहिं पायें।।

बिना मूल के परगट कीनी, भव दुस्तर की बेला।
गिन गिन थके ना गिनती आवे, प्रभ अचरज तेरा खेला।।

सबके भीतर आप समाया, रहत सदा अछेदा।
सिद्ध तपीशर नित यश गावें, पायो किसे नहिं भेदा।।

आलख रूप निरंजन तेरा, जोगी जती नित ध्याये।
अपरम अपार तेरी प्रभ लीला, कथने में नहिं आये।।

पल में मूरख होये सयाना, रंक को राज बठाये।
पल में भूप होवे भिखारी, दर दर भीख मँगाये।।

सूखे फ़रश करें हरयावल, हरयाँ देवें सुखाये।
अनहोइयाँ नूँ तू करें, होइयाँ करें फ़नाये।।

तूँ जगदीश्वर सरब रमीना, अपरम अपार अथाये।
ज्यों ज्यों भावी त्यों चलावे, ठाकर बेपरवाहे।।

नित करो अरदास स्वामी, पल पल प्रीत कमाओ।
जैसी तिसकी आज्ञा, ऐसी मन रीझाओ।।

पारगरामी भज सुखदेवा, जो सकले ताप विनासे।
'मंगत' अधक परीत से, करो चरन कँवल अरदासे।।18

एक परमेश्वर मन सदा ध्याओ। सुफल कीरत जग में पाओ।।
प्रभ के दर का तूँ होवें भिखारी। सम्पत ज्ञान पावें सुखकारी।।
सत परमेश्वर की ओट पछानें। अगम निगम की रसना जानें।।
उतपत परलय के भेद को पायें। सत ठाकर जब प्रीत से ध्यायें।।
अपने आप में पायें गम्भीरी। आनन्द सरूप की मिली जागीरी।।
बिपत माहीं सुख सार पछानें। अखण्ड वडियाई साहब बखानें।।
औगन मिटे तब ही नर मीता। एक परमेश्वर आवे चीता।।
तूँ करतार तूँ सरब आधारी। अन्तर बाहर तूँ रखवारी।।
राख लियो प्रभ चरन के माईं। और द्वार की सूझत नाईं।।

कर किरपा मन पाप को हरयो। दीनदयाल तुद सरनी मैं पड़्यो।।
सुरत चले ना इक पल स्वामी। निश्चल होवे तुद चरन अनामी।।
करूँ परनाम तुद पार जगदीशा। सकल वखेप हरें सरब का ईशा।।
तुमरे प्रेम में मगन समाये। उट्ठत बैठत तुम कीरत गाये।।
एक भरोसा तेरे चरन का पाई। राख लें ये अन्धमत दुखदाई।।
पाप करम से नित नित राखो। दीनदयाल सरब का साखो।।
आद जुगादी तेरी महमाँ आपारी। सरन पड़े की रख लाज मुरारी।।
और ना माँगूँ तुद दरबारे। एक चरन प्रीत दीजो सुखकारे।।
करुनाकर तूँ सरब भण्डारी। नाम की दात करो दातारी।।
सरब जियाँ की कराँ नित सेवा। दीजो प्रेम देवन के देवा।।
सरब काल तुम चरन परीती। अनन भगत दीजो सुख रीती।।
आवन जावन मिटे गरभ का फेरा। नित समाऊँ तुद चरनी केरा।।
जीवतकाल में तुद सिमरन पाऊँ। अन्तकाल तुद रूप समाऊँ।।
काम क्रोध हरो विकारा। सील संतोख मोहे दीजो करतारा।।
सतनाम की रसना नित चित्त गाऊँ। दीजो ग़रीबी दान सुख थाऊँ।।

सरब जगत की धूड़ रमाऊँ, चित्त बसे नाम की प्रीत।
'मंगत' कीजे बेनती, सुफल करो प्रभ चीत।।19

जुग जुग आद जो रिह्या समाई। तिसका सिमरन अधक प्रभताई।।
तीन काल जो है रखवारी। संकटमोचन सुख वरतारी।।
सकल ज्ञान जो घट परगासी। कारन करता धर मन भरवासी।।
जिसका चानन घटपट में देखे। जिसकी शकत अनन्त अलेखे।।
भज करुनाकर किरपाधारी। दृढ़ विशवास मन लीजो धारी।।
सब बिपता को हरनेहारा। सकल बंधन से देवे छुटकारा।।
जनम के पहले जो साथ रहाई। अन्त समय जो होए सहाई।।
परम मित्तर भज सो सुखरासी। साची प्रीत चित चरन बिलासी।।
सब रसना का रस दिखलाई। सबसे न्यारा आप रहाई।।
आवागवन में जो नहिं आवे। जिसकी माया सब रंग दिखलावे।।

काल करम जाँ व्यापे नाईं। भज दीनदयाल परम सुख थाईं।।
साची टेक राखो तिस चरना। सतपुरषों का सुन ये निरना।।
सकल विखेपत पल नास हो जाई। दीनदयाल जब होये सहाई।।
बिपता से नित जीव को राखे। पततपावन कर गुनी अलापे।।
तपन माहीं पल ठाँड वरताये। भज अमरत रूप शबद सुखदाये।।
बिन विशवास ना साहब पायें। अंध भरवास में आवें जायें।।
साची नीती पल पल विचार। पावें टेक केवल करतार।।
मोह माया ये रैन अन्धेरी। पल पल बिपता पायें घनेरी।।
रख विशवास केवल प्रभ एक। मिट जाये सकला भरम विखेप।।
सत साधू का बोल पछान। शास्त्र सिमरत का सुनो निधान।।
माया झूट सत करतार। तिसके चरन में निश्चय नित धार।।
अपना करता हरता पहचान। सरजनहार ठाकर निरवान।।
तिस बिन दूजे नहिं नेहों राख। कर डण्डौत सत सेवा भाख।।
बारमबार मन माहीं पुकार। तूँ करता साजन करतार।।

सत साजन संसार में, एक परमेश्वर जान।
'मंगत' निश्चय राखके, पल पल सेव पछान।।20

करनेहार तूँ ठाकर मेरा। पल पल राखें चरनी केरा।।
तूँ दु:ख हरता मंगलकारी। तोरी महमा अपर अपारी।।
खलबुद्धी मैं अनमत मूढ़ा। कह बिध सिमराँ तुद नाम हज़ूरा।।
अधिक विकार भरे दुखदाई। तुद बिन मेरा नहिं कोई सहाई।।
बुद्धीहीन मन अती मलीना। तुम बिन रखयक नहिं कोई दरसीना।।
अत ही नीच औगन को धारी। तुद बिन मेरा नहिं कोई रखवारी।।
दुष्ट विकार चित्त धरे घनेर। आवागवन फिरावें फेर।।
कह बिध छूटाँ प्रभ दीनदयाला। ना कोई जतन ना ज्ञान विशाला।।
ना कोई मारग सोझी आवे। तुद बिन थाओं नहिं कोई दिखलावे।।
बारमबार ये किया विचारा। बन्ध छुड़ावे तुद नाम अपारा।।
बुद्धीहीन नहिं उस्तत पाऊँ। कह बिध प्रीत तोरे चरन कमाऊँ।।

शेष सहँसमुख जो नित गाई। पल पल विरंच मन ध्यान लगाई।।
शिव सनकादिक विषन विचारी। लोमस जुग जुग प्रीत निहारी।।
तेरी महमा का पाया नहिं पार। अनमत मूढ़ा क्या करे विचार।।
साची प्रीती प्रभ चरनी दीजो। साची कीरत प्रभ मन में सीजो।।
अपना तेज आपे परगासो। पल पल चरनी करूँ अरदासो।।
ना तप बल ना विद्या कोए। ना विचार चित्त घना लखोए।।
केवल किरपा तोरी विचाराँ। पल पल तेरा नाम निहाराँ।।
अपनी मेहर आपे वरताओ। मूड़े कीट को सूझ लखाओ।।
धुरू प्रहलाद गुनी बहु तारे। नामदेव रविदास उद्धारे।।
पीपा सैना की प्रीत बढ़ाई। कबीर दादू नानक तराई।।
कोटाँ कोट प्रभ किये उद्धार। गिनती लेख नहिं पाऊँ शुमार।।
सिद्ध रिखीशर जुग जुग गायें। पततपावन करके नित ध्यायें।।
सच्चिदानन्द तू नित किरपाला। मूरख जन्त का तूँ रखवाला।।

सरब जगत को छाडके, तुद दर धूड़ रमाऊँ।
'मंगत' दीनदयाल प्रभ, मत कित दर्शन पाऊँ।।21

आद जुगादी तूँ भरपूर। मेरा राखनहार हज़ूर।।
नित रखयक हो नित किरपाला। आनन्द सरूप तूँ सरब दयाला।।
पल पल तोरी सेव पछाना। सब कुछ बूझूँ तेरा फ़रमाना।।
दीजो शकत भगत चित आये। सिमरन तेरा मन रहे समाये।।
तोरा रूप पल पल लखावाँ। इक चित होके दर्शन पावाँ।।
अत वडयाई तेरी प्रभ मेरे। नित आनन्द नित बसे परेरे।।
ज्ञान विज्ञान तेरा परतापा। खिमा दया प्रभ तेरा जापा।।
औगन हरो सतगुन परगासो। मुकन्दसरूप तूँ अजर अबनासो।।
लिख लिख लेख गुनी मुनि हारे। तेरी कुदरत अपरम अपारे।।
जब भावी तब खेल रचाई। अपनी देखें सब प्रभताई।।
तेरा खेल जगत पसारा। बारमबार करूँ निमस्कारा।।
परले पार तूँ नित बिसरामी। घट घट जाने तूँ अंतरयामी।।

सब कुछ करके रहें नियारा। अदभुत साहब तेरा पसारा।।
महमा ना वरनी रंचक जाई। तूँ ठाकर सरब शकताई।।
बल बुद्धी अंतर परगासो। लेखा लिखाँ तेरा निरवासो।।
तूँ ही सत आद जुगादी। तोरा नहिं पावाँ भेद बिसमादी।।
अचल अडोल पुरखोत्तम देवा। अनन प्रीती दीजो चरनी सेवा।।
सत कर सिमराँ तेरा नाम अनामी। निज घर पावाँ प्रभ नित बिसरामी।।
एक भरोसा तेरे चरन रहाई। साची कीरत मन रहे समाई।।
पाप कूप से राखो नित स्वामी। करो बखशीश सत सेव निषकामी।।
तोरे दर की नित आस रहाये। तोरी दात मन सुख मनाये।।
घट का पाट सब दूर करीजो। सनमुख होके प्रभ दर्शन दीजो।।
जीव पियासा तेरे दर्शन ताईं। ताप बुझाओ तुम अपार गोसाईं।।
आलख आपार प्रभ तेरा परताप। निमख निमख ध्यावाँ तेरा जाप।।

दीनबन्धु करतार तूँ, अपनी प्रीत लखाओ।
'मंगत' प्रीती चरन की, पल पल हिये समाओ।।22

तूँ ठाकुर सब कारन करना। नित रखयक हूँ तेरी सरना।।
तूँ ही सबका पालनहारा। उतपत परलय खेल तुम्हारा।।
तू ही सबका नित आधार। सरब जन्त हैं रूप तुम्हार।।
तू ही सबका निर्मल धाम। आद अन्त से परे बिसराम।।
तू ही तू परमेश्वर मेरा। राख ले प्रभ चरनी केरा।।
तेरी ओट तेरा आधार। दीनदयाल तू सरजनहार।।
तू ही पूरन कला को धारी। निर-आधार पुरख मुरारी।।
तू ही अपने आप बलवन्त। पूरन शकत अपार भगवन्त।।
तू ही आनन्दकन्द सरूप। जुगा जुगन्तर रमें अनूप।।
तू ही आद जुगाद इक रंग। बिस्माद कौतक तेरा परसंग।।
तू ही अबगत अगोचर अनादी। सतसरूप आलख समवादी।।
तू ही एक अनेक को धारी। अदभुत रचना कीनी बिस्तारी।।
तू ही परले पार बिसरामी। अखण्ड सरूप शबद अनामी।।

तू ही अजर अमर निरवाना। अकथ सरूप तू ही भगवाना।।
तू ही बिशम्भर सकल जग धरता। आद जुगादी पूरन तू करता।।
तू ही सरब का धाम स्वामी। सकले खेल में तू बिसरामी।।
तू ही परकाश सरब परकाशी। नित आनन्द शबद सुखरासी।।
तू ही अन्तर बाहर समाया। आलख अभेद सरूप निरमाया।।
तू ही सबकी बनत बनावें। न्यारा होके खेल खिलावें।।
तू ही पूरन उस्तत योग। जो जो सिमरे भये अरोग।।
तू ही समरथ पूरन प्रभ देवा। कित बिध पावाँ तेरी सत सेवा।।
तू ही ठाकर नित किरपाधारी। सरब जीवों के संकट टारी।।
तू ही सबकी करें नियाये। करनी का फल देवें सज़ाये।।
तू ही सबकी करें सम्भाल। दीनानाथ तू दीनदयाल।।

तू ही सत आद जुगादी, तू ही सरब आधार।
'मंगत' कीजे बंदना, तुद चरनी बारमबार।।23

तू ही सरब का संकट नासी। पततपावन पुरख अबनासी।।
तू ही तू तेरी अरदास। चरन कँवल में करूँ निवास।।
तू ही बुद्धी बल दातारी। दीन दु:खी का तू उद्धारी।।
तू ही ऊँचे से ऊँचा देव। पल पल ध्यावाँ तेरी सेव।।
तू ही अज अनील अनाम। हस्ती तृन में तू बिसराम।।
तू ही सरब ज्ञान का दाना। अपरम अपार पुरख सुजाना।।
तू ही बिसमाद रचना को धारी। महमा तेरी नहिं जाये विचारी।।
गुपत परगट तेरा परताप। कोटाँ कोट करें गुनि जाप।।
तू ही सत तत्त अखण्ड। अरबाँ खरब धारे ब्रह्मण्ड।।
तू ही मूल सरब बिस्तारी। सरब निरन्तर तू ही पसारी।।
सकली रचना प्रभ तेरा पासार। रंचक महमा नहिं होये शुमार।।
तू ही अपनी गत जानत जानाई। सच्चदानन्द पुरख आपार अगाही।।
तू ही परमेश्वर आनन्द दातारी। जो जो सिमरे होए निसतारी।।
तू ही वेद ग्रन्थ का मूल। कारन रूप सूक्षम अस्थूल।।

तू ही तू तेरा सब खेल। अपरम अपार पुरख अनील।।
तू ही वियाप सरब के रंग। इत उत तेरा साहब परसंग।।
तू ही तू देखा सब थाईं। सतगुर मेल से भेद लखाईं।।
तू ही तू तुझको डण्डौत। पूरन पुरख तेरी नित ओट।।
तू ही तू मन तन समाओ। दुबधा दुर्मत का होवे अभाओ।।
तू ही शुद्ध सरूप निरदोख। जो जन सिमरे पावे तत्त मोख।।
तू ही परमानन्द सरब का देव। दीनदयाल दीजो सत सेव।।
तू ही आद अन्त रखवारा। नित परापत सरजनहारा।।
तू ही अनंत कला को धारी। कोट विरंच भये महेश पुजारी।।
तू ही बख़्शनहार दयाल। अनमत कूकर पर होयें किरपाल।।

सरब शकत समरथ तूँ, सत ठाकर निरवान।
'मंगत' माँगे रसना, सत प्रीती चरन ध्यान।।24

कोई ना थाओं बिन प्रभ तेरे। तेरी प्रीती सुखसार घनेरे।।
करो किरपा प्रभ अन्तरयामी। साची प्रीत पावाँ बिसरामी।।
पतत उद्धारी प्रभ तेरा सतनाम। नित नित गावाँ धर विरत निष्काम।।
निमख निमख तेरे चरन समाऊँ। अन्तर बाहर कीरत नित गाऊँ।।
औगन हरता सब बन्धन नासी। पारब्रह्म तत्त रूप अबनासी।।
अत वडयाई तेरी प्रभ मेरे। जो जन सिमरे तिस भाग घनेरे।।
जनम जनम की तपन करें दूर। पूरन पुरष सतनाम हज़ूर।।
जल थल पवन पावक आकासा। तेरी शकत सब माहीं निवासा।।
उदे अस्त अत चारे कुंट। सरब-व्यापक तूँ साहब अनंत।।
लोकालोक मंडल आकार। सरब परकाश तूँ सरजनहार।।
चारखानी सब माहीं रमीना। चेतन पुरष अछेद अछीना।।
जन्ताँ अन्दर जन्त समाई। सरब निरंतर हो लेख लखाई।।
रसना रस सरब को धारी। उपरस रूप शबद आपारी।।
घट घट की तू जाननहार। सरब जियाँ को देवें विचार।।
तेरी उस्तत का तू ही मानी। साचा साहब तूँ अतुल परमानी।।

रोम रोम में तेरा परगास। अखण्ड सरूप तूँ ही निरवास।।
साची सेवा दीजो प्रभ देव। सिमर सिमर पद पावाँ निरभेव।।
अनमत अन्ध अत अज्ञान। कह बिध ध्यावाँ शुद्ध रूप सुजान।।
औगन भरया मन नित भरमाई। दीनदयाल तेरी सरनाई।।
जुगत मुकत कोई ना जानी। केवल प्रीत तुद चरन पहचानी।।
आस भरोसा कछू नहिं मेरा। नित आधार राखूँ प्रभ तेरा।।
ज्ञान ध्यान कछू नहिं जाता। तेरी टेक नित पुरख बिधाता।।
रंचक गुन नहिं मन के माईं। केवल ओट तेरी पार गोसाईं।।
अत नीच नहिं सूझत कोई। दीनदयाल दर दीजो ढोई।।

तुम दातार सरब दातारी, मैं हूँ अन्ध भीखार।
'मंगत' माँगे प्रेम रस, चित्त चरन कँवल आधार।।25

मैं अत बिकारी नित हूँ देवा। किस भाँत पावाँ तेरे चरन की सेवा।।
नित निहथाँवाँ नित परदेसी। आवागवन नहिं मिटे संदेसी।।
अतीअत चंचल मन संग धारी। नहीं चित्त आवे तेरी प्रीत आपारी।।
अन्ध विशवास बुद्ध अज्ञानी। तेरी महमा नहिं करूँ पहचानी।।
विद्याहीन विचार से हीन। अन्धमत नित फिरे मलीन।।
ना कोई ओट सखा ना कोए। अंध गुबार चित्त घने समोये।।
बिनसनहारी माया संग डूबा। तुद परताप नहिं हिरदे सूझा।।
छाया प्रीत में नित गरसाया। साखी पुरष नहिं सिमरन चित्त आया।।
आवे जावे पल पल अंधियारा। दुष्ट विकार अंतरगत धारा।।
सूझ बूझ नहिं कोई चित्त आये। जनम अकारथ दियो गँवाये।।
दीन दुनी दोनों दी हार। समाँ गँवाया विच कूड़ विकार।।
झूटा निहों संग जगत लगाई। अंत की बारी सब छोड़ के जाई।।
अंतर बाहर नित भरम लपटाया। पाप विकार में नित भरमाया।।
ना सत कथा ना प्रेम विचारी। अपनी आप नित करी ख़वारी।।
भोग विकार में नित परबीना। नित आनन्द नहिं प्रभ को चीना।।
सोवन जागन भोग विकार। दुर्लभ जनम में भ्रम खाटी सार।।

जो कुछ कीया सोही दुखदाई। बिपतकाल में होये कौन सहाई।।
साचा धरम नहिं कियो विचार। पशू समान दियो जनम गुज़ार।।
जीवन आसा नित नित मानी। अंत समाँ नहिं कियो पहचानी।।
झूट देही संग अधिक पियार। देखत देख होवे ये छार।।
माया भरम ने अत भरमाया। सत विचार नहिं हिरदे आया।।
कूड़ी सम्पत अंत तियागी। चले निमाना ये जीव मंध भागी।।
जनमे मरे नित आवे जाये। अपनी करनी की मिले सज़ाये।।
बिन प्रभ तेरे नहिं बिपता नासे। दीनदयाल करूँ अरदासे।।

सब जग भरम सरूप है, जीव नहिं छूटन पाये।
'मंगत' नित प्रभ सरनागती, पल पल चरन धियाये।।26

बिन तेरे नहिं सूझे ठौर। आवे जावे चौरासी घोर।।
बिन तेरे नहिं और पछाता। जो हरे मन का संतापा।।
बिन तेरे नहिं कोई शकत विचारी। जो इस भ्रम से देवे निसतारी।।
बिन तेरे नहिं कोई समराथा। होयें दयाल जो पल पल नाथा।।
बिन तेरे नहिं कोई धाम सुखदाई। जाँ में काल नहिं फेर फराई।।
बिन तेरे सब ताप तपाये। आनन्दसरूप केवल प्रभ राये।।
बिन तेरे सब भरम के माहीं। सरब नियारा तूँ निर्मल साईं।।
बिन तेरे सब काल का खेल। केवल तू ही आनन्द सुख मेल।।
बिन तेरे सब ही दुःख पावें। काल चक्कर में आवें जावें।।
बिन तेरे नित ही मन मूढ़ा। पाप कुपथ में नित भरपूरा।।
बिन तेरे प्रभ कोई नहिं और। जो भव दुस्तर से लगावे ठौर।।
बिन तुद चरन नहिं शांत चित आए। पलक पलक किये कोट उपाए।।
बिन तेरे नहिं कोई सत मीत। जो पार लगावे ये दुस्तर भीत।।
बिन तेरे सब मिथ्याबाद। आसा तृषना भरम परमाद।।
बिन तेरे संकट अत धारी। पल पल रोये ये जीव अंधियारी।।
बिन तेरे प्रभ कौन छुड़ाए। अधिक कलेश जो चित्त में पाये।।
बिन तेरे प्रभ नहिं कोई आस। जनम मरन की जो काटे फाँस।।

बिन तेरे नहिं और दिखाई। जो इस जीव का भरम मिटाई।।
बिन तेरे नहिं और कोई मान। तेरी सरन हूँ सत भगवान।।
बिन तेरे नहिं कोई सुने पुकार। दीनानाथ तू ही दातार।।
सकल कलेश कीजो प्रभ दूर। साची भगत दीजो हज़ूर।।
बारमबार करूँ परनाम। निरमल प्रीती दीजो बिसराम।।
चरन कँवल को करूँ डंडौत। दीनदयाल तेरी है ओट।।
अपनी महमा की कीरत दीजो। सकल माया का विकार हरीजो।।

माँगूँ नित नित कीरती, प्रभ चरन कँवल आपार।
'मंगत' की हरयो तृखा, पल पल करूँ पुकार।।27

मागूँ नाम रतन सुखदाई। दीनदयाल नित हो सहाई।।
मूढ़मती की सुनो अरदास। सत सरूप में दियो निवास।।
तूँ करुनाकर मेरा स्वामी। नित सरनागत पुरख अनामी।।
कैसे करूँ तेरी वडयाई। जल थल भीतर सम वरताई।।
तेरी कुदरत आपार मुरारी। सरब जियाँ को सरजनहारी।।
अपना खेल आप पसारे। तूँ ठाकर नित जाऊँ बलिहारे।।
हस्ती कीट में पूर समाई। सर्वज्ञ शकत आपार अगाही।।
नित परनाम करूँ तुद चरना। दीनदयाल तेरी नित सरना।।
अनमत कूकर की रखया कीजो। साचा सिमरन प्रभ अपना दीजो।।
पलक पलक तेरी महमा गाऊँ। अधिक प्रीत से नाम धियाऊँ।।
तुमरी शकत की शोभा चित्त आये। तन मन अंदर तेरी प्रीत समाये।।
ऐसी किरपा करो प्रभ मेरे। आवागवन का बिनसत फेरे।।
ऐसी महमा दीजो प्रभ देवा। निमख ना विसरे तेरे चरन की सेवा।।
ऐसी दया करो नित दयाल। मन तृपते इक नाम सम्भाल।।
ऐसी किरपा कर पार मुरारी। मन मूढ़ा सत सेव विचारी।।
ऐसी गिनती प्रभ मोहे गिनाओ। कथ कथूँ तेरा नाम अगाहो।।
पूरन पुरख नित सरन तुम्हारी। अती भयंकर चित्त औगनहारी।।
अपनी दात से नित करो निहाल। रोम रोम में रमो गोपाल।।

सूझ बूझ नहिं आवे चीत। तूँ करतार परम जग मीत।।

अन्धमत को राखें प्रभू, देके चरन आधार।
’मंगत’ माँगे रसना, तेरे चरन कँवल आपार।।28

पूरन भाग प्रभ सरन पहचानी। आवागवन गई काल निशानी।।
केवल प्रीत प्रभ चरन विचारी। परम आनंद मिला निरधारी।।
ज्ञान ध्यान की सार धियाई। एक परमेश्वर के चरन समाई।।
योग तप सत साधन जानी। सरब आधार प्रभ एक पहचानी।।
धरम करम सब पूरन भयो। सत परतीत प्रभ सरनी गयो।।
उठ मन मूरख नित चितार। सत ठाकर की सरन पधार।।
सरब जतन पूरन फल देवें। नित सरनागत प्रभ चरन को सेवें।।
जिसने सकली खेल रचाई। तिस ठाकर की हो सरनाई।।
जिसने देह पिण्ड दियो पराना। भज परमेश्वर परम सुखथाना।।
मात गरभ में जो रखवारी। सिमर दयाल परम सुखकारी।।
बालपने कुच दूध पीवावे। नित रखयक को क्यों विसरावे।।
हाड नाड़ी का मन्दर उसारी। तूँ करतार नित जाऊँ बलहारी।।
अचरज रचना तूँ साहब रचनाई। देह देवल की किसे सार नहिं पाई।।
प्रान का पंखा कैसे झुलाया। पानी बिंद में कैसे रूप दिखाया।।
हाड से कैसे दन्त उपजाये। जीब्भा रसना कैसे लख पाए।।
इस मन्दर की रचना बिसमाद। कारन करता तूँ आलख अनाद।।
मूरख मन तेरी सरन विसारी। भरम माहीं जूनी बहु धारी।।
निरमल बुद्धी प्रभ करता विचार। जिसने साजा ये देह आकार।।
पूरन सतगुर की सीख पहचान। सिमर परमेश्वर सुखसार निधान।।

जिसने सब रचना रची, सिमर सो ही तत्त रूप।
‘मंगत’ नित रखया करे, प्रभ दीनदयाल अनूप।।29

निस्चल धाम केवल प्रभ आप। जो सिमरे पावे परताप।।
कर किरपा प्रभ अंतरयामी। मिटे विकार मिले बिसरामी।।

अपना ज्ञान सरूप लखाओ। इस मन का सब खेद मिटाओ।।
अपने धाम का दीजो विचार। पूरन पुरख तूँ सरजनहार।।
अपनी माया का भेद उठाओ। परतक्ख होके सत रूप दिखाओ।।
सचखण्ड में पाऊँ नित वास। गिन गिन राखूँ चरन में स्वास।।
अंतरमुख प्रभ दरस दिखाओ। करम जंजाल का होवे अभाओ।।
तेरी कीरत तन मन समाये। इत उत तेरी सोझी आये।।
सर्वज्ञ शकत का पाऊँ निधान। समता ज्ञान मिले आनन्द खान।।
करो ये दात प्रभ दीनदयाल। सिमरन तेरा चित्त करे निहाल।।
आस भरोसा केवल प्रभ तोरा। नित ही राखें प्रभ पार हज़ूरा।।
जीवत जीऊँ तेरे रूप के संग। अन्तर रेख मिटे दुर्मत रंग।।
पूरन किरपाल हो पार स्वामी। अपनी महमा दीजो सुखधामी।।
नित ध्याऊँ प्रभ तेरा नाम। दृढ़ निश्चय से पाऊँ बिसराम।।
तूँ परमेश्वर शकती भंडार। अपने जन का करो उद्धार।।
ना बुद्धी ना ज्ञान विवेक। दीन भाव से राखी टेक।।
कोट पतत प्रभ कीये उद्धार। सरनागत पर होवें दातार।।
बंध खुलासी कीजो प्रभ देव। अबगत रूप की पाऊँ सेव।।
तेरे सिमरन का रहे आधार। करो बख़शीश प्रभ सरजनहार।।

अनेक जनम का भरमता, प्रभ आयो तेरे द्वार।
'मंगत' की बिपता हरो, तूँ पूरन किरपाधार।।30

आलख आपार तेरा अस्थाना। विरले गुरमुख करी पहचाना।।
जिस पर होवें तूँ किरपाल। सो जन पाए सत रूप दयाल।।
गुनी मुनी जुग जुग धियाएँ। तेरी महमा का भेद नहिं पायें।।
सरब में पसरियो सरब से न्यार। अचरज लीला धार करतार।।
मन मूरख को दीजो विशवास। तेरे सिमरन की रहे चित्त प्यास।।
संसा भरम जाय अन्धकार। साची भगत का मिले विचार।।
प्रेम प्रीत नित चरन रहाये। पलक ना विसरे सतनाम सुखदाये।।
सब जग बिख की धार पहचानी। परमानन्द तूँ इक निरवानी।।

चंचल मन नहिं पाय विशवास। आवे जावे विच भरम की फाँस।।
होयें दयाल तब संकट जाये। अंतर में अंतरगत पाए।।
साचा साहब किस दर को जाऊँ। बिना तेरे कोई ना मेरा थाऊँ।।
निहथावाँ को देवें आधार। करूँ बंदना बारमबार।।
तेरी महमा किस मुख से गाऊँ। तेरा ध्यान किस जुगत कमाऊँ।।
तेरी किरपा प्रभ करे निहाल। अपने भाने होवें किरपाल।।
त्याग वैराग नहिं रंचक विचार। सूझ बूझ नहिं चार आचार।।
माँगनवाला नहिं मुखड़ा मोर। अपनी किरपा कर पुरख हज़ूर।।
आद जुगादी तूँ पतत उद्धारी। माँगूँ नाम रतन सुखकारी।।
तुमसे बड़ा नहिं देखन आये। खोजत खोजत बहु जनम गँवाये।।
अबकी बार प्रभ करो निहाल। दीजो नाम प्रभ दीनदयाल।।

अबगत रसना नाम की, मन तन जाये समाये।
'मंगत' की अरदास है, प्रभ जी होओ सहाये।।31

नित गाऊँ प्रभ तेरा नाम। नित ध्याऊँ तेरा अबगत धाम।।
नित माँगूँ तेरी भगत अपार। अनन प्रीत रहे चरन पियार।।
नित माँगूँ तेरी अपार वडयाई। सिमर सिमर तेरे चरन समाई।।
नित माँगूँ तेरा सत परसंग। नित विचरूँ तेरे प्रेम के रंग।।
नित माँगूँ ग़रीबी भेख। भाव भगत का पाऊँ लेख।।
नित माँगूँ सब जग की सेवा। होवो दयाल देवन के देवा।।
नित माँगूँ तेरा निर्मल देस। सत परतीत करूँ परवेश।।
नित माँगूँ सत ज्ञान वैराग। निर्मल चरन का मिले अनुराग।।
नित माँगूँ मन निर्मल रंग। इक चित्त ध्यान रमूँ तेरे संग।।
नित माँगूँ परमारथ सार। स्वारथ बुद्ध जाये हंकार।।
नित माँगूँ सत शरधा देव। निमख निमख में परसूँ सेव।।
नित माँगूँ मैं पर का हेत। वैर विकार का नहिं पाऊँ लेप।।
नित माँगूँ समता तत्त ज्ञान। सरब जियाँ में करूँ तेरी पहचान।।
नित माँगूँ पुरषारथ एक। पलक पलक कर लिखूँ सत लेख।।

नित माँगूँ सत साधू संग। दिवस रैन तेरा सुनूँ परसंग।।
नित माँगूँ सत जुगत आपार। सतगुर मेल से होवे उद्धार।।
नित माँगूँ निषकाम परीत। निर्मल ज्ञान के गाऊँ गीत।।
नित माँगूँ तेरा दर्शन आपार। अबगत जोत शबद निरंकार।।
नित माँगूँ सत सेवा लेख। मान गुमान का मिटे भुलेख।।

मैं नित माँगनहार हूँ, तू नित हो दातार।
'मंगत' माँगे भिखया, सत शरधा चरन आपार।।32

तूँ साचा साहब नित राखनहार। करूँ बंदना प्रभ बारमबार।।
अपनी किरपा नित करो स्वामी। भगती दान दीजो पारगरामी।।
नित ही गावाँ परम गुन तेरे। तुद सरनी पाऊँ सुख घनेरे।।
चंचल मन को दीजो विशवास। मोह माया की हरो पियास।।
तू पूरखोत्तम नित ही दातार। दीजो दान ग़रीबी सार।।
एक नाम की प्रीत चित्त आये। महमा तेरी मन माहीं समाये।।
हरो विकार मन औगनकारी। तूँ परमेश्वर सरब दातारी।।
अखण्ड अनादी प्रभ रूप तुम्हार। सरब स्वामी तूँ पुरख मुरार।।
अपनी महमा आप प्रभ जानी। दूजा कोई ना कर सके बखानी।।
अतुल शकत अत ही परकास। सरब जीवों में करे निवास।।
सबमें पसरें तू एक ही रंग। हस्ती कीटी आद भुजंग।।
तेरा खेल अबगत आपार। सरब सरूप तेरा निरंकार।।
साची प्रीत दीजो मोहे देव। पलक ना विसरे तेरी सत सेव।।
पूरन पुरख तूँ घाट ना पायें। अपने जन को आधार लखायें।।
तुद भरवास केवल चित्त रहाये। दूजा भरम माया दु:ख जाये।।
तेरा सिमरन करूँ इक रंग। भरम विकार होवे चित्त भंग।।
साची सेव मन आये समाये। कर किरपा प्रभ केशवराये।।
धूड़ लखाऊँ तेरे जन चरना। दीजो दान ग़रीबी सरना।।
करूँ अरदास प्रभ तेरे द्वार। साची भगत दीजो सत सार।।

खिमा ग़रीबी बन्दगी, जो चित्त आये समाये।
'मंगत' माया जाल से, तब जन निस्तर पाये।।33

दुबधा धारी ये मन दु:खदाई। दुबधा नासे प्रभ कीरत गाई।।
भाओ प्रीती पाई करतार। पल पल सिमरें सत सरजनहार।।
साजन सिमरे मन मंगल पाई। बिन भगवन्त नित आवे जाई।।
तूँ ठाकर सरब समराथा। अतुल शकत नाथन के नाथा।।
तूँ परमेश्वर सरब परकासी। कीरत गाऊँ सब बन्धन नासी।।
तूँ ही तूँ दाता सुख सार। माँगूँ निरमल शबद विचार।।
तू करता मेरा रखवारी। नित ही नित जाऊँ बलहारी।।
अत प्रभता तेरी प्रभ जानी। तीन लोक में तूँ परवानी।।
अत परकाश तेरा परकाशी। रवी चन्दर नित चरन बिलासी।।
अत आनन्द तेरा सतरूप। बिषन विरंच धरें ध्यान सरूप।।
तूँ किरपाल जब किरपा कीनी। मूढ़मती की दुबधा छीनी।।
माँगूँ नित ये ही सार। साची कीरत दीजो करतार।।
मंगल होये मन शान्त समाई। घट घट देखूँ तेरी प्रभताई।।
पूरन सेव कराँ दिन राती। निश्चल ध्यान धरूँ परभाती।।
परगट चरन की सेव कमाऊँ। दीनदयाल दीजो सत थाऊँ।।
एह मन चंचल अत ही घनेरा। पूरन किरपा से हरो बखेड़ा।।
साची प्रीत से सरनी आया। लज्या राखें तूँ पूरन प्रभराया।।
इस मन को दीजो विशवासा। साची प्रीत करे चरनी वासा।।
बारमबार माँगूँ ये भीख। किरपासिन्ध दीजो ये दीख।।

प्रभ के चरन पुकारयो, सो वड है दातार।
'मंगत' माँगे नाम रस, प्रभ पूरन किरपाधार।।34

एक साहब का रख विशवासा। पूरन होवे जग में आसा।।
साची कीरत नित नित भाख। पार पुरख की रसना चाख।।

परले पार सो आप समाई। ऊँच से ऊँची साहब वडयाई।।
नित ही तिसकी सेव कमाओ। दुर्मत जाल से मुक्ता पाओ।।
प्रभ जी दाता परम दातारी। दीन दुखी का संकट टारी।।
सदा दयाल सदा किरपाल। जो जो सिमरे होये निहाल।।
नित परकाशे पिंड आकार। साखी पुरष सो सरजनहार।।
नित प्रतिपाल करे सब जीयाँ। पूरन पुरष ठाकर सुख थीयाँ।।
नित ही तिसकी करो अरदास। मोह भरम काटे जम फाँस।।
नित ही तिसकी टहल कमाओ। पल पल आज्ञा मन माहीं धियाओ।।
सो करतार सरब परकाशी। पूरन चित्त नित चरन उपासी।।
अन्तर आप बाहर भी सोई। सर्वज्ञ रूप सरब समोई।।
जल थल पवन पावक आकासा। सबको कीजे साहब परकासा।।
सब कुछ करके रहे नियारा। सत ठाकर का अजब पसारा।।
गुनी मुनी तपीजन हारे। तेरी महमा का पायो ना पारे।।
वाह वाह खेल ये अजब रचाई। आपे ठाकर आपे वरताई।।
तेरी तुझको होवे डण्डौत। पूरन पुरख तेरी नित ओट।।
साची प्रीत दीजो सत सेव। पूरन पुरख तूँ देवन देव।।
सब परताप अपना दिखलाओ। बिछड़े जन को चरन मिलाओ।।

पूरन किरपाधार तूँ, साहब दीनदयाल।
'मंगत' की बिपता हरो, पल में करो निहाल।।35

तूँ ठाकर सरब सुखरासी। नाद सरूप तूँ ही अबनासी।।
घट घट व्यापक अन्तरयामी। पूरन पूर तूँ ही बिसरामी।।
जगत है खेत तू रूप किसान। लख चौरासी सब जन्त उपजान।।
आप रखया करे प्रतिपाल। सरब स्वामी तूँ आप दयाल।।
अदभुत जंतर माया का धारी। जाननहार तूँ ही दातारी।।
माँगूँ नाम चरन की सेवा। होवो दयाल देवन के देवा।।
तूँ अबनाशी चराचर पूर। समरथ पुरष तूँ आप हज़ूर।।
अनमत जीव की देखें किरया। बख़्शश देवें जो सरनी पड़या।।

तेरी महमा तूँ जाने आप। अपरम अपार तेरा परताप।।
तूँ सत ठाकर किरपाधारी। मूरख जन का संकट टारी।।
पूरन पुरख परमेश्वर मेरे। नित सरनागत हूँ चरनी तेरे।।
परम वडयाई अपनी प्रभ दीजो। भाओ भगत से मन को सीजो।।
तेरी ओट तेरा आधार। तूँ ही तूँ सरब दातार।।
अन्तर सिमरूँ बाहर ध्याऊँ। पूरन प्रीत जस तेरा गाऊँ।।
अन्धकार विनास चानन घर कीजो। मूढ़मती को रसना सत दीजो।।
अनखुट भण्डार का तूँ भण्डारी। दीजो दान ग़रीबी सारी।।
निमख निमख तेरी कीरत गाँवाँ। तन मन वार तेरे चरन धियावाँ।।
तूँ किरपासिन्ध होवें किरपाल। परगट होके करे निहाल।।
ठाकर साचा नित तोहे पुकारूँ। जल थल अन्दर तोहे इक निहारूँ।।

एको प्रीती चरन की, जिस जन अन्तर ध्याई।
'मंगत' सो निस्तर भये, नाद पुरख घर पाई।।36

तूँ ही दाता सरब रखवारी। जगत खेल ये रची फुलवाड़ी।।
आपे सबकी बनत बनावें। आपे सकला खेल खिलावें।।
गिना ना जाये तेरी महमा का अक्षर। सरब भरपूर तूँ सरब का ठाकर।।
अनमत जीया तुद दर आया। राख लें साहब सुखराया।।
भगती दान माँगूँ नित नीत। सुकृत कीजो ये मूढ़ा चीत।।
तुध बिन दूजा नहीं चित्त आवे। अनन प्रीत मन माहीं समावे।।
पलक पलक जस तेरा गाऊँ। केवल चरन आधार लखाऊँ।।
आठ पहर सिमरूँ इक रंग। अधिक प्रेम पाऊँ सुख संग।।
कर किरपा पूरन प्रभ देवा। मूढ़मती करे निरमल सेवा।।
दीन ग़रीबी मन रहे समाई। सरब जीवों में तूँ इक दरसाई।।
ये ही भीख दीजो प्रभ पूरे। छिन छिन रहे चित्त चरन हज़ूरे।।
निरमल नाम का गाऊँ गीत। सत ठाकर दीजो परतीत।।
तेरा खेल तूँ ही नित खेलें। बिछड़े जन को प्रभ आपे मेलें।।
पूरन शकत दीजो इस चीत। निस दिन गावे तेरा प्रभ गीत।।

तूँ ही तू जग जीवन देखा। उतपत परलय सब तेरा लेखा।।
मन की भरमन करो प्रभ दूर। निस दिन गाऊँ तेरा नाम हज़ूर।।
नाम तेरे की रहे चित्त भूख। मोह विकार हरो सब दूख।।
तेरी महमा मन तन समाये। रोम रोम तेरा जस गाये।।
तेरा रूप बसे चित्त माहीं। कर किरपा तूँ पार गोसाईं।।

सरब शक्त दातार तूँ, दाता दीनदयाल।
'मंगत' माँगे नाम रस, प्रभ जी हो किरपाल।।37

तूँ ठाकर मैं तुमरा जीया। नित नित तेरे चरन रमीया।।
भाओ भगत मोहे दीजो स्वामी। हरो विकार प्रभ अन्तरयामी।।
तूँ भयो दाता हम भयो भिखारी। माँगूँ भीख सत सेव निर्धारी।।
तुच्छ बुद्धी को निर्मल कीजो। अपरम ज्ञान प्रभ अपना दीजो।।
सेव सेव चित्त करूँ निहाल। इक भरोसा रहे चित्त चरन दयाल।।
नित नित माँगूँ पदारथ नाम। अन्तरगत नित पाऊँ बिसराम।।
भया दीवाना तेरे प्रेम के रंग। दीनदयाल रहो अंग संग।।
ना कोई थाओं ना रास है कोई। निहथाँवाँ तेरे दर खलोई।।
बख़्श देवें तूँ सतगुर मेरे। जनम जनम के घने बखेड़े।।
किसको कहूँ करूँ पुकार। तुद बिन मेरा नहिं कोई रखवार।।
साची टेक माँगाँ नित हज़ूर। तूँ समरथ ठाकर भरपूर।।
मन की हिकमत सकल विनासे। दीन ग़रीबी तेरे चरन उपासे।।
आज्ञा तेरी मन तन समाये। बख़्शनहार तूँ ही प्रभराये।।
मेहर करो प्रभ कीजो दाया। चरन कँवल रहे हिरदे समाया।।
मिथ्याकार सब वासना जाये। रुच रुच जीया तेरे चरन समाये।।
बन्धन काट जन करो निहाल। पततपावन तू नित किरपाल।।
लाख चौरासी जन्त प्रगटाये। सरब प्रतिपाल बिशम्भर राये।।
करें अरदास देव मुनीशा। अपरम कौतक तेरा जगदीशा।।
अपनी चरनी मेल मिलाओ। टूटा निहों प्रभ तोड़ निभाओ।।

तेरे चरन प्रीती मन रसे, मिट जायें संशे सूल।
'मंगत' सुरती मगन होये, इक पलक ना पावे भूल।।38

पलक पलक प्रभ चरन चितार। मोह माया की उतरे खार।।
कारन करता सो ही जगदीशा। सिमरन कीजो सब मिटे कलेशा।।
पूरन दाता सो दातारी। सरनागत की तपन निवारी।।
जो तूँ अपना जीवन सुख चाहे। सत ठाकर की सरनी जाए।।
जाँ पर संकट आयो मीत। करे उद्धार प्रभ परम सुखरीत।।
अपने जन की रखया करे। दु:ख रोग सन्ताप सब हरे।।
ध्रुव प्रहलाद की बिपता हरी। अनंक जियाँ के संकट टरी।।
सत प्रीती जिस प्रभ नाम ध्याया। खेम कुशल आनन्द घर पाया।।
जगत पदारथ सब दुखदाई। देखन में जो सुख रूप दिखाई।।
मन नहिं तृपते भोगे बहु भोग। तृष्ना लागा अधक चित्त रोग।।
सत परमेश्वर की जिस ओट विचारी। सो जन हरे वखेपत सारी।।
प्रभ दाता प्रभ सरब समरथ्थ। प्रभ की प्रीत सब हरे कुपथ्थ।।
निरमल शोभा अन्तर विचार। सत दाते का हो भीखार।।
निरमल जीवन जग में पाएँ। जनम जनम के ताप मिटाएँ।।
साची सिखया संतन फ़रमाई। सतनाम सिमर परम सुखदाई।।
निरमल मनुआँ तब ही नर होए। दृढ़ विशवास प्रभ नाम परोए।।
शान्त पावे तब औगुनकारी। जो चित्त आवे सत सेव आपारी।।
महमा गाओ रसना नित पीयो। प्रभ के नाम में नित ही जीयो।।
सो ही दयाल सब औगन हरी। निरमल चित्त जो सरनी पड़ी।।

प्रभ दाता दातार है, तू नित हो भीखार।
'मंगत' भिखया नाम की, जीव का करे उद्धार।।39

मन बाँछे प्रभ कीरत तेरी। दात करो ये वस्त घनेरी।।
तेरी ओट रहे तेरा आधार। महमा तेरी चित्त आवे विचार।।
नाम तेरे की नित भूख रहाये। दरस तेरे में चित्त ललचाये।।
ध्यान तेरे में रहूँ लवलीन। सत कीरत करूँ अन्तर चीन।।

जब उचराँ तब तेरा नाओं। सत परसंग तेरा चित्त लाओं।।
तेरी महमा का सुनूँ विवेक। जल थल परसूँ तेरी शोभा एक।।
सब जीवों में तोहे पछानूँ। सेव करूँ हिरदे सुख मानूँ।।
सकली किरया देखूँ तेरे आधार। चराचर में सत तूँ भरतार।।
जुग जुग जाये पलक के रंग। आरूढ़ ध्यान माँगूँ सतसंग।।
मोह माया पर विजय लखाऊँ। घट घट तेरा दरशन पाऊँ।।
मन सलाहे तेरी वडयाई। दात करो प्रभ पार गियाई।।
अकथ कथा चित्त रहे समाई। सुरत निरत तेरी प्रीत कमाई।।
बाहरमुखता भरम विनासे। अन्तरमुख हो करूँ बिलासे।।
अनखुट ज्ञान अनुभव विचारूँ। निर्मल प्रीत शोभा चित्त धारूँ।।
जीवत में संग वास कराऊँ। अन्त समय तुध रूप समाऊँ।।
ऐसी दात करो दातार। माँगनहार खड़ा दरबार।।
पूरन सेवा सबने पाई। तुध दरबार जो माँगन आई।।
अबकी बारी तोड़ निभाओ। करूँ अरदास सुनो प्रभराओ।।
दया करो प्रभ अत किरपालू। साची भगती तेरे चरन दयालू।।

माँगूँ भगती दीखया, तुध दर भया भिखारी।
'मंगत' तेरी दात से, नित जाऊँ बलहारी।।40

पूरन पुरख तूँ ही अबनासी। पल पल मन में करूँ उपासी।।
अपनी दात करो दातार। ये मन सिमरे तेरा नाम अपार।।
तूँ ही तूँ सब ताप मिटावें। सत भगवन्त सतनाम लखावें।।
जग जीवन में सार लखाऊँ। सुकृत काज जपूँ तेरा नाऊँ।।
अखण्ड परीती चरन चित्त ध्यान। महमा तेरी नित करूँ बखान।।
नित बलहार जाऊँ तेरे रंग। नित नित रमूँ तेरे प्रभ संग।।
तूँ परमेश्वर किरपाधारी। मनमुख जीव की हरो ख़्वारी।।
बन्धन काट माया का जाल। परम शकत पाऊँ नाम कमाल।।
तेरी बन्दना मन चित्त में आये। दात करो प्रभ केशोराये।।
साकत जन की कर खबरगुज़ारी। डूबा जाये विच भरम अन्धकारी।।

हरो विकार इस मूरख जीया। पततपावन तूँ पुरख कन्हैया।।
तन मन अरपूँ तेरे सत चरना। दीनदयाल हूँ तेरी सरना।।
मूढ़मती के बन्धन काट। तुध दर माईं कछु नहिं घाट।।
अनन परीती दीजो सत सेवा। पल पल सिमरूँ नाम सुखदेवा।।
आप त्याग तेरी कीरत गाऊँ। सरब माहीं तेरी जोत लखाऊँ।।
आप तियाग जपूँ सतनाम। साची सेव पाऊँ निषकाम।।
आप तियाग करूँ अरदास। दीनदयाल काटो भ्रम फाँस।।
आपामत दुरमत ये जाये। निमख निमख तेरे चरन समाये।।
पूरन किरपा औगन सब हरो। सुकृत नाम हिरदे में धरो।।

नाम दीपक परगासयो, प्रभ जी अन्तर माहीं।
'मंगत' दुर्मत त्याग के, नित तेरे चरन समाईं।।41

आदी देव तूँ ही समराथा। पूरन पुरख नाथन के नाथा।।
नित करूँ अरदास स्वामी। बिपत हरो प्रभ पारगरामी।।
निस्चल कीजो ये चंचल जीया। पूरन पुरख तूँ सरब रमीया।।
तेरी कीरत पल पल धारूँ। नित भिखारी प्रभ तोहे पुकारूँ।।
दर कूकर की रज दीजो स्वामी। भगतवत्सल तूँ पारगरामी।।
अनेक जियाँ के संकट टारे। बिपत माहीं केते निसतारे।।
मूढ़-जनाँ को सुकरत कीना। साची सेव चरन की दीना।।
तेरी दात का नहीं शुमार। पूरन होये जो आये द्वार।।
अनमत तेरी सरनी आया। राख लें प्रभ पूरन राया।।
तेरे दर की रजनी अपारी। औगन भरया मैं नित भिखारी।।
प्रभ जी होवो नित दयाल। औगनहार को करो निहाल।।
सत विशवास पाऊँ प्रभ देवा। अटल धियान करूँ नित सेवा।।
तेरे प्रेम में मगन समाऊँ। दुस्तर जाल ना चित्त लख पाऊँ।।
तेरे चरन की रहे परीती। मन ना बाँछे करम पलीती।।
तेरे प्रेम की चढ़े खुमारी। भूक प्यास सब दोख निवारी।।
तेरे प्रेम में जाये दिन रैना। निर्मल प्रीत पाऊँ चित्त चैना।।

सकली कलपना मन की नासे। अधिक प्रेम तेरा परगासे।।
खावन पीवन सकल ब्यौहार। चरन कँवल चित्त रहे विचार।।
मीन नीर ज्यों प्रीत कमाई। एह बिध मन तेरे चरन समाई।।

अनन भगती प्रभ चरन की, मन तन माईं समाये।
'मंगत' दुबधा सब मिटे, जन पूरन रूप हो जाये।।42

तूँ ठाकर सरब सुखरासी। दीनदयाल काटो भव फाँसी।।
नमों नमों तोरे चरन अपारी। पूरन पुरख तूँ किरपाधारी।।
सत सील संतोख मोहे दीजो। निर्मल कीरत प्रभ चरन की सीजो।।
सतसंगत सत-सेव विचारूँ। दीनदयाल तेरे चरन पधारूँ।।
आनन्दकन्द मूरत बसे चित माहीं। एक पलक चित्त विसरे नाहीं।।
स्वारथ बुद्ध हरो बिख सार। परका हेत चित्त करूँ विचार।।
बाहरमुख की भरमन नासो। अन्तरगत चित्त माहीं परगासो।।
सेव सेव नित प्रीत बढ़ाऊँ। तन मन वार के तोहे मनाऊँ।।
सच थाओं तेरा निश्चय में आवे। साची कीरत तेरी चित्त पावे।।
तेरी आज्ञा चित्त प्रीत कमाए। निरमल ज्ञान दीजो प्रभराए।।
अन्तर परगट देखूँ तोहे। तूँ परतख देवें सुख मोहे।।
हम तुम बीच भेद ना रहाई। नीर तुरंग ज्यों नीर समाई।।
कीट रूप ज्यों भृंग पधारी। एह बिध प्रीत चरन चितारी।।
सब ही तेरा खेल मैं देखाँ। अत परताप तेरा मैं लेखाँ।।
करो बख़शीश देवन के देवा। अनन परीत पाऊँ चित्त सेवा।।
तूँ परम दयाल जुग जुग सहाई। अपने जन की पैज बढ़ाई।।
तुद सरनागत जो जन आई। मनबाँछत सोही फल पाई।।
पूर मनोरथ विगन निवारी। तूँ ठाकर नित किरपाधारी।।
अपने जन की करी वडयाई। भरम निवार निज चरन मिलाई।।

तुद तुल दाता ना कोये, जो मन की बिपत निवार।
'मंगत' तुम सरनागती, पाई परम सुख सार।।43

दीनानाथ सरन तेरी आयो। दीनदयाल सुख सार लखायो।।
तेरे दर्शन की मैं अधिक पियासी। हरो विखाद करूँ चरन निवासी।।
तेरी महमा का तूँ ही स्वामी। भगत वत्सल तूँ पारगरामी।।
रिखी रिखीशर नबी अवतार। कोटाँ कोट करें पुकार।।
साचा आप सच तेरा दरबार। तेरी दात तूँ जाऊँ बलहार।।
सन्मुख होके प्रभ दरस दिखाओ। दुरमत भेद भरम उड़ाओ।।
पततपावन तूँ नाम धराई। अपने नाम की राख वडयाई।।
अनमत जीव पर हो दयाल। पूरन पुरख तूँ सरब रछपाल।।
रंचक गुन अन्तर में नाहीं। क्यों कर रीझाऊँ तोहे पार गुसाईं।।
निहमानयाँ का मान तू राखें। सरन पड़े की बेनती भाखें।।
सच दरगाह ऊँची सरकार। करूँ अरदास तेरे दरबार।।
भरमत जीव की भरमन टारो। जनम मरन का ताप निवारो।।
अपने धाम में दीजो बिसरामी। भगत कमाऊँ निर्मल निषकामी।।
पलक पलक में करूँ पुकार। प्रभ दाते तुम करो दातार।।
और कोई ना थाओं मुकामा। खोजत खोज फिरा निहथामा।।
पल पल करूँ प्रभ जी अरदास। सरनागत की हरो पियास।।
साची कीरत दीजो सुखदाई। जुग जुग महमा रहे चित्त समाई।।
पूरन भाग मेरे हैं जागे। साचे साहब के चरनी लागे।।
करी अरदास चित्त प्रीत लगाए। विगन विनास घर मंगल पाए।।

पूरन प्रभ का मेल भयो, मिट गये सब संताप।
'मंगत' रसना नाम की, पल पल कीनी जाप।।44

मन मेरे की दुबधा काट। दीनदयाल पुरख सुखदात।।
ज्ञान ध्यान कछू नहिं पाया। जप तप योग नहिं हिरदे आया।।
दान पुन्न ना तीरथ नहाई। ना विद्या ना कीरत गाई।।
ना कोई जतन यथारथ कीना। ना कुछ सूझ बूझ को लीना।।
जाप ताप नहिं किरया जानी। तुद परताप नहिं कियो पछानी।।
ना सत सिखया हिरदे पाई। ना रसना तेरी पल गाई।।

ना परीत ना सेवा जानी। काल करम नहिं कियो पछानी।।
अपना जनम मरन नहिं जाता। अर्थ यथारथ नहीं पछाता।।
दीन ग़रीबी नहिं हिरदे आई। मान गुमान में औसर जाई।।
एक पलक नहिं कियो विचारा। कौन मेरा सत सरजनहारा।।
कह कारन इस जग में आया। अन्तकाल किस थाओं समाया।।
पशू समान सब औध गँवाई। अब होवत क्या मन पछताई।।
रंचक गुन नहिं हिरदे पायो। सत ठाकर कैसे हरखायो।।
दीनदयाल आपे किरपाल। अनमत कूकर को करे निहाल।।
अपनी किरपा करे किरपालू। अपनी दात प्रभ करे दयालू।।
तब कुछ जीवन काज हो जाई। प्रभ दाते की जाऊँ सरनाई।।
अपरम अपार तूँ सरब स्वामी। राख लें जन अन्ध निहथामी।।
भाओ भगत अपनी चित्त दीजो। मेहर करो रसना सत सीजो।।
अनन भगत माँगूँ सुखरीत। दात करो प्रभ परम पुनीत।।

सत ठाकर के चरन को, नमों नमों चित्त माहीं।
'मंगत' करे उद्धार प्रभ, पूरन पार गुसाईं।।45

सतपुरषों की धूड़ रमाऊँ। जिससे कीरत तेरी पाऊँ।।
मुनी सनकादक धरें ध्याना। नारद शारद करें बखाना।।
कपल कनाद व्यास विचारी। सिद्ध रिखीशर सत लेख को धारी।।
मुनी वशिष्ट भुसुंड धियायें। लोमस पल पल सेव कमायें।।
सत सरूप निरंजन आप। कोट मुनी नित करते जाप।।
सब पर किरपा तेरी देव। पूरन कीनी तिनकी सेव।।
होये दयाल प्रभ दरस दिखायो। मोह भरम का ताप मिटायो।।
नित ही नित चरन बलहारी। तेरी महमा अपरम आपारी।।
सबको सुकृत भेद लखाया। अबनाशी तत्त परगट दिखलाया।।
अपने जन को कीरत दीनी। साची सेव तेरी चित्त चीनी।।
जुग जुग महमा करें विचार। तेरी कुदरत नित बलहार।।
रंचक भेद तेरा नहिं पाया। कह बिध साहब खेल रचाया।।

तूँ प्रभ दाता अधिक आपारी। इस कूकर को दे निसतारी।।
चेतन पुरष अगम अनाद। तेरा खेल प्रभ अत बिसमाद।।
क्या गिनूँ तेरी वडयाई। कथ कथ थाके लेख अगाही।।
तेरी सिफ़त अधिक बखानी। जती तपी तत्तवेते ज्ञानी।।
तिनसे महमा नहिं तेरी बन आई। अनमत कूकर क्या करे वडयाई।।
पूरन पुरख सरब का स्वामी। खेले खेल तूँ अन्तरयामी।।
अपने आप में परिपूर समाई। जो जो पूजे सो गत पाई।।

पूरन भाग तिस पुरख का, जिस शोभा प्रभ की गाई।
'मंगत' नित बलहार जाऊँ, प्रभ तेरी अत वडयाई।।46

जैसी जिसने प्रीत कमाई। किरपा करके दीनी वडयाई।।
कोई गुरू कोई भयो आचारी। कोई पैग़म्बर कोई अवतारी।।
कोई सिद्ध नित मौन रहाई। कोई ज्ञानी तत्त भेद समझाई।।
कोई योग मारग को साधे। कोई भगती मन से आराधे।।
कोई मन में धरे विवेक। करें विचार एक अनेक।।
कोई जाये बीयाबान निवासी। करे तपस्या चरन उपासी।।
कोई चित्त से करे उपकार। सब में देखे रूप तुम्हार।।
कोई वेद ग्रन्थ विचारी। कीरत तेरी अन्तर धारी।।
कोई अन्तर नाम धियाई। कोई बाहर साखी गाई।।
सबने जस तेरा प्रभ गाया। अपरम आपार परमेश्वर राया।।
सब जगत को तेरी ओट। राजे राने जपें नित भूप।।
बख़्शनहार तूँ ही आपार। सरब जियाँ का करे उद्धार।।
नित ही तेरी सरनी आया। कर किरपा पूरन प्रभ राया।।
महमा तेरी अपरम आपार। तेरी कीरत तों बलहार।।
सबमें रहे तूँ ही भरपूर। राखनहार साहब हज़ूर।।
सबने कीरत तेरी गाई। सबने करी तेरी वडयाई।।
अन्त ना पारावार तुम्हार। सत सरूप तूँ सरजनहार।।

अपनी किरपा करो किरपाल। साची भगती करूँ नित भाल।।
बादमुवाद निकट नहिं आये। समता भाव की रसना खाये।।

एक साहब को सिमरते, देवी देव अनन्त।
'मंगत' महमा गाइये, तिस आद पुरख भगवन्त।।47

पूरन पुरख जाऊँ बलहारी। किरपासिन्ध तूँ ही बनवारी।।
सरब जियाँ का तूँ ही दाता। अनंत शकत तूँ ही समराथा।।
तेरी महमा अपरम आपार। तूँ ही सरब जियाँ आधार।।
तूँ ही पसरें सरब के माईं। सरब नियारा तू हीं गुसाईं।।
देवी देव पूजें तुद एक। अबगत साहब तेरा है लेख।।
सरब जगत तेरा परताप। तेरी महमा हरे सन्ताप।।
तेरा सिमरन केवल मूल। तेरी शोभा पलक नहिं भूल।।
तूँ ही पूरन का पूर। नाद सरूप तूँ ही हज़ूर।।
तृन तृन तेरी शोभा गाये। तेरी महमा आपार अथाये।।
जुग जुग जोगी धरें ध्यान। जुग जुग ज्ञानी करें बखान।।
नहीं लखया जाई तेरा पासारा। अपरम आपार पुरख निरधारा।।
भाओ भगत कर सेव कमाऊँ। पल पल तेरा नाम धियाऊँ।।
माँगूँ दात ये ही दातार। पलक ना विसरें तूँ सरजनहार।।
नित ही कीरत तेरी चित्त गाये। अन्तर प्रीत दीजो प्रभ राये।।
शुद्ध सरूप करो परगास। भरम अन्धकार का होये विनास।।
माया भरम जाये दु:ख सार। सिमरूँ नाम पाऊँ जयकार।।
तूँ दाता अनखुट भण्डारी। दीजो शोभा चरन आपारी।।
दूजा भाओ चित्त का बिसराये। एको रूप तेरा दरसाये।।
नीर तुरंग ज्यों मेल मिलाई। एह बिध पावाँ तेरी सरनाई।।

पारब्रह्म परमेश्वर, घट घट जाननहार।
'मंगत' माँगे रसना, सत सरूप आपार।।48

साचा साहब साचा तेरा नाम। साध सीख परसूँ सुखधाम।।
चरनकँवल में पाऊँ बिसरामा। साची उस्तत केवल सतनामा।।

अन्तर बाहर आवे परतीत। निरमल नाम के गाऊँ गीत।।
पल पल पाऊँ साची वडियाई। सत ठाकर की जाऊँ सरनाई।।
मनुआँ अन्तर प्रेम रस पाए। परम पुरष के चरन समाए।।
सनमुख हो के करे अरदास। सतगुर सीख सब बन्धन नास।।
निमसकार करूँ तत्त रूप। अज अबनाशी शबद सरूप।।
निमसकार करूँ नित देवा। चेतन पुरष अखेद अखेवा।।
निमसकारं रूप नारायन। दिवस रैन मन होये परायन।।
शबद सरूप अन्तरगत धारी। निरमल चित्त करूँ निमस्कारी।।
प्रभ दाता मेरा रखवारा। करूँ बन्दना बारमबारा।।
जीवनदाता सो किरपाधारी। करूँ दंडवत पद पार मुरारी।।
अखय सरूप सम रिह्या वियाप। करूँ बन्दना साहब परताप।।
सकल माया का जंतर धारी। करूँ परनाम सत शबद अपारी।।
नाद सरूप पसरे अखण्ड। उस्तत करूँ पाऊँ आनन्द।।
सब जीवों का संकट टारी। करूँ अरदास केवल निरधारी।।
आदी अंती रहे अंग संग। निरमल चित्त गाऊँ परसंग।।
जनम मरन का खेद निवारी। नित ध्याऊँ प्रभ किरपाधारी।।
बुद्धी बल तेज परगासे। निरमल चित्त करूँ अरदासे।।

एक नाम प्रभ गाइये, इक चित्त धरिये ध्यान।
'मंगत' पल पल बंदिये, शबद सरूप निरवान।।49

आलख अपार शबद निरवाना। अन्तर चित्त में करूँ धियाना।।
सरब आनन्द सो पार स्वामी। सो ही ठाकर अन्तरयामी।।
तिसकी उस्तत अपरम अपार। गावें सिद्ध मुनी अवतार।।
घट-घट व्यापक रहे अलोप। परगट पाए गुरमुख भूप।।
तिस साहब की करो वडियाई। जिसने सकली खेल रचाई।।
अपनी महमाँ करी बिस्तार। त्रैगुन माया का रचा पसार।।
अनन्त सरूप हो पसरे स्वामी। अचरज खेल धारे अन्तरयामी।।
सब कुछ धार के रहे अलेप। करो विचार सब मिटे विखेप।।

अपने घट की सोझी पाओ। सत ठाकर को अन्तर ध्याओ।।
सरजनहार जीवन का दाता। शबद सरूप सिमर बिधाता।।
सत स्वामी की सेवा धार। जिसके बल देखें संसार।।
अन्तरगत नित ही परगासे। सतगुर सीख पाओ अरदासे।।
देह मन्दर का जो रखवारी। नित ध्याओ प्रभ किरपाधारी।।
सकली रचना का आप स्वामी। खेले खेल सो अन्तरयामी।।
अंतरपाट भरम कर दूर। अन्तर बाहिर साहब भरपूर।।
सब कुछ तिसका खेल विचार। दुख सुख दात साहब दातार।।
निरमल भगती पाओ भगवन्त। एको परसें रूप अनन्त।।
निरमल ज्ञान हिरदे में धार। पावें शांत सरूप निरंकार।।
मानुष जनम की पाओ सत रास। एक साहब की करो अरदास।।

सत सरूप नित ध्याइये, अनन प्रीत चित्त धार।
'मंगत' मिटे सब कल्पना, सत ठाकर चरन पधार।।50

सत परमेश्वर तूँ ही भरतारा। जल थल अंदर तेरा पासारा।।
सत सोझी जब अन्तर पाई। तेरी प्रभता सरब दिखलाई।।
नित ध्याऊँ तेरा रूप आनादी। नित सिमरूँ सत शबद आगाधी।।
अपरम अपार जोत निरवानी। आलख अभेद ज्ञान परवानी।।
मन मूरख तूँ अन्तर जाग। सत सरूप की चरनी लाग।।
औगुन भरिया देह आकारा। भय भरम का अधिक गुबारा।।
कलविख धारे नित अंधकार। भव दुस्तर नहिं सूझे पार।।
अनेक जतन कर मनुआँ राख। सत शबद की कीरत भाख।।
अन्तर स्वामी नित परगासा। रोम रोम में करे बिलासा।।
मोह माया जब मन से भागी। सतनाम रसना घर जागी।।
दुरमत रोग अधिक दुखकारी। नित भरमें ये जीव अंधकारी।।
अनन्त मनोरथ वासना घेरी। आवागवन नित पावे फेरी।।
दीनदयाल भये किरपाल। अन्तरगत पाई सत घाल।।
नित ही नाम प्रभू का गाऊँ। तिस आधार जीवन को पाऊँ।।

तिसकी आज्ञा तन मन धारूँ। मन बच करम सतनाम पुकारूँ।।
दुबिधा नासे चित्त धीर समाई। अबगत शबद जोत घर पाई।।
परमानन्द निज रूप पछाता। अत परकाश नाम रँगराता।।
सब औगुन भये जीव के नासा। सत बानी आतम परगासा।।
डोलन त्याग मन शून्न समाया। सतगुर सीख निरभय पद पाया।।

निरभय होये जीव तब, जब सतसार कमाए।
'मंगत' अन्तरगत माहीं, सत ठाकर दरसाए।।51

साचा शबद पायो अबनासी। दुरमत छाया रोग विनासी।।
अन्तर चित्त पाई वडियाई। तृखा विनास शान्त अत पाई।।
प्रभ दाते ने कियो निहाल। बन्धन भरम काटा दुखजाल।।
दीनदयाल हूँ नित सरनाई। बौहड़ ना व्यापे दुरमत काई।।
सत सील हिरदे परगासो। दीन भाओ में करूँ निवासो।।
तूँ भण्डारी सरब का दाता। माँगूँ प्रेम चरन रँगराता।।
सनमुख परगट रहो त्रैकाल। सिमर सिमर मन होए निहाल।।
नाम रूप जाए अन्धकार। अनामी धाम पाऊँ निरधार।।
तूँ ही तू एक परकास। जिस आधार करें सकल बिलास।।
परमेश्वर तूँ उस्तत योग। अनमत जीव के हरो सब रोग।।
क्या बखानूँ तेरी वडियाई। आपे करता खेल खिलाई।।
सकल ताप से जीव को राखो। अपना ज्ञान दीजो सत साखो।।
बारमबार करूँ परनामा। तूँ परमेश्वर इस्थित धामा।।
तेरी महमा चित्त आए समाए। प्रभ दाता जी होत सहाए।।
अन्ध बुद्धी विचार से हीना। दुर्मत भरम में नित लपटीना।।
कह बिध राखूँ तेरी ओट। मोह माया अत धारूँ खोट।।
सकल विकार दुबधा को टारो। निरमल प्रेम पाऊँ नाम आधारो।।
चौसठ घड़ी करो प्रभ दात। खिमा ग़रीबी चित रहे समात।।
नाम आधार ले पाऊँ धीर। जनम जनम की हरो प्रभ पीड़।।

संकट हरण मंगल का दाता, प्रभ का नाम चितार।
'मंगत' जतन यह सार है, नित ही नित जप सार।।52

सत सरूप की करो अरदास। जनम जनम की जावे जम फाँस।।
आदी सत अन्त भी सार। सत सरूप जग सरजनहार।।
तूँ साचा पुरख नित परधाना। तुमरी सेव करे कल्याना।।
नित माँगूँ तुमसे धूड़। तेरे नाम में रहूँ मख़मूर।।
तू ही दयाल तुमरी है टेक। दीनदयाल अबगत अलेख।।
तन मन वारूँ तुमरे चरना। दर्शन दीजो तुम कारन करना।।
अनन प्रीत माँगूँ नित सेवा। सेवो दयाल देवन के देवा।।
अपनी शोभा बल अन्तर परकासो। भरम बकार माया बिख नासो।।
साचा धन दीजो मोहे स्वामी। सदा भिखारी दर पारगरामी।।
मन का सकला बन्धन छेदो। परगट होकर हरो सब खेदो।।
धीरज दया सत सील प्रभ दीजो। उपरस जीवन सार लखीजो।।
परतक्ख होके दरशन परकासो। जड़ बुद्धी मल सब ही नासो।।
तुम सरब कला पूरन पुरखोत्तम। तूँ सरब आधार पुरख अनूपम।।
तूँ अबगत अगोचर अगामी। तूँ आलख आपार अनामी।।
तूँ सरब जियाँ की है कल्यान। तूँ सरब-आधार पुरख भगवान।।
हस्ती कीटी अस्थावर धारी। जंगम आद का तू ही मुरारी।।
पवन पावक नीर समेरा। अम्बर ताने धर रूप गम्भीरा।।
चारखानी को नित परकासे। तूँ अडोल अचाहक पुरख अबनासे।।
तेरी महमा का नहीं शुमार। जल थल मंडल तेरा बिस्तार।।
अपना कौतक आपे नित धारे। इत उत माया करी बिस्तारे।।
सरब के भीतर सबसे न्यारा। बिसमाद पुरख अखण्ड आपारा।।
जाँ देखाँ ताँ एक दिखाया। तू सत सरूप पुरख निरमाया।।
गुनी ज्ञानी भगत आचारी। सिमरे पल पल तुद रूप अपारी।।

अनन्त सरूप हो पसरया, तूं एक पुरख अलेख।
'मंगत' माँगे नाम रस, बख़शो प्रभ सत भेख।।53

अखण्ड आनन्द केवल प्रभ नाम। सिमर सिमर पावें बिसराम।।
सत सरूप सरब जगदीशा। दीन भाओ जप नाम सुखरीशा।।
नित सुख देवे सो ही दयालू। करुनाकर सो नित किरपालू।।
नित ध्याओ नित करो अरदास। पाप कूप का होवे नास।।
दु:ख निवारी सो किरपाधारी। तिसके दर का जो होए भिखारी।।
देवन देव सो वड परतापी। पल पल लयो तिसे मन जापी।।
अन्तरगत निरन्तर ध्याओ। सिमर सिमर अखण्ड सुख पाओ।।
सो ही थाओं सो ही सतधामा। गुरमुख सिमर लेवे बिसरामा।।
विखे विकार भसम नर होई। निरभय नाम जपे जन जोई।।
सरवज्ञ ठाकुर ऊँच बिसरामी। सकल घटाँ का अन्तरयामी।।
सो दीनदयाल बिशम्भर देवा। निरमल चित्त धर कर तिस सेवा।।
तिसकी सेव लाभ अधकाई। वेद ग्रन्थ नित करें दुहाई।।
जग आवन का ये ही निधाना। निश्चय आवे एक भगवाना।।
अनन्त नाम अनन्त सरूपा। अनन्त शकत धरे आप अनूपा।।
कथी ना जाए तिसकी वडियाई। कोटाँ कोट ब्रह्मण्ड उपजाई।।

जुग जुग आदी सम रूप है, जनम मरन नहिं पाए।
'मंगत' सब जग तिसमें, वाँग नीर तुरंग समाए।।54

ब्रह्म सत्यम् सरब आधार। करो अरदास पावें जयकार।।
पुरख अनादी नित सम परकास। सरब जियाँ में करे निवास।।
सब साजन मिल प्रेम से गायो। आलख अपार मन माहीं ध्यायो।।
नित आदेस नित प्रीत कमाओ। रख विशवास अभय पद पाओ।।
अजर अमर शकत निरवानी। नित आनन्द परम सुखखानी।।
जो जन प्रीत से नाम धियाए। संकट नास परमगत पाए।।
अतुल शकत सरब का स्वामी। सरब ज्ञाता सो पारगरामी।।
साध संगत मिल शबद धियाओ। पूर मनोरथ निज रूप समाओ।।
सरब व्यापक सरब अतीता। तीन काल सो रहे पुनीता।।
घट घट की सब बनत बनाए। अपरमपार पुरख अगाहे।।

निहचल बुद्धी तत्त ज्ञान विचारो। सत परकाश जोत निरधारो।।
करता हरता सरब सुखदानी। ब्रह्म सत्यम् जप पद निरवानी।।
सूक्षम अस्थूल इक सूत परोई। सरब आधार शकत नित सोई।।
मन पुनीत मुख बोल पुनीता। अखय शबद नित जाप जगदीशा।।
करो परनाम तिस पुरख के चरना। नित रखयक प्रभ कारन करना।।
पल पल घड़ी जप नाम सुखरासी। भाओ भगत ले मिटे चौरासी।।

पूरन पुरख को बन्दिए, नित धर निर्मल चीत।
'मंगत' अरदास बखानिए, रख सतगुर की परतीत।।55

दु:खी दीन का जो संकट टारी। पततपावन जप पार मुरारी।।
करता हरता जो सरब आधारी। रख विश्वास नित चरन सुखकारी।।
भेद भावना जो नाहीं विचारी। अभेद रूप जो इक रस धारी।।
घट घट में जो नित परगासी। चेतन पुरष सिमर अबनाशी।।
जिसकी गत मित लखी ना जाई। अपने तेज में आप समाई।।
अपने बल में जो बलकारी। भज गोबिन्द मुकत रस धारी।।
सरब विचार जाँ से परगासी। ज्ञान विज्ञान जप जोग बिलासी।।
सो परिपूरन सरब गत पूरा। रख विशवास हो चरनी धूड़ा।।
जिस वस्तू को नित मन ध्याए। कारन आनन्द बहु जतन कमाए।।
अखण्ड आनन्द सो आप स्वामी। जो जन बूझे पाये बिसरामी।।
निर्भय रूप त्रैकाल समाई। आवागवन नहिं काल की फाही।।
सरब काल इक रंग बिताई। अकाल पुरख जप सम्पत सुखदाई।।
ना शस्तर काटे ना अगन जलाई। ना पवन सुखावे ना जल भीजाई।।
सबसे न्यारा जो सरब समाई। पारब्रह्म जप रूप आगाही।।
सबसे नेड़े सबसे दूर। जल थल मय्यल शक्त भरपूर।।
ऊँचे से ऊँचा सरब बिस्तारी। सूखम रूप रहे सबसे न्यारी।।
अगम अगोचर की कथा विचारो। रख विशवास उतरें भव पारो।।
सरब का थाओं सरब का धामा। सरब जगत जिसमें बिसरामा।।
पूरन परकाश तेज परचण्डा। सिमर दयाल रूप अखण्डा।।

पारब्रह्म जगदीश को, सिमरो बारमबार।
'मंगत' मिले सत शान्ती, बिनसे गवन विकार।।56

पारब्रह्म की सेव कमाओ। मिल सतगुर सत कीरत गाओ।।
अजर अमर अबनाशी देवा। पल पल कीजो मन में सेवा।।
आवागवन से रहे नियारा। भाओ प्रेम से भज करतारा।।
अगम अगोचर जो रहे बिसरामी। सरब व्यापक भज अन्तरयामी।।
जुग जुग एको रसना धारी। सम सरूप भज सो निरंकारी।।
काल करम जहां नहीं वियापी। सरब शकत कर नाम प्रभ जापी।।
द्वन्द अन्धकार से रहे नियारा। रूप निरंजन भज करतारा।।
नाम रूप जग मिथ्या खेला। सतनाम भज शबद अलबेला।।
सकल जीवों का करे उद्धारा। पततपावन भज करतारा।।
अनहोयों को होया बनावे। दीनदयाल लियो पल पल ध्यावे।।
सरब के ऊपर जो किरपालू। किरपानिधान भज दीनदयालू।।
शारद शुरती जाँ का जस गावें। शेष महेश परीत कमावें।।
अनन्त सरूप चेतन परगासी। पल पल लियो तिस चरन निवासी।।
आवागवन चौरासी फेरा। सिमर दयाल मिट जाये बखेड़ा।।
राजा रंक की करे रखवारी। सिमर दयाल नित पारमुरारी।।
जल माहीं जो थल परगासे। थल माहीं जो जल विगासे।।
सरब जियाँ को जो नित हरया। पारगरामी भज सुख सरया।।
सूखे तरवर को हरियाई। सूखे सरोवर को भरवाई।।
पाथर माहीं जो जन्त टिकाई। भज परमेश्वर सरब शकताई।।

सरब कला समरथ स्वामी, बारमबार धियाओ।
'मंगत' बिपता सब मिटे, जिस पल दरशन पाओ।।57

तू परमेश्वर नित सुखरासी। एको तेरी चित्त में भरवासी।।
तेरी माया का अन्त ना कोई। सकल सामिग्री की गत जाने तू ही।।
तुमसे सब कुछ परगट होये। तुम ही व्यापक तुम सरब समोये।।
अपना खेल तूँ आपे खेलें। आपे न्यारा आपे मेलें।।

सब कुछ लेखा तूँ बनाई। सकल जगत तेरी प्रभताई।।
तू कादर सब कुदरत तेरी। सरब जियाँ संग प्रीत चंगेरी।।
तू सूक्षम तू ही अस्थूला। समदृष्ट कर सबमें फूला।।
लखा न जाई तेरा पासारा। अपरम अपार तूँ सरजनहारा।।
जो जन तेरी सरनी आये। तेरे भाने परम सुख पाये।।
तेरी महमा चित्त आये विचारा। तूँ जगदीश सरब दातारा।।
हस्ती कीटी तृन आद सुमेरा। सरब स्वामी तूँ ठाकर मेरा।।
कह विध गावाँ तेरी वडियाई। तेरी कुदरत तू आप समाई।।
साचा करम दीजो प्रभ देवा। अनन परीती पाऊँ जग सेवा।।
तोरे जन की नित धूड़ लखाऊँ। सबमें तेरी कला दरसाऊँ।।
हरो गुबार ग़रीबी दीजो। सरनागत की रखया कीजो।।
ऐसी भगती माँगूँ प्रभ देवा। बिषन विरंच करें ज्यों सेवा।।
धुरू प्रहलाद चित्त सार विचार। अनन भगत मोहे दियो मुरार।।
दीजो नाम मिटाओ भ्रम भूख। करुनाकर तूँ प्रभ निरदोख।।
अनमत बुद्धी धर करूँ विचारा। महमा तेरी प्रभ अपरम अपारा।।

सरब जियाँ आधार है, सो ठाकर प्रभ एक।
'मंगत' नित सरनागती, राखे चरन की टेक।।58

सत ठाकर का नाम ध्याइये। सतसंगत मिल अमीरस खाइये।।
ध्याय ध्याय लो नाम गोबिन्दा। सिमर सिमर लो परमानन्दा।।
पतत-पावन सो कारन करना। नित रखयक प्रभ रहो तिस सरना।।
साचा पुरष सरब समराथा। दीनदयाल अनाथों के नाथा।।
अपनी महमा आपे बिसतारी। आपे खेले खेल खिलाड़ी।।
आपे देखे अपनी किरया। सरब गत रूप आप पसरिया।।
सकल जियाँ को सूतर धारी। सकल आधार प्रभ आप मुरारी।।
जब भावे तब खेल बिसतारे। इत उत माया परगट धारे।।
अपनी लीला ठाकुर धारे। सरब भीतर खेल खिलारे।।
आपे खेले आपे न्यारा। बिस्माद कौतक साहब पसारा।।

अपनी शकत दे सब परकाशे। सरब अतीत आप बिलासे।।
सरब माहीं आप पसरिया। आपे माहीं अलेप विचरिया।।
कथी ना जाये अकथ कहानी। बिसमाद रचना जगत पछानी।।
सरब करम का साखी आपे। सरब नियारा नित वियापे।।
सिमर लीजो पद निरमल देवा। बिनस जाये सब ताप का भेवा।।
उठ परभाती कर अशनाना। सच ठाकर का करो ध्याना।।
तिसकी वडियाई मन में ध्याओ। तन मन तिसकी दात लखाओ।।
दासाभाओ चित्त में धारो। सत ठाकर की सेव विचारो।।
निर्मल करम प्रभ सिमरन सार। पल पल मन के माहीं विचार।।
देह अरोग संकट नासे। खेम कुशल चित्त माहीं परगासे।।
रिद्धी सिद्धी प्रभ नाम विचार। नित दातारी अनखुट भण्डार।।
भले संजोग परगट पायें। सत ठाकर की कीरत गायें।।
साची प्रीती केवल तिस चरना। भज करतार मुकत का निरना।।
औगनकारी ये मन दुखदाई। बिन प्रभ ओट धीर ना पाई।।

साची भगत प्रभ चरन की, नित उठ गुनी विचार।
'मंगत' बिन हरि नाम के, दुखिया कुल संसार।।59

अपरम अपार तेरी वडियाई। वेद ग्रन्थ बहु लेख लखाई।।
शेष सहँस मुख सिमरन गाये। विषन वरंच शिव आद धियाये।।
नारद शारद नित जस गायें। अपरम अपार तेरा भेद ना पायें।।
रनक मात्तर जिस सेव पछानी। पूरन पुरष तीन लोक परवानी।।
अपनी महमा को आप पछानी। अछेद अभेद अपार लखानी।।
सरब जीवों घट तूँ परगासा। तुद आधार करें सरब बिलासा।।
पवन पानी बैसन्तर धरना। अम्बर तान बीच आप पसरना।।
अदभुत माया परगट कीनी। सकल जीव तिसमें भरमीनी।।
आद जुगाद अचम्भा धारी। सूक्षम अस्थूल रचना बिसतारी।।
कारन महाकारन परे रहाई। शुद्ध सरूप अपार गियाई।।
सूर चन्दर तारागन धारी। चारखानी की रची फुलवाड़ी।।

करम का चक्कर सब मांई लगाई। भाँतक भाँत खेल खिलाई।।
गुनी ज्ञानी नहिं पावें पारा। किस भाँत साहब रचा पसारा।।
जेता विचार जिस मन आयो। दे परमान जगत समझायो।।
ओड़क निरना एक समझायें। जल में तुरंग त्यों जगत प्रभ मायें।।
बीज से बिरच्छ ज्यों परगट होये। पारब्रह्म में जगत बसोये।।
रवी किरन ज्यों तेज परगासे। पारब्रह्म में जगत एयों भासे।।
सकल जगत प्रभ रूप पछानी। मिल सतगुर पाएँ सार ज्ञानी।।
सबके मध नित आप परगासे। सरब अतीत हो नित निवासे।।
अपरम अपार ये अचम्भा धारी। सब कुछ तिससे सो सबसे न्यारी।।
मिल सतगुर जब जुगत पछानी। सकल विकार तब लीन समानी।।
शुद्ध सरूप ब्रह्म इक रहाई। दृष्टा दृष्य भरम सब जाई।।
अचरज खेल जगत की रचना। बिन प्रभ रूप केवल है कलपना।।
प्रभ की खोज यतन तत्त सार। मोह ममता का मिटे गुबार।।

सत सरूप निज आतमा, तिसकी सेव कमाओ।
'मंगत' मिटे सब दूषना, काल करम का ताओ।।60

तूँ तूँ करके नित ही जाप। हंग बुद्धी नासे संताप।।
जीवन रूप जानो भगवन्त। नित परकाशे सकले जँत।।
तिसकी शकत सबमें वरताई। तिस आधार सब चक्कर चलाई।।
आद अनादी बिशम्भर देव। पल पल कीजो तिसकी सेव।।
अपना भरम गुबार तियागो। साची कीरत प्रभ सिमरन लागो।।
नित अजनमा नित अबनासी। तिसका सिमरन आनन्द परगासी।।
उट्ठत बैठत नित धियाओ। सतसरूप को सीस निवाओ।।
अन्तरगत में नित रहे बिराज। तिसका भेद नहिं मिले समाज।।
सरब परकाशी सरब नियार। तेरी कुदरत तों नित बलहार।।
अपनी महमा आप लखाई। सकले जीव के भरम मिटाई।।
आप सच सच तेरा नाम। घट घट लीना तूँ बिसराम।।
तेरी दात माँगाँ नित नीत। तेरे चरन की लागे प्रीत।।

भरम ग़ुबार सब मन का जाये। तेरी भगती मन रहे समाये।।
सत करम मन नित ही लोचे। भाओ प्रेम विच हिरदे सोचे।।
मान गुमान हरो प्रभ देवा। अबगत शबद की पावाँ सेवा।।
सब जीयाँ की प्रीत चित आये। तेरा रूप सबमें दिखलाये।।
अखण्ड अबनासी तत्त परगास। नित ही तिसका राखा विशवास।।
ज्ञान पदारथ सम्पत दीजो। साची प्रीत इक नाम लखीजो।।
अपरम दात तेरी दातार। पलक ना विसरे तुद नाम आपार।।
मन का आवन जावन विनासी। निश्चल ध्यान तुद चरन निवासी।।
दु:ख सुख दोनों पाऊँ इक रंग। नित आनन्द दीजो परसंग।।
साची कीरत गुन गावाँ तेरे। आप मिटाके पावाँ सुखसीरे।।
शिव सनकादिक सेवा धारी। ये अनमत कूकर किस गिनत विचारी।।
पततपावन तेरा नाम स्वामी। हो दयाल अबगत अगामी।।

भगती पदारथ माँगियो, सत साहब दरबार।
'मंगत' दुरलभ सम्पदा, जो जीव देवे छुटकार।।61

नित अनमत मैं मूढ़ अनजाना। शरनागत तुद पार भगवाना।।
कर किरपा मोहे करो उद्धार। करूँ डण्डौत मैं बारमबार।।
सरब कला तूँ ही समरथ्थ। राख लें प्रभ दे के हथ्थ।।
और आस ना कोई भरवासा। तुद चरनों का नित हूँ दासा।।
बारमबार प्रभ करूँ पुकार। होवो दयाल सत सरजनहार।।
मूढ़मती अज्ञान को नासो। सत तत्त ज्ञान अन्तर परगासो।।
करम बखेड़ा मन मिटे अन्धकार। घट अन्तर होवे जोती उजयार।।
करूँ बंदना तुद चरन जगदीश। नित हरयो मेरे भरम संदेश।।
निर्मल कीरत पाऊँ पद विशवास। अती कलेश दुरमत होए नास।।
जनम मरन का संकट अत जाये। अबगत रूप तेरा मेल मिलाये।।
अनक संशे में नित हूँ घेरा। दीनदयाल काटो भव फेरा।।
अजर अमर अबनाशी तुद धाम। करुनाकर वहाँ दीजो बिसराम।।
तेरी ओट प्रभ तेरा आधार। पूरन पुरख तूँ सत करतार।।

बखशनहार तूँ पार मुरारी। सरब जियों पर किरपाधारी।।
अचरज महमा कर तू परगासा। जल थल अन्दर करें निवासा।।
काल करम ना तोहे व्याप। अपनी गत मित आपे जाप।।
आद अन्त तूँ ही सत एक। नित ही राखाँ तेरे चरनी टेक।।
अबगत लीला धारी संसार। सरब के अन्दर करें पसार।।
आपे खेल आपे नित खेलें। अपना रूप आपे नित मेलें।।
सत सरूप तेरा सब रंग। नित लाख चौरासी गावें परसंग।।
मानुष देव आदी सब ध्यायें। अबगत प्रेम के नित गुन गायें।।
त्राहेमान तेरी सिफ़त आपार। हो दयाल मन दियो आधार।।
सकल बिपत से होए खुलास। निर्मल ध्यान से करूँ अरदास।।
नित बन्दूँ पद कँवल अपारी। नमों नमों नित हूँ निमस्कारी।।

अपरम अपार तू ही पुरखोतम, करूँ बन्दना बारमबार।
'मंगत' भयो सरनागती, प्रभ दीजो चरन आधार।।62

तूँ ही सत आद आनादी। पूरन पुरख आलख बिसमादी।।
तूँ ही रहे जुगा जुग पूर। समरथ पुरष हूँ चरनी धूड़।।
तूँ ही परमानन्द परगास। बारमबार करूँ अरदास।।
तूँ ही अखण्ड आनन्द सरूप। नमो नमो नित चरन अनूप।।
तूँ ही संकट हरनेहारा। निमख निमख करूँ निमस्कारा।।
तूँ ही मात पिता किरपालू। करूँ डण्डौत नित दीनदयालू।।
तूँ ही पल पल होत सहाई। सत ठाकर तेरी सरनाई।।
तूँ ही अन्ध बुद्धी परगासे। शुद्ध सरूप अबगत अबनासे।।
तूँ ही किरपानिधान प्रभ मेरा। अनमत राखो नित चरनी केरा।।
नित अरदास करूँ प्रभ देव। रंचक दीजो चित्त चरन की सेव।।
तेरी सेवा नित करे निहाल। गाऊँ कीरत तुद चरन दयाल।।
तेरी सेवा जो जन पाये। तिसके चरन में रहूँ समाये।।
तेरी सेवा पाए वडभागी। होयें दयाल करें अनुरागी।।
अधिक वडयाई तेरी प्रभ पाए। हूँ बलहारी जो भेद लखाये।।

बंध खुलासी पल में होई। तेरी महमा जिस जन पिरोई।।
तपन विनास सुख शांत समाये। पूरन पुरख तेरी शोभा जो गाये।।
आनन्दसरूप तेरा आपार। नित बलहारी जाऊँ बलहार।।
दीजो नाम अखण्ड ध्यान। खेम कुशल पूरन भगवान।।
दीजो प्रेम चित्त चरन आपार। माँगूँ रसना प्रभ बारमबार।।
दीजो भाओ गरीबी संग। ध्याऊँ नित तेरा सतसंग।।
दीजो सकल जगत की धूड़ी। तूँ समरथ्थ पुरष हज़ूरी।।
दीजो शुद्ध विवेक आचार। नित बन्दूँ तुद चरन आपार।।
दीजो निरमल प्रेम इक नाम। दिवस रैन सिमरूँ सुखधाम।।
दीजो अपने जन की सेवा। सेव सेव पाऊँ तुद देवा।।

हरजन की कीरत माहीं, मन तन रहे समाये।
'मंगत' तिन परसाद से, प्रभ दरशन होयें अगाहे।।63

पारब्रह्म परमेश्वर ध्याइये। पूरन मनोरथ मंगल पाइये।।
बल बुद्धी अत तेज परकास। सत सरूप चित्त लियो उपास।।
संकट नाश सत सम्पत पाई। दिवस रैन चित्त चरन धियाई।।
एक ओट एको भरवास। सिमर सिमर सत तत्त अबनास।।
प्रभ अपने की उस्तत विचार। जग आवन की साधन सार।।
अखण्ड परकास नित आनंद रूप। सरब आधार अत शकत अनूप।।
सिमरन कीरत करते की गाओ। विजय परापत सुख सम्पत पाओ।।
लाभ यथारथ मन माहीं विचार। पल पल ध्याओ प्रभ सरजनहार।।
सरब का साखी सो प्रभ देवा। सत सुकृत कीजो नित सेवा।।
साचा उद्धम साची ये कार। सत सरूप सिमरो निरंकार।।
मानुष जनम होवे सुखरास। जो चित्त आवे साहब अरदास।।
करो परनाम सत चरन आपार। सतगुर सीख मन माहीं विचार।।
सो ही तेरी बनत बनावे। सो ही बहुरंग खेल दिखावे।।
सो ही सबका पालनहारा। भज परमेश्वर नित सुखसारा।।
सो ही सबको आनन्द दिखलाई। बिपत निवारे शान्त वरताई।।

अपने ठाकर की नित कर सेवा। परम समरथ देवन का देवा।।
दीनदयाल नित रहे किरपाल। गुरमुख सिमर के होये निहाल।।
रे मन मेरे नित सेव विचार। निमख निमख लियो चरन आधार।।
सरजनहार सो अत दातारी। करो डण्डौत सत रूप मुरारी।।

सत सरूप नारायन को, कर बंदना बारमबार।
'मंगत' अपरम सुख मिले, नित शरधा चित्त धार।।64

तूँ साचा साहब सरब आधार। नित नित करूँ तोहे निमस्कार।।
अपरम अपार तेरी वडयाई। तूँ समरथ्थ पुरख आगाही।।
अपने जन की विने सुन देवा। पल पल माँगूँ तुद चरन की सेवा।।
खल बुद्धी विचार से हीना। दुरमत विकार में नित लपटीना।।
कारन करता तूँ सतगुर मेरा। करूँ अरदास काटो भव फेरा।।
भव दुस्तर है अती दु:ख खानी। अनमत भरमे नहिं सार पछानी।।
केवल प्रीत तेरे चरन स्वामी। संकट हरो प्रभ पारगरामी।।
मूढ़ मन नित उठ भरमाये। पलक पलक बहुरंग बटाए।।
चिन्ता मोह अत धरे गुबार। तुद बिन कोई ना राखनहार।।
करो बख़शीश करुनाकर देवा। निरमल चित्त रमे तेरी सेवा।।
कहाँ कित जाऊँ करूँ पुकार। तूँ ही ठाकर सरब सुखसार।।
महमा तेरी नहिं वरनी जाये। कोट वरख जो सेव कमाये।।
अपने भाने तूँ होयें दयाल। काटें भरम माया दु:ख जाल।।
भाँतक भाँत सयानफ़ धारी। मिटे ना तृषना दु:ख जाल अपारी।।
दिवस रैन कई वरख विताये। भोगे भोग अधिक दुखदाये।।
मिटी ना तृषना अत दुखकारी। चले निमाना अन्त की बारी।।
राजा राना साधू दरवेश। तृषना लागा अत घना कलेश।।
जाँ से पूछूँ दु:ख जाल दिखाए। सरब सुख केवल तौ केशवराए।।
सब कुछ छाड तुद सरनी आया। बख़शनहार तूँ बख़श प्रभराया।।

आवन जावन सब जगत पसारा, तू साचा इक करतार।
'मंगत' कीजे बेनती, प्रभ दीजो चरन आधार।।65

कह बिध सिमराँ तेरा नाम स्वामी। औगनहार मन घट बिसरामी।।
नाना भाँत तिसको समझाऊँ। नित ही भरमे मूढ़ निहथाओं।।
माया चक्कर को सत कर मानी। सरजनहार नहिं सिमरे अभिमानी।।
अपने रंग बहु धारे चतुराई। मूढ़पने की करे प्रभताई।।
अपनी करनी का फल नित पावे। झूट भरम में आवे जावे।।
जान बूझ होए पशू समाना। सत सरूप ठाकर विसराना।।
सत संगत में धरे नहिं प्रीती। मूरख होके करे बदनीती।।
पाप कूप नित मन में धारी। अपने जीवन की करी ख़्वारी।।
काम क्रोध अगन नित तापे। जन्मे मरे विच भरम संतापे।।
अती मलीन सुभाओ को धारी। सूझे नहीं सत धरम अपारी।।
भरम में कई जनम विताये। बिन हरी भगत नहिं छूटन पाये।।
दुरलभ करम मानुष देह धारी। सत ठाकर की लियो सेव विचारी।।
सतपुरषों का मारग जाप। सतनाम हिरदे में थाप।।
रे मन ऐसी करनी धार। जो ये बिनसे गवन विकार।।
राग द्वेष अगन का ताओ। प्रभ सिमरन से होए अभाओ।।
अपना सरजनहार जप देव। दुरलभ जग में ऐसी सेव।।
अपना ठाकर हिरदे में चेत। काल करम दु:ख जाये विखेप।।
अपना स्वामी नित लियो चितार। मानुष देह होवे बलहार।।
पुरख समरथ जिसकी सब बन्त। हिरदे ध्याओ पूरन भगवन्त।।

परमेश्वर को सिमरिये, बार बार चित्त माहीं।
'मंगत' मिले सत शान्ती, बौहड़ गरभ ना पाईं।।66

सत की खोज करो गुनि मीता। मानुष जनम होये पुनीता।।
जग आवन का काज संवार। सत सरूप चित्त माहीं चितार।।
दृढ़ नीयम प्रभ सेव कमाओ। निश्चल चित्त से कीरत गाओ।।
आज्ञा प्रभ की मन तन मान। जग में आवन होये परवान।।
नाम सिमर ये सुकृत काजा। सरजनहार सरब को साजा।।
बारमबार करो डण्डौत। दीनदयाल तेरी इक ओट।।

महमा अनन्त ना वरनी जाई। कथ कथ थाके गुनी गुनराई।।
दाता होके दात करीजे। भिखारी होय के भीख को लीजे।।
दाना बीना बहु सयानफ़ धारी। कित मूढ़ भयो नित करें ख़्वारी।।
कहीं गृहस्ती कहीं विरक्ता। कहीं ज्ञान सरूप संजुगता।।
कहीं आवे कहिं जावें पूर। तूँ समरथ्थ सरब हज़ूर।।
प्रभ जी मेरी आरज पूर। जनम जनम के कीजो दुःख दूर।।
औगन हरो शान्त वरताओ। मूढ़े जन्त का खेद मिटाओ।।
परम समरथ तूँ साहब दाता। सत सरूप इक तूँ ही पछाता।।
हरो कलेश मंगल घर दीजो। अबनाशी रूप घट अन्तर सीजो।।
अनन भगत दीजो मोहे स्वामी। तूँ दातार हो पारगरामी।।
नित तेरे चरनी रहे परीत। पल पल गाऊँ तेरी महमा पुनीत।।
सुकृत होवे जग आवन देवा। भाओ भगत पाऊँ सत सेवा।।
सेव सेव गत निरमल धारूँ। अखण्ड जाप नित चित्त विचारूँ।।

दीनदयाल की सरन में, पूर मनोरथ पाये।
'मंगत' मिटी सब कामना, चित्त नाम पदारथ खाये।।67

सकल जगत का तू ही मानी। साचा ठाकर अतुल परमानी।।
अपनी महमा नित वरताई। भाँतक भाँत खेल रचाई।।
ओड़क एको सच तूँ आप। साहब साचे तेरा परताप।।
निर्मल कीरत अपनी प्रभ दीजो। मूढ़े जीव को चरनी लीजो।।
मिथ्या मोह अन्धकार विनासो। अपनी कीरत अन्तर परगासो।।
साची प्रीती तेरे चरन रहाई। दात करो प्रभ सार सुखदाई।।
तूँ ठाकर नित मेरा स्वामी। तुद आधार करूँ बिसरामी।।
सरब शकत तेरी वरताई। अनाशक्त मैं मूढ़ आगाही।।
नित ही तेरी सरनी आया। राख लीजो पूरन प्रभराया।।
साची भगती चित्त चरन समाये। साची कीरत तेरी चित्त आये।।
साचा नाम तेरा नित गाऊँ। साचा ध्यान तेरा नित पाऊँ।।
साची महमा तेरी आये विचार। उस्तत कीजूँ प्रभ बारमबार।।
साचा परकाश तेरा परगासे। मोह अन्धकार का कीजो नासे।।
अपनी प्रभता आपे दिखलाओ। मूढ़े जीव का भरम चुकाओ।।

नौका ज्ञान करो बख़शीश। तूँ ठाकर सरब का ईश।।
निरमल बुद्धी दीजो विज्ञान। परसूँ तेरा नाम सुजान।।
तूँ ही प्रभ सब ताप निवारी। नित ही नित तेरे चरन बलहारी।।
साकत जीव की सुनो अरदास। मोह भरम की काटो फाँस।।
तूँ दाता मैं माँगनहार। साची भगती करो दात दातार।।

नमों नमों नित चरन को, धर के अपना सीस।
'मंगत' माँगे नाम रस, दात करो जगदीश।।68

एक चरन का रहे भरोसा। दात करो साहब अबनासा।।
मीन नीर ज्यों हेत अधिकाई। चन्द चकोर ज्यों प्रीत कमाई।।
भौरा ज्यों सुगन्ध लपटाया। ज्यों दीपक देख पतंग जराया।।
एह बिध भगत कमाऊँ तेरी। दात करो ये दात घनेरी।।
अनंक जीवों की बिपता टारी। जुग जुग ठाकर किरपाधारी।।
साँझ बनाओ नेहों तोड़ निभाओ। पूरन पुरख सत दात लखाओ।।
तेरे चरनी जाऊँ बलहारी। होवें किरपाल तूँ पुरख मुरारी।।
सागर ज्यों तुरंग समाई। एह बिध तुद में चित्त लिपटाई।।
मोर तोर जाये अन्धकारा। सरब जगत पाऊँ तेरा पसारा।।
तेरी आज्ञा में निश्चल रहाऊँ। तेरी दात सदा सुख पाऊँ।।
प्रभ जी अन्ध को करो निहाल। बन्धन छूटे दुरमत जाल।।
सरब निधान सरब सुखरासी। आद अन्त में तूँ ही निवासी।।
तेरी तुझको करूँ डण्डौत। दीनदयाल तेरी इक ओट।।
तेरी महमा का तूँ ही ज्ञाता। अपरम आपार पुरख बिधाता।।
तेरा प्रभ जी अजब पसारा। लिखत नहिं आवे लेख अपारा।।
निरमल नाम की माँगूँ भीख। सिमर सिमर पाऊँ सुख लेख।।
तपत विनासी घर शान्त पाई। कीरत साची तेरी चित्त गाई।।
आलख आपार तेरा सब खेल। विछड़े जीव को पल लेवें मेल।।
दीनदयाल तूँ अत किरपाल। तेरी दात करे निहाल।।

भय भरम शंका मिटे, चित्त पावे विशवास।
'मंगत' प्रभ की शरन में, निरभय लीना वास।।69

R RR R

जीव उद्धारक नियम

जीव उद्धारक करम ये, निश्चय करो स्वीकार।
जीवन को इस्थिर करें, मिटें सकल विकार।।

प्रभात सन्ध्या काल दो, दृढ़ नीयम ये राख।
दो घड़ी हरि सिमरन कीजो, प्रेम प्रीत के साथ।।

शुद्ध करो ब्यौहार को, नफ़ा लियो समान।
थोड़ी लियो ब्याज नित, धन ना पावे हान।।

लक्ष्मी करे निवास वहाँ, जाँ साचा ब्यौहार।
मेहनत थोड़ी फल पायो बहुता, ऐसा सुनो विचार।।

खेती और चाकरी में, पर-हक़ करे पछान।
शुद्ध कमाई जानिये, जो ऐसा निश्चय मान।।

निसदिन देवे अन्न जो, दुखी दीन अनाथ।
अघट लक्ष्मी परगट होवे, कभूँ ना छोड़े साथ।।

यथाशक्त सेवा करे, साधू गुरू आचार।
मन बाँछत फल पाये, सो हरा होये परिवार।।

भूल कर ना बेचिये, इक कन्या दूजे भूम।
तिनकी सेवा करन से, अधिक फल मालूम।।

निसदिन राखो प्रेम, सतसंगत के माहीं।
अधिक होये ब्यौहार जो, तो पख पख को नित जाईं।।

जीवन की उन्नति करे, मन में दे विशवास।
सत करम की सुध मिले, सब कारज पावे रास।।

आहार करे नित शुद्ध, बासी अन्न ना खाए।
बुद्धी होवे सुतन्तर, रोग व्याध सब जाए।।

नफ़ा समान खर्च करे, बच्चत कीजे नित।
लक्ष्मी का आदर करे, फ़जूल ना त्यागे मित्त।।

पहनावा सादा करे, जो होवे देश की चाल।
सबसे प्रीती उपजे, तन मन होये निहाल।।

थोड़ा समय निकाल कर, वृद्ध का कीजे संग।
अनेक गुन तिनसे मिलें, सुन साचो परसंग।।

बहुता रूप जो नित करे, सो बद-आचारी जान।
धन जोबन को नष्ट करे, जीव पाये नित हान।।

बूढ़ा बाला जो होये, सबसे रक्खे प्यार।
दुर्जन बचन ना चित्त धरे, सुख पावे आपार।।

चोरी जूआ कपट छल, चौपट ताश शतरंज।
सिनेमा थेटर ज़ामनी, नित देवे जीव को रंज।।

भंग तम्बाकू मदरा, चण्डू गाँजा जोए।
चरस अफयून रिश्वत तजे, सो ही शूरा होए।।

झूट गवाही और अमानत, जहर सरीखा जान।
मूरख मित्तर बेवाह नारी, देवे गुनी को हान।।

बिना कारन और बिना समय, जो दूजे घर जाये।
मिटे लज्या जावे कीरत, दाग़ देही को लाये।।

औगन को नित देत है, घर को करें उजाड़।
बुद्धीमान सो आखिये, जो इनका तजे पियार।।

सच बोले पर-दु:ख हरे, नित साचा करे ब्यौहार।
गुनी पुरख का संग करे, ना बैठे कभूँ बेकार।।

सत करम में धन को अरपे, निश्चय रख भरपूर।
फल बान्छे ना तिसका, सहजे मिले हज़ूर।।

सत लेख सत करम ये, जो गुनी चित्त धार।
अधिक होए तिस कान्ती, शोभा करे संसार।।

परम आनन्द तिसको मिले, जो निर्मल करे विचार।
नित ही पावे जीत को, कभूँ ना होये हार।।

सत उपदेश सुन गुनी, पावे जीव कल्यान।
'मंगत' ये तत्त सार है, मारग मुकत निधान।।70

अधिक सेवा और प्रेम से, उपजा ये तत्त सार।
सुफल करे तुम जीव को, शरधा पाओ आपार।।

सत उपदेश धारन करो, सत की करो परीत।
सतगुर पर विशवास धर, नित ही पाओ जीत।।

जीव पाये कल्यान को, नित मारग साचा खोज।
पुरषारथ में नित रहो, लखो जनम की मौज।।

सत पुरष की सीख में, धारो निरमल चीत।
जीवत में आनन्द रहे, अन्त चलो जग जीत।।

ये है मारग ज्ञान का, करे सरूप परकाश।
नित ही साधो प्रेम से, निरभय पाओ बास।।

प्रेम प्रीत से जो पढ़े, और सुने मन लाये।
सार अर्थ को बूझिये, सकले भरम जलाये।।

सत मारग की सुध मिले, सत सरूप विशवास।
सत करम चित्त में रमे, नित आतम परकाश।।

बन्धन से मुक्ता भये, सतनाम चित्त धार।
पाप करम को छेद के, पावे शबद आधार।।

तृखा मिटे संसार की, ले जीव बिसराम।
सत लेख धारन करे, निश्चे पावे धाम।।

नित ही नित विचारयो, साचा ये सन्देश।
लागे मैल ना भरम की, विनसे सकल कलेश।।

निर्मल उद्दम जगत में, जीव को देवे धीर।
साधन सेवा सुफल हो, अन्त को लागे तीर।।

गवन मिटे संसार की, जीव पाये सत ठौर।
अनहद मंगल में रमे, प्रेम प्रीत चित्त जोड़।।

दुरलभ आना तिसका, इस जगत में होए।
सतसरूप नारायन को, जो लेवे चित्त परोए।।

बार बार तत्त बूझिये, बार बार चित्त धार।
'मंगत' परसे ब्रह्म को, पाये नाम तत्त सार।।71

आज्ञा पुरख आगाध से, जो सुना ज्ञान निरधार।
साधो प्रेम परीत से, भवजल उतरो पार।।

शरधा सेवा पूरन हो, अधिक प्रेम चित्त पाओ।
आशीर्वाद तुमको होवे, जनम सुफल कर जाओ।।

ये तत्त गुरमुख योग है, सकल ज्ञान की सार।
जो सुनया अति प्रेम से, सनमुख बैठ आधार।।

नित ही नित विचारयो, रख पूरा विशवास।
परमगती को पाओगे, सुन गुरमुख सत जिज्ञास।।

खिमा ग़रीबी में रमो, रख सच नाम की ओट।
धरम करम पूरन होवे, पाओ ना जम की चोट।।

एक शबद ही सार है, और सकल आसार।
सिमरो सतगुर जुगत से, जग में लेओ जयकार।।

सुफल जनम तुमरा होए, मन तन होए परकास।
सत सुकृत प्रभ आ मिले, निरभय कीजो बास।।

इस साचे विख्यान को, पढ़े सुने चित्त लाये।
'मंगत' ले निज सार को, जीव परम पद पाये।।72

सांसारिक जीवन

जनम मरन का भेद लखाई। सुख दु:ख सार का निरना पाई।।
जब तक सुख दु:ख सार नहिं पेखे। तब तक सुरती पड़ी भुलेखे।।
सत विचार जब लेख लखाई। सार असार का भेद अरथाई।।
दु:ख सरूप का सुनो विचारा। बन्धन नासे हरे विकारा।।
जब यह जीव मात गरभ में आया। उरधमुख होये केता दु:ख पाया।।
परसूत पवन ने जब बाहर निकाला। ग्रस लीयो त्रैगुन जंजाला।।
ज्यों ज्यों सोझी जगत की पाई। त्यों त्यों वासना बढ़ती जाई।।
बालपना जब देह पर आया। कूड़ कुलेल में जीव फँसाया।।
चंचल विरती अत नित भरमाये। देख अचम्भा बहु तिरखाये।।
ज्यों ज्यों वस्त अनूप को देखे। उठ उठ धाये करे जतन विशेखे।।
नित अधीर शान्त नहिं पाये। बालपना दु:ख है अधिकाये।।
ज्ञानहीन बुद्धी दु:ख देवे। अनयुक्त क्रिया को नित नित सेवे।।
छिन रोये छिन में हरखाये। मात पिता बहु धीर बँधाये।।
आगे काया ज्यों जोबन को धाई। मान मद काम में जीव गरसाई।।
देखके आनन्द पाये मुख रतनाई। अकड़ अकड़ पग भूम धर चलाई।।
वासना परचण्ड वेग परगट होई। इच्छया भोग में जीव जलोई।।
काम क्रोध नित काया को गाले। जीव अति भोग में देही जाले।।
नरक अगन सम जोबन काया। अति अत चंचल होये नित दु:ख पाया।।
जोबन नासी देही जरजर होई। किये पाप दु:खरूप लखोई।।
इच्छया वेग अत भयो घनेरा। हीन शकत जीव पाये नित पीड़ा।।
धन परिवार दु:ख रूप दिखाये। चलन की नौबत जब बाज बजाये।।
सुत दारा ना धीर कोई देवे। मोह माया का ताप तपीवे।।
देही आये रोग नैन जोत त्याग। अतिअत दु:ख में जीव मंद भाग।।
करें निरादर देवें धृगकार। पुत्र कलत्तर सभी परिवार।।

जरा अवस्था प्रापती, जीव घोर दु:ख पाये।
'मंगत' एथे थाँ नहीं, आगे की सुध नाये।।73

जरा अवस्था दु:ख की खानी। सकल वस्त दु:ख रूप पछानी।।
ऐसे जल जल जीव तजे ये काया। करनी बाँधा आगे पिंड धराया।।
तुच्छ जीवन की ये गत भई। सब जीवों का मारग ये ही।।
माया विकार में सुख नहिं पाये। आस आस में आवे जाये।।
चारखानी के जीव हैं जोई। सबकी दिशा ऐसी नर होई।।
भरमे भूला ये जीव अज्ञानी। साचा सुख नहिं कियो पछानी।।
सुख कारन सम्पत बहु धारी। अन्तकाल सब बिपत विचारी।।
जिस जोबन का मान धराई। देखत में गई जरा को पाई।।
जो परिवारी अपना विचारी। होये यगाना अन्त की बारी।।
सुख कारन जो उठ उठ धाये। जतन अकारथ नित दु:ख समाये।।
जिस जीवन को नित का मानी। एक पलक में नाश पछानी।।
धन भूमी का मान मद राखी। होये निमाना काल जब ताकी।।
हिकमत हुनर बहुता विचारी। कालगती नर टरी न टारी।।
असत वस्तु सब ही दिखलाई। तिसका संग परम दु:खदाई।।
उठ रे गुनियाँ कर विचार। दु:ख का रूप सकल संसार।।
देह सरूप मूल दु:ख पछान। तिसको धार अन्ध ग़लतान।।
दु:ख सरूप ये करम विकार। पल छिन का नर मिले आधार।।
दु:ख का मूल नहिं चित्त से जाये। जुगा जुगन्तर करम कमाये।।
दु:ख का रूप इच्छया विकार। मिले ना शांत पाये सम्पत अपार।।
सम्पत पाये अत बढ़े कलेशा। काल चक्कर सिर बड़ा अँदेशा।।
दु:ख सरूप ये मन कलपना। देख भरमाया खेल जग सुपना।।
दु:ख का रूप आपा भरमीत। ग्रहन त्याग लगी अगन पलीत।।
दु:ख का रूप ये जीवन संसार। काल कराल करे नित शिकार।।
दु:ख का रूप जग खेल ये जान। अचरज माया पसरी भगवान।।

सुख को खोजत खोजते, जीव जूनी बहु पाये।
'मंगत' माया मोह धर, नित आतम सुख विसराये।।74

जग की रचना अजब रचनाई। देख देख जिया भरमाई।।
इक उठ चाले इक आन वियापे। इक त्याग चले इक अपनी कर थापे।।
एक संजोग वंजोग को पाई। एक वंजोग में संजोग समाई।।
एक नवीन इक होये पुराना। इक हार चले इक जीत की चाहना।।
इक कुमलाये इक खिली किलारी। अपने रंग में सब ही मतवारी।।
पुत्तर पिता की थाओं सम्भाले। ऐसे पौत्तर देख पुत्तर उठ चाले।।
कोई आवे कोई जावे मीता। वाह वाह खेल जगत की रीता।।
कोई जग में निशान बनावन आवे। कोई बने निशान को मेट के जावे।।
कोई हिकमत सयानफ़ कीजे जारी। कई बनी बनाई को देन उखाड़ी।।
कोई जन गुन अस्थापित कीजे। कोई जन उसका रूप मटीजे।।
एक एक से आया सियाना। अपने गुन की बहु करी बखाना।।
सत सोझी बिन निरास सब चाले। कूड़ जतन में जीवन दियो गाले।।
एक के पीछे दूजा आया। मान तेज का चक्कर चलाया।।
जैसे एक गया दूजा उठ जाये। धार सयानफ़ सभी पछताये।।
इक मिरतक होये दूजा जीवन माँगे। इक धन को सम्पे दूजे चले हैं नाँगे।।
इक की वस्तु बेगाना लेवे। एक बेगानी अपनी कर सेवे।।
चलो चली खेला संसार। अनमत जीया तूँ नैन उघाड़।।
बसें खुशी से चलें पछताये। देख अचम्भा काल चक्कर चलाये।।
निश्चय मरना सबको दिखलाई। तो भी जीवन आस बँधाई।।
पिता पितामा जग रह्या ना कोए। एह बिध चलना नर सबने होए।।
सब कुछ छाड ज्यों ओह जायें। एह बिध चलना जान मन मायें।।
भरम की नींद से उठके जाग। करो विचार सत सुख वडभाग।।
जिस वस्तू पाये मन धीर समाई। बौहड़ चक्कर संसार ना आई।।
साचा सुख सो ही संसार। तृपत भये ये जीव अंधियार।।

भरम अगन संसार है, सभी जीव भरमाये।
'मंगत' दु:ख को देख के, फिर उठ दु:ख में धाये।।75

जब से जीव गरभ में आया। मरन काल तक रहे भरमाया।।
सुख की इच्छया मन में राखी। जतन करे बहुरँग भाँती।।
बाल जोबन जरा विताई। रंचक सुख की सार नहिं पाई।।
बिपत बिपत में जनम गँवाए। अगन तृषना नित जलाए।।
लाख करोड़ी सम्पत धारी। सो धनी घट अगन आपारी।।
मिटे ना तृषना शान्त ना भाखे। भरम बीच नहिं सत सुख चाखे।।
दु:खी दलिद्री नित दु:ख माईं। चिन्ता अधिक मन लागत ताईं।।
राजा बैठ सिंघासन दु:ख पावे। अधिक तृषना जीया जलावे।।
पंडत वेद पुराना गाई। तो भी मन में शान्त ना आई।।
बहु परिवार परापत होए। तीन काल सुख मिले ना कोए।।
जितनी सम्पत एता दु:ख पावे। काल का बाँधा बहु जून भरमावे।।
अजब लीला काल रचाई। चारखानी में त्रास मचाई।।
भय में जन्मे भय में जीवे। बड़ी सयानफ़ नहीं भय हरीवे।।
जाँ से पूछें सुख की मीता। दु:ख बखाने गुनी गुनीता।।
अधिक कलेश में विचरे संसार। जल जल पड़े वाँग अंगार।।
तीन ताप की अगनी लागी। नित ही तपे जीव मन्दभागी।।
काम क्रोध का कठना जाल। मोहे चौरासी जन्त बेहाल।।
जल जल पड़े भोग की अगनी। ठगयो जगत हर माया ठगनी।।
घना कलेश व्यापे दिन राती। झूट परतीत करे जीवन घाती।।
दुस्तर जाल ये पसरा पासार। बिना विचार नहिं उतरे पार।।
सतगुर मिले तत्त ज्ञान विवेकी। तिसकी संगत में सार सुख देखी।।
झूट माया का मोह मिटावे। सतसरूप का निश्चय लावे।।
सत विचार करे भरम का नास। मोह माया की मिटे पियास।।
एक परमेश्वर की परसे ओट। गरब गुबार हरे सब खोट।।

मन की मैल उतारिये, नित सोधे तत्त ज्ञान।
'मंगत' चूके भव का संसा, जीव पाए कल्यान।।76

इन्द्री रसना में तृपत नहिं पाई। भोगे भोग बहुरंग अधिकाई।।
खटरस पदारथ नित नर खाये। जीबा की रसना धीर नहिं पाये।।
जुग जुग देखें जग रचनाई। कूड़ भरवास में नहिं नैन तृपताई।।
एह बिध भोग सब बेरस होए। देह को त्याग जब जीव चलोए।।
संसार में आये नहिं संसा गँवायो। अपने मन का नहिं रोग मिटायो।।
भाँतक भाँत विद्या विचारी। धन संचन की साधी कारगुज़ारी।।
अपने आवन जावन का लेख नहिं जाता। मूढ़ जीव अन्त पछताता।।
सचखंड देस का भेद नहिं पायो। करम के जाल में फिर फिर आयो।।
सतगुर वैद ना खोजन कीना। बिनसे ना रोग जो मन भ्रम लखीना।।
अपने जीवन की नहिं सार धियाई। काल करम में सब औध विहाई।।
मन्दर मसीत में उठ उठ धायो। देह मन्दर की सोझी नहिं पायो।।
बद्री केदार तीरथ जाये नहाई। आतम तीरथ की नहिं रसना पाई।।
भोग के कारन जियाँ खाल उतारी। चली ना देही संग अंत की बारी।।
मन शत्रू की नहिं सार लखाई। और जियाँ संग वैर कमाई।।
मन अपने को नहिं दियो उपदेशा। और जियाँ का हरे संदेशा।।
मन की अगन नर नहीं बुझाई। ऊँच शिखर जाए शांत ना आई।।
मन का अन्धकार नहीं नर त्यागा। झूट परकाश जग देखे अभागा।।
मन की ममता नहीं नर त्यागी। जतन करें नहिं मिटे उपाधी।।
आहार पवित्तर नर नित नित खाई। बिना विचार मन मलिन नहिं जाई।।
शास्त्तर सिमरत पढ़े अनेका। बिना अनुराग नहिं मिले विवेका।।
मारग अनेक में मन नित डोलाई। सतगुर भेंट बिन पार नहिं पाई।।
साधन अनेक मन अन्तर धारी। बिना विशवास निहफल विचारी।।
जुगत मुकत का भेद तब पायो। पूरन भाग जब सतपुरष मिलायो।।
पाखण्ड विकार सब मन ने त्यागियो। कल्यान सरूप प्रभ चरन में जागियो।।

सतपुरषों की सीख से, मन तन भया निहाल।
'मंगत' बंधन सब नासिया, घर परसियो दीनदयाल।।77

सुत दारा नाती परिवार। स्वारथ के सब बन्धू विचार।।
अपना खोटा खरा पछान। नर राई ना मिटे जो करी अंजान।।
ना सत करम से प्रीत विचारी। ना सत रहनी हिरदे धारी।।
ना मन में कीयो उपकारा। दु:खी दीन नहिं कियो विचारा।।
ना सतसंग निश्चय धारी। अपनी करनी नहिं करी विचारी।।
ना प्रभ का मन सिमरन पायो। मरने का भय नहिं हिरदे आयो।।
मानुष जनम सब दियो गँवाई। सत मारग नहिं सोझी पाई।।
झूट विकार में धरी परीती। पाप करम की साधी नीती।।
सबसे ऊँचा बनयो मानी। धन जोबन जब सम्पत पानी।।
करनेहार नहिं साहब जाता। कूड़ देही को जो रँगराता।।
माटी सरजनहार जो देवा। पलक ना कीनी मूढ़े सेवा।।
माटी देख माया भरमाया। कूड़ कपट में उठ उठ धाया।।
नाना करम भोग चित्त ठानी। अगन सरूप तृषना लिपटानी।।
धर अभिमान नहिं दूजा सूझे। अपनी शोभा कीरत नित बूझे।।
माटी में सुख अधिक लखाई। रंचक धीर नहिं अन्धमत पाई।।
माल मुलक धर बनयों भूप। नित सँवारे माटी सरूप।।
छतर सुहाना सीस धराई। मनियों की माल कण्ठ लटकाई।।
भाँतक भाँत भूखन अंग धारी। माटी देवल अजब सँवारी।।
ओढ़क माटी माटी हो गई। कौन गती अन्ध जीव की भई।।
झूट भुलेखे इतना भरमाया। माटी सरजनहार नहिं ध्याया।।
अधिक सयानफ़ खोटी चतराई। इस माटी की जो सार नहिं पाई।।
माया मोह का ये अधिक गुबार। वाह वाह खेल रचा करतार।।
सत विसार झूट भरमाया। झूट जीवन में पाप कमाया।।
रो रो चले सब अन्त की बारी। बिना विचार भई बड़ी ख़वारी।।

अत संकट में जगत सब, तीन काल भरमाये।
'मंगत' छाया प्रीत ये, कब तक साथ निभाये।।78

मानुष की तो देही धारी। करनी पशू समान विचारी।।
विषे भोग में जनम गँवाई। ओड़क जग से प्यासा जाई।।
देह का मध मान बहु राखी। ओड़क देही धूड़ को भाखी।।
अन्ध बुद्ध धार ना करें विचार। कूड़ सुख में फिरें गँवार।।
इन्द्री भोग के जो सुख माने। भये वँजोग दुःख पाये अनजाने।।
छिन आवे छिन में जो जाई। तिसका सुख मूरख मनाई।।
देह तो अपनी साथ नहिं दीना। और जियाँ संग मोह लखीना।।
झूट देही के मोह फँसाया। पाप कुपथ्थ नित ही कमाया।।
झूट देही का करे गुमाना। सिर पर बाजे काल निशाना।।
मूरख होके सूझ नहिं पाई। झूटी धारी जग अशनाई।।
मोह भरम की अगन जलाई। राग द्वेष की फाँसी पाई।।
छिन रोये छिन में हरखाये। भूत समान खेल खिलाये।।
इक वस्तू की सम्पत कीजे। दूजे उसका त्याग लखीजे।।
कूड़ ब्यौहार में रहे दिन राती। छल कपट में रहे मदमाती।।
नित ही जले भरम की अगनी। ठग लियो माया अत ठगनी।।
तृषना अगन पल पल जलाई। ओड़क जग से रोता जाई।।
सकली सम्पत होई बेगानी। निकले प्रान देही कुमलानी।।
सुख खोजत सब जनम गँवाई। ओड़क दुःख की भीत लखाई।।
मनमुख मूढ़े चले निरासे। अन्त की बारी जग से प्यासे।।

सम्पत बहु संचत करी, पर चली राई नहिं साथ।
'मंगत' भरम गुबार में, ले चलया खाली हाथ।।79

संसार की रचना में मन ना तृप्ते, कोट करे उपाये।
मान माया बहु संचित कीनी, तो भी धीरज नाए।।

अधिक भयो परिवार जग माईं, बहु बिध पाई वडयाई।
पर मन को ना संतोष परापत, नित निरासा रहाई।।

वाह वाह रचना ये जगत की मीता, कुछ कहन कथन नहिं जावे।
जाँ से पूछूँ सुख की साजन, सो ही दुःख दिखलावे।।

जिस जन निर्मल कीरत पाई, एक नाम पूरन भगवंता।
'मंगत' तिस जन शांत परापत, तत्त परस पुरख अनंता।।80

देह ममता का नाश होवे, प्रभ प्रभता चित्त आये।
मान गुमान जाए चित्त ईरखा, दया ग़रीबी पाये।।

नित ही प्रेम के रंग से, जो जीवन रँगे मीत।
सुफल होवे जग आवना, सुन साधजनाँ दी रीत।।

इस मन को नर धीरज नाईं, जो अरब खरब धन पाये।
इस मन को संतोष ना होवे, जो चक्रवरत राज कमाए।।

एह मन तृप्ते कभूँ ना मीता, जो पावें अति परिवारा।
बिन प्रभ भगत और सेवा साधन, नहिं बिनसे मन गुबारा।।

अन्ध कूप ये भ्रम है दुनिया, सभी जीव दु:ख पायें।
बिन सिमरे हरि नाम के, सब नित निरासे जाएँ।।

उठ जाग मुसाफ़र चेत तूँ, सत साजन करतार।
ये जीवन होवे सुफला, अन्त पायें जैकार।।

जीवन में पद जीवन परसें, सतगुर बचन कमायें।
'मंगत' मिटे सब दूषना, नित मंगल को पायें।।81

बड़े बड़े धन माल के वाली, तीन काल तपतायें।
बड़े बड़े गुनि ज्ञान के वादी, पलक धीर नहिं पायें।।

वाह वाह रचना जगत की मीता, कोऊ जन शांत ना पाई।
खोजत खोजत मैं फिरा, सब संकट रूप दिखाई।।

पूछ पछान करी बहुतेरी, सब ही बिपत दिखलाए।
बिस्माद ये रचना प्रभ की माया, बिन ज्ञान ना धीरज आये।।

राजा दुखिया राना दुखिया, और दुखिया कुल संसार।
'मंगत' सुखिया सो भया, जिस शोभा पाई करतार।।82

तृषना तुल नहिं कष्ट है मीता, संतोष तुल धन नाईं।
दया बराबर नहीं अमीरी, तुल धरम नहीं सुख थाईं।।

सत के तुल नहिं तप है मीता, प्रेम तुल नहिं ध्याना।।
तुल सतसंग नहिं और उपाये, जो देवे जीव कल्याना।।

जीवन जग ये अत ही करड़ा, सभी जीव भरमायें।
'मंगत' जिन जन सार पछानी, सो जन शांत समायें।।83

माटी का ये पुतला बनया, माटी माहीं समाये।
धनी दलिद्री राजा राना, सब एह मारग पाये।।

किसी की बनी रही ना मीता, एक पलक में नाश हो जाई।
मूरख सो ही जग में कहिये, जो निर्मल सार नहिं ध्याई।।

तृष्ना में आवें तृष्ना में जावें, देखो जग की रचना।
बिन प्रभ नाम आवे नहिं धीरज, देख भरम ये सुपना।।

प्रभ सिमरन सतसंग परीती, नित धारे पर-उपकारा।
'मंगत' मारग धरम का सोधे, तब उतरे भवनिध पारा।।84

मानव जीवन का उद्देश्य

मानुष ताँ को आखिए, जाँ का शुद्ध विचार।
पाप पुन्न पहचान के, सँभल सँभल पग धार।।

करम करूर त्याग करे, सत करम में चित्त लगाए।
जतन परयतन मन में धरे, कपट बिकार हटाए।।

मान मध और मसखरी, परधन पर की नार।
इन पाँचों को जो तजे, सो मानुष करो विचार।।

परहित चित्त में धारना, सब सों अधिक पियार।
हिरदे से सेवा करे, बाँछे फल नहिं सार।।

कोमल बचन मन सुशील, अन्त का करे ध्यान।
छल कपट को दूर करे, मानुष सोई सुजान।।

जप तप सिमरन धारना, और साचे नाम पियार।
गुरमुख जीवन पायके, जीत लियो संसार।।

खाना पीना सोना, और विषय विकार।
चारखानी के जीव सब, भरमें बीच अन्धकार।।

मानुष तन दुरलभ है, सरब खानी के बीच।
सुफल करो इस देह को, भाव भगत जल सींच।।

अपनी उन्नति नित करो, लखो जनम की मौज।
बार बार ना आओगे, हरो भरम का बोझ।।

पीर पैग़म्बर औलिया, सिद्ध मुनी अवतार।
परगट होए जगत में, मानुष की देह धार।।

रंग तमाशे छाड तूँ, जीवन करो विचार।
दुरलभ समे को पायके, जीव का करो उद्धार।।

कहाँ से आया कहाँ नर जाए, कौन तेरो मुक़ाम।
'मंगत' सार विचारना, मानुष जनम का काम।।85

मानुष जनम सुफल होवे, जब प्रभ दाता चित्त आये।
प्रभ के सिमरन कारने, ये दुरलभ जीवन पाये।।

लाख चौरासी जन्त सब, करम भोग के माहीं।
मानुष देह की ऊँच गत, जो मारग मुकत लखाईं।।

इस जामे को धार के, प्रभ संग मेला पायो।
सिद्ध पीर अवतार सब, मानुष देह धर आयो।।

करम करे चण्डाल के, गहरा धरे अभिमान।
छूट कभी ना नर मिले, बिन सत करम पहचान।।

करनी साची नित करो, रख सतगुर की टेक।
मन की मैल उतारियो, साधन ये सत एक।।

कपट विकार त्याग के, सत सील चित्त धार।
दुर्जन का संग त्याग के, सत संगत विचार।।

पर-निन्दया पर-हान को, मन से कीजो दूर।
परहित जीवन धरम में, मन कीजो मख़मूर।।

प्रेम के रंग में रंग लो, ये चोला चतर सुजान।
बार बार नहिं पाओगे, उठ मारग खरा पहचान।।

जीवन जग दिन चार है, ओढ़क सब अंधकार।
इक दिन सम्पत छाड के, करें भूमी पाय पसार।।

माल धन परिवार सब, इक दिन जाये छूट।
चलें निमाना जगत से, जम देवे सिर कूट।।

कूड़ भरोसा क्यों धरा, जप लो सरजनहार।
'मंगत' कहे विचार के, ये जीवन सुख सार।।86

साचा नाम सिमर सुखदाई, जो सकले ताप मटाए।
मानुष से भयो देवता, जो राम चरन चित्त ध्याए।।

सब साधन से ऊँच है, साचा नाम विचार।
प्रेम प्रीत चित्त में बसे, पलक ना विसरे सार।।

ब्रह्मा बिषन महेश्वर, एक नाम चित्त गायें।
चार वेद उस्तत करें, नाम कथा अरथायें।।

जिस साचा प्रभ नहिं सिमरया, धर के झूट अभिमान।
जाए पियासा अन्त को, ले भरम बिख खान।।

सत सरूप विसराय के, जीव परम दु:ख पाये।
आवे जावे जगत में, फिर फिर जून भुगताये।।

सदा अशान्त मन रहे, धार के बिख की बास।
कूड़ विकार ना नर मिटे, बिन सिमरे अबनास।।

छाड सयानफ़ बावरे, राम चरन चित्त लाओ।
सो ही सरजनहार है, पततपावन सुखराओ।।

नाम सिमर सुख उपजे, मन में धीरज आये।
गवन मिटे संसार की, जो सत सेव कमाये।।

उट्ठत बैठत सिमर लो, ना करो पलक भरवास।
पल पल औधी जात है, छीजत हैं नित स्वास।।

घड़ी अमोलक सो गुनी, जो प्रेम भगत चित्त आए।
'मंगत' लाभ इस देह का, पल पल लियो कमाए।।87

मानुष जनम में मिले वचारी। बंधन मुकत का लेख आपारी।।
और जून में भेद नहिं पाये। जिस कर करमगती दु:ख जाये।।
मानुष देही की ये ही वडियाई। करम वचार मिले प्रभताई।।
जनम अमोलक जिस नहीं सँवारा। जुग जुग भरमे चौरासी धारा।।
ताँ सों वचार करो सुखदाई। जाँ से जनम सुफल हो जाई।।

सत असत की करो पहचाना। हरो गुबार करम बिख नाना।।
सत करम की करो पहचानी। पाप करम तजो दु:ख खानी।।
छिन छिन गत करम विचारो। भव सिन्धू से उतरें पारो।।
पाप करम नित देवे कलेशा। मनुआँ तापे धर पाप बशेखा।।
सो ही मानुष करो विचारी। अपनी करनी का जो लेख लिखारी।
पाप करम से मन को ठाके। सत करम को अंतरगत चाखे।।
सत करम ये सार सुखरासी। काटे जनम मरन की फाँसी।।
सत करम बिन निरमल ना होई। पाप कूप को नित परोई।।
पाप करम ये दु:ख की खानी। हाहाकार करें जग प्रानी।।
पाप करम हैं नरक सरूप। नित नित धारे बिपता सिर कूप।।
पाप करम ये काल की फाँसी। नित ही दुखिया फिरे जीव चौरासी।।
पाप करम मन को नित तापे। भाँतक भाँत मन में दु:ख थापे।।
सुख का मारग ना कोई दिखलाई। सत करम ना जब लग पाई।।

करम नबेड़ा नित करो, जो पाप पुन्न नित धार।
'मंगत' बिपता सब मिटे, जब सत करम विचार।।88

साचा जीवन दुरलभ विचारी। मानुष देह की पावे सतकारी।।
कपट बकार मन के त्यागी। दीन ग़रीबी में सुरता जागी।।
सत तत्त आतम को नित सोधे। सतगुर जुगत को मन में बोधे।।
इच्छया रोग का करे उपाए। आध व्याध मन की बिनसाए।।
अपने आप की सोध नित लीजे। अपनी करनी की ख़बर करीजे।।
वैर बदी मन से गँवाए। नित ही प्रीत मन में प्रगटाए।।
सब जीवों संग हेत विचारी। गुर परसाद तब मिटे ख़वारी।।
अपना सुख औराँ वरतावे। मान त्याग नित दास कहलावे।।
असुर बुद्धी अन्तर से त्यागे। देव समता में गुरमुख जागे।।
देह अभिमान बकार को छोड़े। सत करतार के चरन चित्त जोड़े।।
दृढ़ विशवास जतन ये कीजे। पर का दोख नहिं हिरदे लीजे।।

सरब जियाँ में सुख वरताई। सतसार भज जीव गत पाई।।
मन अपने का हरे गुबार। सतनाम जपे बारमबार।।
उट्ठत बैठत निश्चय इक राखी। भाओ भगत मन अन्तर चाखी।।
मन निरमल सतनाम आहारी। सत सरूप का लेख विचारी।।

निहचल थाओं में जा बसा, सत करनी वाला जोए।
'मंगत' नित ही प्रेम से, चरन तिना दे धोए।।89

कुल जाती का तज अभिमाना। सम दरशन तत्त खोज निरवाना।।
कुल जाती मद नरक दिखावे। सत मारग नहिं सोझी पावे।।
प्रभ दरबार नहिं जात जमाती। कुल अभिमानी को करे जम घाती।।
विद्या ज्ञान नहिं सार को पाए। कुल अभिमान धर नरकी दर जाए।।
करनी त्याग कुल जात जमात मद राखे। कीरत नाश अपमान को भाखे।।
कुल जात का त्याग मद मान। इस जग में करनी परवान।।
करनी मान तेज बढ़ावे। करनी जम की फाँस छुड़ावे।।
करनी परम गती को देवे। करनी जीवन अर्थ को सेवे।।
करनी राज तेज दिखावे। साची संगत मिल सत करनी पावे।।
सरब जियाँ का होवे अधकारी। परदुःख हरना सत करनी विचारी।।
मान त्याग गुरबत चित्त पाए। सेव सेव कर दास कहलाए।।
सरब पापों से होए छूट। साचा प्रेम प्रभ मिले अनूप।।
मानुष जीवन की ये करनी सार। परहित चित्त करे विचार।।
पर-उपकार मन जीवन धारी। सो कुलवन्त ऊँच परवारी।।
अपना सुख दूजे वरतावे। कल्यान सरूप आतम को पावे।।
सत विचार करे दिन रात। सत सेवे उठ नित परभात।।
ऊँच नीच से करे पियार। निमर भाओ मन लेवे धार।।
एक साहब की निरमल जात। निश्चय राखे तिसका परताप।।
उपजे विनसे सो क्या वडियाई। अमर पुरष का लेख लखाई।।

जात वरन गुमान धर, क्यों भरमे दिन और रैन।
'मंगत' करनी सार है, जो करे सो पावे चैन।।90

सब साजन मिल ध्याओ प्रभ देवा। सुफल जनम पूरन होए सेवा।।
सरब का प्रीतम सो एक स्वामी। रल मिल सिमरो प्रभ अन्तरयामी।।
संकट नासे आनन्द घर पाई। जो जो सिमरे नाम सुखदाई।।
करो अरदास सिमरो नित चरना। दुख परहरे सो कारन करना।।
सन्त वेद जुग जुग बखानी। भज भगवन्त अमरत की खानी।।
कालजाल भ्रम संकट जाई। सत परतीत जो सेव कमाई।।
जो प्रभ सिमरे होऊँ धूड़ी तिस चरना। नित बलहार जाऊँ नित सरना।।
अदभुत तृषना जाल को धारी। प्रभ का सिमरन देवे छुटकारी।।
नाम सिमर और टेक तियाग। प्रभ अपने की चरनी लाग।।
ज्यूँ ज्यूँ राखे त्यूँ सुख जाने। करनहार को सत कर माने।।
अधिक प्रीत जप नाम दयाल। मानुष जनम की सत घालन घाल।।
परम सुख हरजन नित लेवे। भाओ भगत जो चरन को सेवे।।
रोग शोक निकट नहिं आए। नित बलवान सो गुरमुख रहाए।।
बारमबार सुनें सत उपदेशा। भज करतार सरब जगदीशा।।
सकल विखाद तज हर सेव कमाओ। जग आवन की सार को पाओ।।

प्रभ को सिमरन कारने, आया इस संसार।
'मंगत' जिस प्रभ सेवया, तिस चरनी बलहार।।91

सब जग तृखा में आवे जाए। हर का भगत चले तृपताए।।
बिना हर भगत मन संकट लागा। जल जल पड़े जीव मन्दभागा।।
साध-जनाँ ने कियो बखाना। बिन हरि भगत जिया दुःख समाना।।
अजर अमर अबनाशी भगवंता। तिसकी भगत देवे परसन्ता।।
लख चौरासी जून भरमावे। चक्कर काल में आवे जावे।।
मानुष देह मुकत की नौका। भगत करे जाए भरम का धोखा।।
दुरलभ जीवन का करो उपाये। रुच रुच कर हर भगत कमाए।।
पलक पलक कर औध गँवाई। गया काल फिर हाथ ना आई।।
जो करना सो अब कर मीता। ये ही सुफल घड़ी अती पुनीता।।
साचा मारग खोज तत्त ज्ञान। सेब बन्दगी भगत भगवान।।

सबसे प्रीती मुख बोल सुहाना। कर सतसंग हरो गरब गुमाना।।
बादमुबाद सब मन का त्यागो। हर की भगत में नित उठ जागो।।
खाट लयो अबनाशी धाम। अन्तकाल ले जीव बिसराम।।
साची करनी कर मन मेरे। भाओ भगत रच अन्तर केरे।।
भगत करो बिनसे सन्तापा। भरम जाए मन मगन समाता।।
भगती कारन मानुष देह पाई। बिन हरि सिमरन बेअर्थ गँवाई।।
सो दीनदयाल परम सुखखानी। जो जो सेवे होवे सुख दानी।।
प्रेम पाए पूजो प्रभ देवा। निमख निमख कर प्रीत से सेवा।।
सरजनहार ठाकर सुखरासी। जो जो सिमरे मिट जाए चौरासी।।
भरमन गई मुकत घर पाया। प्रेम प्रीत से नाम धियाया।।
नित नित मन में कर आदेसा। भगत करो मिट जाए कलेशा।।
साध वेद करें नित दोहाई। सिमरो नाम परम सुखदाई।।
हीरा जनम सत लेखे लायो। सत परतीत गुर चरन समायो।।
सतगुर कहनी मन माहीं विचार। दुरलभ जनम में खाटो सार।।

हर का नाम चितारयो, सुन संतन का लेख।
'मंगत' नाम तत्त सार है, बाकी कूड़ भुलेख।।92

अपने जनम का करो विचार। मानुष देह जग दुरलभ सार।।
सब जीवों में तिसकी वडियाई। सत विवेक तिसमें अधिकाई।।
विवेकहीन जो मानुष होई। पशू समान जीवन सो खोई।।
सत विवेक ये ही परधान। साचे धरम की आवे पहचान।।
सत विवेक ये जीवन सार। हिरदे आवे सतनाम निरंकार।।
सत विवेक ये ही सुखरास। पर उपकार में होये निवास।।
सत विवेक अमरत की खान। सत मारग का मिले निधान।।
सत विवेक अधिक परकास। पाप कुपथ का कीजे नास।।
सत विवेकी सत गती को पाये। सुफल देही धर सै जन आये।।
सत विवेक साहब परगास। विवेकी खोजे तत्त अबनाश।।
सत विवेक तब पूरन होई। साचे नाम में विरत समोई।।

नींद त्याग उठ काल विचार। सत सरूप खोजो जग सार।।
घड़ी घड़ी काया बिनसाए। समाँ गया फिर हाथ न आए।।
सुकरत घड़ी सो ही परवान। साचा नाम मन प्रीत पहचान।।
अजूँ ना बिगड़ा तेरा कुच्छ। सिमरो नाम मन हरो कुपत्थ।।
मुख कथनी नर छोड़ विखाद। हिरदे अन्तर करो प्रभ याद।।
औराँ उपदेश देवन का छोड़। अपने मन का तूँ पाप नचोड़।।
अपनी खुलासी की साध तदबीर। वक़्त गँवाये रोयें आखीर।।
साचा नाम तूँ जप करतार। मानुष जनम का ये फल सार।।

मानुष देह को धार के, सत मारग को घाल।
'मंगत' जतन सुखदाई ये, जीवन करे निहाल।।93

देह तथा आत्मा का भेद

उठ परभाती करो विचार। आतम तत्त का निरना धार।।
कूड़ देही के मोह लिपटाया। आतम खोज परम सुखराया।।
उतपत परलय देह का धरमा। आतम सरूप सदा अजन्मा।।
राग द्वेष अत देही विकार। सदा निरदोख आतम तत्त धार।।
देह मिथ्या सत आतम पेख। सतगुर मिल कथा सत लेख।।
देह विकार पर पाओ जीत। आतम तत्त में धरो परीत।।
करम जाल ये देह का सागर। निहकरम सरूप घट करो उजागर।।
काम क्रोध अत घने विकार। आतम खोज उतरें भव पार।।
तृषना आसा घने तुरंग। आतम खोज पद नित निहसंग।।
अधक गुबार ये देह की ममता। आतम विचार पावें तत्त समता।।
मिथ्या देह से उपरस होई। आतम ध्यान पावे जन सोई।।
सदा अकरता सदा निषकामी। पूरन पूर सो साचा स्वामी।।
झूठ देही में अन्ध भरमाया। आतम तत्त का नहिं निरना पाया।।
देह की प्रीत अत तृषना बढ़ावे। काम क्रोध की अगन जलावे।।
देह की प्रीत अत भय चित देवे। जनम मरन का संकट सेवे।।
देह की प्रीत मितर शत्रु विचारे। लाभ हान में होत अँगारे।।
देह की प्रीत ये नरक सरूप। तृषना वैतरनी देवे नित कूप।।
देह की प्रीत दुख सुख निरनाये। सुख के ताईं बहु जतन कमाये।।
सब ही आशा अकारथ गई। छार समाये जब मिथ्या देही।।

आसा देह की धार के, चराचर जीव भरमाये।
'मंगत' निरदेह आतमा, कोई विरला सेव कमाये।।94

आतमतत्त अजर अबनासी। घट घट व्यापक नित परगासी।।
नित ही आतम खोज विचार। नित ही आतम निरना धार।।

देह से भिन्न आतम को जान। मिल सतगुर सुन तत्वज्ञान।।
आवे जावे देह का धरमा। आतम तत्त सदा निहकरमा।।
उलट सुरत घर आतम पेख। जनम मरन का मिटे भुलेख।।
नित निरवैर सदा निरदोख। त्रैगुन रहित पुरख तत्त मोख।।
सदा आदृष्ट नहिं दृष्टी आवे। सतगुर मिले तब सार कमावे।।
देह सरजीवे तिस परकाश। आप नियारा पुरख अबनाश।।
काल करम नहिं दोख विचारी। आतम तत्त सदा निरधारी।।
सदा अकरता सदा निहसंग। आतम खोज पुरख आनन्द।।
देह के अन्दर सदा बिराजे। देह विकार नहिं तिसको लागे।।
अत निरमल अत ज्ञान सरूप। खोज करो नित तत्व अनूप।।
छिनकारक ये देह का संग। सतसरूप रहे नित अंग संग।।
देह विकार से जो छूटन पाये। मिल सतगुर तत्त आतम ध्याये।।
ज्यों ज्यों मन आतम को पूजे। मिटे विकार तृषना सब बूझे।।
करता भाओ करम का नासी। निहकरम सरूप जपें अबनाशी।।
भये निहकरम आतम तत्त पाये। पाप पुन्न का खेद मिटाये।।
जीवत में नर निरदेह होई। साची भगत पछाने सोई।।
आतम पूजे आतम ध्यान। आतम धुन्न में रहे ग़लतान।।

देह मिथ्या सत आतमा, निरमल सुनो विवेक।
'मंगत' आतम खोजना, मन की हरे विखेप।।95

निज रूप का भेद बिसारी। देह भोग में जीवन काढ़ी।।
अपना साचा रूप पछान। सकल दोष की होवे हान।।
देह का साखी तेरा रूप। खोजो तत्व ज्ञान अनूप।।
तुम परकाश देही परकाशे। मिथ्या मोह में क्यों गरासे।।
भरम त्याग उठ ज्ञान विचार। सतगुरु साध की सुनो पुकार।।
देह मुकाम तेरा रथ मीत। तूँ रथवाही सदा पुनीत।।
अपनी शकत आप सम्भाल। रथ का टूटे सब जंजाल।।

क्यों भरम माया लिपटाया। सत सरूप अपना विसराया।।
निज सरूप का करो विचार। दुरमत रोग जाये दु:ख सार।।
झूट देही संग आपा पाई। देह के भोग में आवे जाई।।
साखी अपना रूप पछान। करम जाल तृषना होवे हान।।
देह के मद में क्यों मदमाता। साखी रूप नहिं कियो पछाता।।
बिनसनहार देही का जाल। तिसका मोह रूप जम काल।।
ममता त्याग कर आतम खोज। निरवान सरूप की पावें सूझ।।
सदा आनन्द करम से न्यारा। साखी पुरष सरब भरतारा।।
सोही तेरा निरमल रूप। मिल सतगुर पावें गत अनूप।।
देह अन्तर सो रह्या समाई। तिसकी शकत सब में वरताई।।
जड़ देही को करे सरजीत। सोही तेरा रूप पुनीत।।
अपने रूप की करो सँभाल। दुरमत काट देही का जाल।।

आतम तत्त पहचान से, सुरत भई लवलीन।
'मंगत' देह विकार से, भिन्न कर आतम चीन।।96

जीवन रूप को क्यों विसराया। झूटे मद में नित लिपटाया।।
देह के भरम में अनमत भूला। सत सरूप विसरे सुख मूला।।
दु:ख का जाल देही पछान। जनमे मरे पावे नित हान।।
अनंक जोड़ देही धराई। इक दिन सकले बिखरत जाई।।
अनंक परमानू देही आकार। छिन में नासे होवे छार।।
साखी पुरष घट माहीं पछान। जीवन शकत जो सरब निधान।।
देह के भोग देही संग नासे। भरमे जिया धर अन्ध भरवासे।।
साखी रूप का करो विचार। तीन काल जो आनन्द भण्डार।।
परीपूरन सदा निरदोख। साखी पुरष रूप है मोख।।
आतम तत्त निज रूप विसराया। दुरमत जाल में जीव गरसाया।।
जब आतम तत्त की करी पछान। दुरमत जाल की होई हान।।
ताँ सो गुनी करो विचार। आतम खोज परम सुख सार।।

देह का भरम सहजे ना जाई। छिन छिन में जो अंग कटाई।।
अनंक तपस्या जो चित धारी। देह का मोह नहिं मिटे अन्धकारी।।
ज्ञान ध्यान करे विचारा। देह का मोह नहिं उतरे विकारा।।
चार कुंट में उठ उठ धाई। देह की ममता नहिं चित्त से जाई।।
गुनी ज्ञानी सब भये लाचार। देह की फाँसी अपरम अपार।।
काम क्रोध मोह लोभ विकारा। दुरमत रोग का सब अन्धकारा।।
जतन करे तो भी जन हारे। देह भरम से नहिं उतरे पारे।।

ममता देह अज्ञान अत, सकल जीव भरमाये।
'मंगत' विरले गुरमुख, ये दीरघ रोग मिटाये।।97

सत्संग एवं सत्संगति

पधारो नित सतसंग में, निरमल सुनो विचार।
दुरगम माया चक्कर से, सहज में उतरें पार।।

यज्ञ दान तपस्या से, अधिक शरोमनि जान।
एक पलक सतसंग की, महमा अतुल पहचान।।

सतसंगत सरजीवित करे, जीव पाये सत ठौर।
मारग निरमल धरम ये, नित ही प्रीत चित्त जोड़।।

सतसंगत से सुख मिले, निरभय परसे धाम।
साजन अधिक परीत से, नित पाओ बिसराम।।

भरम रूप संसार में, सतसंगत नौका जान।
'मंगत' नित पधारिये, सुनिये निरमल ज्ञान।।98

सतसंगत सत करम अनूपा। रल मिल गायो नित राम सरूपा।।
सतसंगत में प्रीती राखो। साचा धरम मन अन्तर चाखो।।
साची कथा में प्रीत लगाओ। सकले पाप से मुक्ता पाओ।।
इक परमेश्वर की उस्तत बूझो। सतपुरषों की करनी सूझो।।
सकले भरम गुबार विनासे। सत करम सतसंग निवासे।।
परम जतन ये ही सुखदाई। मिल सतसंग सतकरम कमाई।।
पुत्तर धीया नाती परिवारा। सतसंगत से पावें सुधारा।।
पाप कूप सरब नर नासे। सतसंगत में करो निवासे।।
निस दिन जो जन नीयम धारी। सतसंग जाये सत कथा विचारी।।
कोट विघन होये पल में नासा। सत धरम में आवे विशवासा।।
देव सरूप को सो जन पाई। नित सतसंग जो सेव कमाई।।
मूढ़मती जाये पाये विवेका। सत सरूप का परखे लेखा।।

अपने पाप की करे निगरानी। करनी मलीन में पावे पछतानी।।
मानुष जनम की सार लखाई। जब सतसंग में प्रीत लगाई।।
दुस्तर जाल से निस्तर होये। मारग धरम में प्रीत लखोये।।
हिरस खुदी की दुरमत नासे। सत सेवा में नित निवासे।।
गरब मूल जो पाप का होई। तिसे त्याग मन निरमल होई।।
दीन भाओ गरीबी पाये। सरब कला प्रभ एक दिखाये।।
शुद्ध विचार प्रभ पर विशवासा। सतसंगत मिल होये जग दासा।।

मान मध सब नासियो, चित्त पायो गरीबी भेख।
'मंगत' नित सतसंग से, अबगत लखयो लेख।।99

अधिक पाप से होवे रिहाई। नित सतसंग में जो नर जाई।।
मूरख मन सत करनी में धाये। नित सतसंग जो प्रीत कमाये।।
जनम मरन की सब सार पछानी। सुख दु:ख सकल भेद को जानी।।
पाप पुन्न की करी परीख्या। मिल सतसंग पाई सत सिखया।।
गरब गुबार वैर बुद्ध नासे। एक प्रेम मन में परगासे।।
मोह अगन मन शान्त होई। सरब का ठाकर चित्त चरन परोई।।
पर-दु:ख की जो नीयत धारी। निज सुख का जो बना पुजारी।।
अपने तुल ना कोऊ दिखलाई। धार ग़रब बहु कीजे चतुराई।।
लोक लज्या नहिं ग़ैरत चित्त पाये। पाप करम जो धारे अधिकाये।।
सकल बिपता नर होई विनास। जब सतसंग में कियो निवास।।
असुर भाओ से सुरगत पाई। दुष्ट विकार से भई रिहाई।।
सत-करम की सोझी होई। मारग शान्त सतसंग लखोई।।
दीन दु:खी की जानी गत सार। साचा शुकर कीना करतार।।
सतपुरषों की साखी नित गाई। तिनका जीवन सत धरम दिखाई।।
अपनी उन्नति करन की सूझी। अन्तकाल जम संकट बूझी।।
सतगुर सेव में आये विशवासा। साची सिखया मन तन परगासा।।

दुरजन भाओ सब मन का जाये। मिल सतसंग फल अमरत पाये।।
सकल पदारथ जो घर पायें। बिन सतसंग नहिं आनंद खायें।।
साची करनी ये धरम विचारो। आपामत ये तजो गुबारो।।

सतपुरषों के संग से, सत-मारग की पाई सुद्ध।
'मंगत' जनम कदारथ होया, सत-धरम की पाई बुद्ध।।100

उत्तम करम ये जग में भारा। नित सतसंग में जीव पधारा।।
जड़ बुद्धी से सुतन्तर होई। सतसंगत में धरे दिल जोई।।
करम बिकार बिख भरम निवारे। नित सतसंग में जीव पधारे।।
यज्ञ तप योग करम बिध नाना। तुल सतसंग ना करो पछाना।।
चौदाँ लोक में पग पग तप धारे। एक पलक सतसंग कोट जीव उद्धारे।।
गुनियाँ मुनियाँ करी वडयाई। सहज उपाये सत मारग पाई।।
बिन सतसंग मन इकत्तर ना होवे। जनम जनम की ना जड़ता खोवे।।
वेद ग्रन्थ पढ़े बिध नाना। बिन सतसंग नहिं पाये सार निधाना।।
खल बुद्धी अन्धमत जो होवे। नित सतसंग में प्रीती जोवे।।
बिना जतन के सब भरम उठ जाये। महा गुनी सो पुरख कहलाये।।
जैसी संगत ऐसा मन भासे। मूरख संगत जड़ता परकासे।।
करम धरम ना पावे रास। मूरख सेती जो करे बिलास।।
परम आचार जग में एह मीता। जीव पधारे सतसंग में नीता।।
सतपुरषों के सुने इतहास। सतसरूप में पावे विशवास।।
सत करम मन रुची उपजाये। नित सतसंग में गुनी जो जाये।।
बिना पढ़े होए बुद्धवाना। बिना साधे सिद्ध सार पछाना।।
अपने पाप की करे पछान। नित सतसंग में रक्खे धियान।।
अधिक कलेश बिपता सिर आये। **'मंगत'** सतसंग पाये सकल मिट जाये।।101

अनेक विगन जाय सतसंग पधारे। जनम जनम की मल जड़ता टारे।।
निस दिन पल घड़ी सतसंग रमावे। पाप पुन्न की तब सोझी पावे।।
अपनी उन्नती का उठे मन चाओ। सुगम भाय सत मारग पाओ।।

रिद्ध सिद्ध देवे बढ़े परताप। सतसंग में जो चित ले थाप।।
सत को छोड़ कुसत संग करे। अनक बिघन सिर विपता पड़े।।
चोरी ठगी मन आये बकार। करम विलक्खन की विरती चित धार।।
जूआ चौपट छल कपट विकार। मूरख संग से डूबे मंझधार।।
गृहस्ती विरक्ती जो कोई होवे। साची संगत मिल सब दु:ख खोवे।।
संगत रूप ये मन विचार। संगत से ही पावे मन आधार।।
संगत से ही ऊँच नीच गत पावे। सत कुसत मन करम कमावे।।
दुरलभ भाग जो सतसंग पाये। अनेक विघन सम धूल उड़ जाये।।
करयो उद्दम ये सत विचार। सतसंगत से मन पावे उपकार।।
देश उपद्रव अनेक विघन विनासे। सतसंग जहाँ नित परकासे।।
राजा रंक सब ही सुख पाये। अपनी बिगन के सब करें उपाये।।
कूड़ कपट बिकारी का नाश। सतसंग का जहाँ होवे परकाश।।
सबसे उत्तम नीती और ज्ञान। सतसंग परसे होवे परधान।।
होवे सुतन्तर चतुर बुद्ध पाये। शुद्ध ब्यौहार की सोझी आये।।
हक हलाल की करे पछान। कोट फल एक सतसंग में जान।।
भगती ज्ञान ध्यान विवेक। सबसे उत्तम सतसंगत एक।।
नित ही नित सतसंग पधार। ‘**मंगत**’ मिटे सब मन अन्धकार।।102

पखवाद नहीं छल दा छेद। मान मद ना बिखया खेद।।
केवल सतसरूप का होवे परकाश। सोई संगत साची चित भास।।
जो जाये सो पाये विवेक। सत मारग का लाखे लेख।।
बिरह वैराग प्रेम परगासे। सो ही संगत सच रूप निवासे।।
अन्धकार सब मन का जाये। जब सतसंग की महमा पाये।।
मिथ्या जग की रसना त्यागे। अबनाशी पुरष की सेवा लागे।।
सत असत का पाये विचार। अनेक जीवों का होये उद्धार।।
तत्त ज्ञान जाँ होये बखान। साची संगत सो ही परधान।।
सतपुरषों का इतहास परगासे। संगत साची सोही नर भासे।।

लोभ विकार मोह ममता जाये। सत सरूप में प्रीती आये।।
अपने मरने का निरना भाखे। संगत साची में रसना चाखे।।
मन बिकार सहजे मिट जाई। साची संगत की वड प्रभताई।।
ऊँच करम मन उपजे भाओ। नित ही उद्दम सत सेव कमाओ।।
मानुष जनम की सार को पावे। नित सतसंग में जीव जो जावे।।
ग्राम ग्राम में सतसंग प्रभाओ। करे कल्यान मंगल चित्त आओ।।
सब गुनियों को ये करूँ बखान। मिल सतसंग सतरूप पहचान।।
मान वडयाई और कीरत उपजावे। सत समाज जहाँ रहे समावे।।
औगुन गुन दोनों पहचाने। दुर्लभ मारग सतसंग से जाने।।
अधिक वडयाई अधिक परताप। '**मंगत**' सत् समाज से मिटे संताप।।103

अपने जीवन का सुने उपाये। ऊँच गती को सो नर जाये।।
सत सरूप की आवे परतीत। नित सतसंग में राखे चीत।।
राज तेज का चक्कर चलावे। संगत बल से बहु सुख पावे।।
सो ही देश उन्नती कीजे। इकत्तर होए सतसार को बूझे।।
वैर विरोध का मिटे संताप। मिल सतसंग सतनाम अलाप।।
एक घड़ी निसदिन नियम राखे। सभे जीव मिल प्रेम रस चाखे।।
वैर विकार सकल मिट जाये। सतगती को निश्चय सो पाये।।
ऊँच नीच की होवे कल्यान। रोगी सोगी की होवे पहचान।।
दुखी दलिद्री का होवे उपाये। सत समाज जहाँ रही समाये।।
मानुष जनम का नियम धर्म सूझे। जनम मरन के अर्थ को बूझे।।
सतगुन का होवे परगास। सत समाज जहाँ करे बिलास।।
मूढ़ मत ग़ुबार सब जाये। मानुष जीवन की सोझी पाये।।
सो ही देश अत कान्ती धारे। जाँमें नियम सत समाज अपारे।।
परस्पर सब में आवे प्रेम। सत सील परसे चित्त खेम।।
परहित बुद्ध होवे परगास। अधम जीव का होवे दु:ख नास।।
धनी दलिद्री इक थाम समाये। प्रभ की प्रभता तब मन में आये।।
सबके अन्दर सत उद्दम परगासे। सत संगत सतरूप निवासे।।

संगत राजा संगत परजा, संगत करे नियाये।
'मंगत' संगत सत से, सब जग शान्त समाये।।104

मन साधन का सार उपाये। साची करनी चित्त में आये।।
सतपुरषों की संगत सार। जो चित्त आवे सत विचार।।
अनेक जतन से मन समझाई। सतपुरषों का जीवन ध्याई।।
साचा जतन साची पाये कार। सतपुरषों का जो करे विचार।।
साची नीती होवे परगास। हिरदे आवे सत विशवास।।
विशवास पाये सत जतन को धारी। सो गुनिया होवे जयकारी।।
सकल मनोरथ पूरन पाये। सतपुरषों की साधन ध्याये।।
सतपुरषों की साधन जोई। साचा मारग धरम लखोई।।
पाप कूप को भसमत करी। सत साधन जो हिरदे धरी।।
सत विवेक सुनो गुनि मीता। साध की सीख करे पुनीता।।
अनेक जतन जो भी चित्त धारी। जायें अकारथ बिना विचारी।।
मिल सतसंग सत सुनो विचार। मारग पावें परम सुख सार।।
सत संगत सत सूझ लखाई। झूट भरम की मैल गँवाई।।
सत सरूप आवे विशवास। साची संगत करे परगास।।
साची पूजा प्रभ की पायें। साची संगत भेद लखायें।।
मारग मिले सार कल्यान। साची संगत सत सार पछान।।
भरम चक्कर माया की फाँसी। साधन करे तब होये खुलासी।।
अपनी करनी आपे निसतारे। पर आधार नहिं पाये सुखसारे।।
साचा गुर जब मेल मिलाई। साची करनी तब जन पाई।।

करनी बाँधा जीवड़ा, चार खानी भरमाये।
'मंगत' बिन करनी करे, ना कोई भयो सहाये।।105

संग कुसंग को नित विचारो। कुसंग डोबे संग दे निसतारो।।
नीच की संगत नित दुखदाई। बिना अर्थ जीवन डोलाई।।
नीच की संगत पाप को देवे। बल बुद्धी यश को हर लेवे।।

नीच का संग केवल जम रूप। मीत बना के देवे बिख कूप।।
नीच का संग बाद बधावे। बैर बखीली का सबक पढ़ावे।।
नीच का संग पर-हान दिखावे। निन्दया मान चित्त में प्रगटावे।।
नीच का संग सत सिमरत नासे। करम विकार में रहत निवासे।।
नीच का संग सब पत को हरे। अनक भाँत सिर बिपता पड़े।।
नीच का संग छल कपट को देवे। मनमानी हिकमत को सेवे।।
नीच का संग नीच बनावे। कुल जाती को कलंक लगावे।।
नीच का संग राज भय देवे। करनी मलीन ज्यों मन सेवे।।
नीच का संग नरक दिखावे। कूड़ कपट नित धरम कमावे।।
नीच का संग बनावे घाती। वैर बिकार जो अन्तर थापी।।
नीच का संग पुरषारथ को नासे। आलस निन्द्रा तमोगुन वासे।।
नीच का संग अधक दु:ख रूप। सत मारग का तजे सरूप।।
नीच का संग नित जीयो जलावे। पाप कूप में धीर ना आवे।।
नीच का संग अत संकट धारी। तीन लोक में होवे ख़्वारी।।

नीच की संगत जो करे, नीच गती को पाये।
'मंगत' नित विचार के, सतपुरष से प्रीत लगाये।।106

नीच की संगत चंचल मत देवे। धीर धरम सबको हर लेवे।।
नीच की संगत मन कुटल कठोर। दया ग़रीबी दीनी चित्त छोड़।।
नीच की संगत मन अधक अभमानी। विचारहीन भयो सो प्रानी।।
नीच की संगत पाप सुख जापे। संशे धार चित्त अधक सन्तापे।।
भूल कर करिये ना नीच का संग। पाप करम का चढ़े नित रंग।।
संगत जैसी जीव ये राखे। ऐसी रंगत अंतरगत भाखे।।
जो कोई अपना करे सुधार। साची संगत में नित पधार।।
नीच की संगत रूप बेकारी। नशे भोग नित चित्त विचारी।।
अधक संकट अधक संताप। नीच का संग मूल है पाप।।
सत सिखया को अन्तर धारो। तेरा जीवन होये सुधारो।।
सतपुरषों की संगत पेख। सत मारग धरम को लेख।।

सतपुरषों का संग सुखदाई। सुख सरूप हो जाये सिर बिपता आई।।
सतसंग साधन धरम का मूल। मिल सतसंग जावे सब भूल।।
नित नित संग का करो विचार। सत रहनी पावें सत सार।।
पाप करमी का जीवन पाप। पापी संग नित रहे वियाप।।
पाप करमी बेगैरत होये। छल बल अन्तर जीवन खोये।।
बेहयाई और बेइतबारी। पाप करमी की ये कारगुज़ारी।।
अन्तर और बाहरों और दिखलावे। हस्ती दाँत ज्यों भेद रखावे।।
पाप करमी शैतान सरूप। पल पल वचन का पलटे रूप।।

गुरमुख मनुआँ डूबिया, मनमुखियों के साथ।
'मंगत' कहे विचार के, नित सँभल मिलाओ हाथ।।107

पाप करमी का खोजन पाप। सत पुरषों को दे संताप।।
गिरी समान पाप को भोगे। लोक लाज नहिं चित्त में बोधे।।
चण्डाल सरूप तिसका जान। नित नित पाप में रहे ग़लतान।।
गुरू पीर ना सीख सुहाई। अपने समान देखे ना काई।।
सब जग को पाओं तले दबावे। मान धार नष्ट हो जावे।।
दुरयोधन संग भीषम बुद्ध नासी। राजनीति सब भई विनासी।।
जिसकी संगत खोटी होई। पत परताप सो ही जन खोई।।
लाखों जीव भये नादाने। दुष्ट की सीख कई किये दीवाने।।
नीच की सिखया युधिष्ठिर जुआ खेला। किस दुरगती का सिर पड़ा झमेला।।
नीच के संग भये भूप भिखारी। करो विचार गुनी गुनकारी।।
नारी पुत्तर और सखा अधकाई। नीच सुभाओ सबका दुखदाई।।
पाप करमी नारी जो होवे। भरता तिसका सिर अपना खोवे।।
पुत्र कलंकी जिस कुल में होई। पिता पितामा का नाम डबोई।।
नीच सखा जो जन धारी। वाँग दुरयोधन होवे ख़वारी।।
मात पिता जो भी कोई होवे। तिसका पाप परिवार को डबोवे।।
साजन सीख ये ही सुखकारी। नीच पुरष का संग दुख सारी।।
धनी दलिद्री इक पल में होवे। पाप करमी संग प्रीत जो लोवे।।

अपना जीवन जो सुखिया चाहे। नीच की संगत न भूल के जाये।।
साचा साधन ये सुखकारी। पल पल प्रीत गुरमुख विचारी।।

तीन काल सुख तिसको, जो सतसंग में रखे प्यार।
'मंगत' ये सत साधना, जो साधे पाये उद्धार ।।108

परम विचार ये नित्त विचारो। साची संगत मिले सुखकारो।।
सो गुनवंता सुगुड़ सयाना। संग कुसंग जिस करी पहचाना।।
संगत का तेज अती बलकारी। जैसी संगत ऐसो रूप विचारी।।
जो कोई अपनी सोभा चाहे। सतपुरषों संग प्रीत लगाये।।
जो कोई साचा सुख विचारे। गुनी पुरष की सिखया धारे।।
जो कोई जीवन बंध को नासे। सत साधू संग कीजो वासे।।
जो कोई मन के दोष निवारे। सतपुरषों की कथा विचारे।।
जो कोई सत सरूप को खोजे। सतगुर पूरे का निरना बूझे।।
जो कोई सदा आरोगत माँगे। भ्रष्टकारी के संग से लाँगे।।
देव सरूप जो जीवन लोचे। सतकरम मिल सतसंग सोचे।।
जो कोई माँगे अधिक धनवंता। सत ब्यौहार की पढ़ियो संथा।।
जो कोई नित का जीवन बाँछे। मिल सतसंग सत कीरत राँछे।।
जो कोई माँगे सुखिया परिवार। नीच पुरष संग तजे विकार।।
जो कोई ऊँच गती को चेते। सत संगत में धरे परतीते।।
जो कोई अपना शत्रू मिटावे। सतपुरषों की सिखया ध्यावे।।
जो कोई जीवन आनन्द खोजे। साचा मारग धरम का बोधे।।
जो कोई मन की शांत पहचाने। साचा करम मन अन्तर ठाने।।
सरब सुख इक छिन में पाये। साची प्रीत हरि चरन लगाये।।
बचन अमोलक हिरदे धारो। साची संगत सतनाम विचारो।।

आवागवन के चक्कर से, सो नर पावें छूट।
'मंगत' मिल सतसंग में, जो नाम अमीरस लूट।।109

बुद्ध उज्जल मन शांत निवासे। सत बानी हिरदे परगासे।।
करम कुकरम का मिले विचार। नित सतसंग में धरो पियार।।
मिल आनन्द विनासे खेद। सतसंग महमा परसें वेद।।
पूरन साधन तब ही होई। दृढ़ निश्चय गुरु चरन परोई।।
अदृष्ट वस्तु का देखन पावे। सतगुर वचन जो हिरदे लावे।।
सकल विकार से जीवन छूटे। सतगुर कहनी रसना रस लूटे।।
पूरन मनुआँ मनोरथ पूर। मिल सतसंग जप नाम हज़ूर।।
बादमुबाद संकट सब जाये। साची संगत की सेव कमाये।।
सबसे ऊँच धाम निवासी। सतसंग प्रीत जिस मन परगासी।।
खल बुद्धी भ्रष्ट करम निवारी। सतसरूप महमा विचारी।।
तीरथ बरत और पुन्न दाना। अतुल परताप सतसंग पहचाना।।
अपना जीवन करो बलहारी। सरनागत हो गुर उपकारी।।
साचा बचन धारो नित अन्तर। आरूढ़ ज्ञान गुप्त जप मन्तर।।
सरब आधार पायें प्रभ एका। मिल सतसंग सत सुनो विवेका।।
कपट त्याग सत मारग भाल। साचा धरम हिरदे में घाल।।
तिसके ऊपर नहीं विचार। मिल सतसंग पावें उद्धार।।
रल मिल संगत सोध विचार। साची करनी हिरदे में धार।।
संगत साची महमा अधकाई। संगत चरन कृष्ण धुलाई।।
संगत साची हेत जो राखी। साचे धरम की परसे साखी।।

साची संगत प्रभ रूप है, नित प्रभ का करें विचार।
'मंगत' संगत दरस से, नित हूँ नित बलहार।।110

अधिक संकट जीव का जाये। सत साधू का दरशन पाये।।
साध की संगत हर चरनी मेला। साध की संगत प्रभ मिले सुखेला।।
साध की संगत कपट छल जाये। दीन ग़रीबी चित्त अन्तर आये।।
साध की संगत भरम निवारे। एक सरूप का लेख लखारे।।
साध की संगत सरब सुख दाती। दृढ़ निश्चय आवे प्रभ साखी।।

साध की संगत नित कल्याना। सत्तसरूप आवे पहचाना।।
साध की संगत धीरज देवे। पाप कूप से निविरत लेवे।।
साध की संगत सभी मनायें। सिद्ध तपीश्वर अवतार जस गायें।।
साध की संगत नीती परगासे। अनुभव रूप अन्तरगत भासे।।
साध की संगत मनसा पूरी। साची करनी फल मिले हज़ूरी।।
साध की संगत परमारथ सिखलाये। मन बच करम शुद्ध जीवन पाये।।
साध की संगत प्रेम चिंगारी। गत को पावें कई अनाड़ी।।
साध की संगत जुगत अनेक। जो जो बूझे पावे सत टेक।।
साध की संगत पाये सब निरना। आवन जावन जरा और मरना।।
साध की संगत अनोखी धार। सत परमेश्वर मिथ्या संसार।।
साध की संगत जीवन न्यारा। अखण्ड सरूप संग हेत विचारा।।
साध की संगत मन तृपतावे। अभोग सरूप परमेश्वर ध्यावे।।
साध की संगत सब सुखरासी। निरना पाये तत्त अबनाशी।।
साध की संगत कोई गुरमुख पाये। मनमुख भरम की आग बुझाये।।

सत साधू के संग से, सत आई परतीत।
'मंगत' साधन सत किया, गई कलपना चीत।।111

उठ्ठत बैठत करो विचार। भवजल दुस्तर वार नहिं पार।।
किस करनी में मूढ़ लिपटाया। अपने जीवन का सार नहिं पाया।।
कौन तेरो तूँ किसका होई। भरम बिकार क्यों चित्त में जोई।।
अधक सयाना जो तू होई। अन्त सियानफ़ चले ना कोई।।
तजो विकार सत संगत पेखो। अपनी करनी निरमल कर देखो।।
झूट विकार से मुकत ना होई। जब सतनाम ना हिये परोई।।
साहब विसार क्यों हुआ अंजाना। अन्त की बारी नर बहु पछताना।।
शरीर चाम ये राख समाई। जीवत में कुछ करो कमाई।।
साचा ठाकर घट अन्तर थीया। मिल सतसंग निज भेद को लीया।।
सत विचार ये सुख की खानी। सत की कथा मनसा तृपतानी।।
सत का जीवन परम आधार। सत को खोजे तिसकी जयकार।।

प्रीतम प्रेम जो पीवे गम्भीर। आवागवन जाये तकसीर।।
साची बन्दगी का लेख विचार। माल मुलक सब दु:ख की सार।।
नित ही साचा भेख पहचान। सतसरूप का कथो निधान।।
बारमबार ये चिन्ता राख। अचिन्त सरूप शबद को चाख।।
सत करम में जीवन ढाल। तब पद सूझे दीनदयाल।।
सतपुरषों ने लेख लखाया। अबगत नाम सिमर सुख पाया।।
करो पुरषारथ ये निरमल रीता। साची संगत से रखो परीता।।
मन बच करम नित सेव कमाओ। संगत सेवा धरम अधकाओ।।

सतकरम की साधना, सतसंग से मिले विचार।
'मंगत' राखे जतन जो, पावे प्रभ भगती तत्त सार।।112

सत्विचार

सत विचार मन माहीं विचारो। शान्त सरूप का पायें पारो।।
बिना विचार नर पशू समान। मान मद धार नित रहे ग़लतान।।
बिना विचार नर नित डोलाये। धरम करम की सूझ नहिं पाये।।
बिना विचार मन नित दुखदाई। करम करूर में नित प्रीत बढ़ाई।।
बिना विचार नर अत दुख पावे। प्रभ की माया बहु नाच नचावे।।
बिना विचार नर पद पद दुःख पाई। करम विलक्खन नित देवें सज़ाई।।
बिना विचार नर नित भरमाये। अगन तृषना कीजे नित घाये।।
लोक परलोक सब दुःख का सरूप। बिना विचार नर सहवे जम कूप।।
बिना विचार नर जुगत ना पाये। सागर माहीं प्यासा रहाये।।
बिना विचार नर होवे ना ढोई। बिपता सरूप सिर रहे खिलोई।।
बिना विचार दीन दुनी बिगाड़ी। किये अत पाप लई जग धृगकारी।।
बिना विचार नर बिख अगन में जलता। मान मद धार अपने दाओ में चलता।।
बिना विचार सुख रंचक ना पायो। अत कुपथ माहीं जनम गँवायो।।
बिना विचार नहिं मिटे संदेशा। गृहस्थी विरक्ती नित धारें कलेशा।।
बिना विचार नर उज्जड़ पाये। मानक काँच के भाओ बिकाये।।
बिना विचार नर भटके दिन रैन। करे उपद्रव नहिं पावे सुख चैन।।
बिना विचार कोई साथ ना होई। मूढ़मती अपनी गहरे नीर डुबोई।।
बिना विचार कोई मारग ना सूझे। वैर विकार मद मान में लूझे।।
बिना विचार कैसे बन्धन टूटे। दुस्तर माया से कह बिध छूटे।।
बिना विचार भाओ भगत नहिं पाये। सत कुसत का नहिं भेद लखाये।।
बिना विचार नित जीवन काढ़ी। पर का दोख नित चित्त विचारी।।
बिना विचार नहिं सत तत्त सूझी। पाप बुद्धी नित पाप को खोजी।।
बिना विचार नहिं पाये सुख सारा। क्रोध बिकराल नित करे अँगारा।।
बिना विचार जनम अकारथ जाये। जम दरबार मिले घनी सज़ाये।।

बिना विचार ना पाइये, जनम मरन की सार।
'मंगत' मानुष परधान सो, जिसका शुद्ध विचार।।113

बिना पछान मन प्रीत ना पाए। आदि काल से ये मन का सुभाये।।
पूरन वस्तू की जब पावे मतिया। ग्रहन त्याग की परसे गतिया।।
जब तक मन में नहीं विचार। कभू न पावे सत मारग सार।।
धरम सरूप नहिं मन में जानी। कैसे सोधे ये मन अज्ञानी।।
सत करम नहिं निरना चीत। कैसे होवे सत करम परीत।।
जीवन मरन नहिं पाया विचार। कैसे पावे तत्त ज्ञान अधार।।
सुख दु:ख का नहिं लेख पछाना। सुकृत मारग कैसे चले नादाना।।
जिस वस्तू का ज्ञान ना होई। मन नहिं तिस सिमरत परोई।।
विद्याहीन नहिं मन विचार। कैसे परसे आनन्द करतार।।
शुद्ध बुद्धी धार विवेक। तब मन पकड़े यथारथ लेख।।
सरब धरम की ये ही सार। हिरदे आवे सत विचार।।
सब साधन का ये फल मीत। निश्चय पावे प्रभ चरन पुनीत।।
सबसे उत्तम ये ही गत जान। सत असत की मिले पछान।।
वेद ग्रन्थ पढ़न की ये सार। साची प्रीत आवे निरंकार।।
सतपुरखा ये रमज़ आपार। केवल प्रीती सतनाम विचार।।
सिमरो नाम मन एक परीत। घट में पावे आनन्द सुखरीत।।
जब लग जीवन जग में रहाई। नित सुधारो ये मन दुखदाई।।
जब लग साँस की धारा जारी। सत करम नित लियो विचारी।।
जब लग धरनी पर उठके चाले। अपने छूटन का राह सम्भाले।।
जब लग देह में बल रहे समाई। पर की सेव लियो करम कमाई।।
जब लग इन्द्री विचार लखाई। साचा ठाकर सिमरो सुखदाई।।
जब लग जम नहिं गरसे काया। साचा नाम नित लियो धियाया।।
जब लग हंस नहिं छाड़ शरीर। भज करतार परम सुखसीर।।
समय गँवाये फिर बने कछु नाहीं। जो करना कर जीवन माहीं।।

जीवन में जो कुछ किया, सो ही जीव की रास।
'मंगत' पाछे के यतन से, नहिं कटे जीव की फाँस।।114

जिस जन नहीं कछु कियो विचारा। पाप करम में नित वरतारा।।
ना सत करनी का भेद लखाया। ना जनम मरन का लेख लख पाया।।
ना सत धरम की सूझ विचारी। स्वारथ में नित पाये पसारी।।
ना सतपुरषों की सीख लखाई। मारग शान्त नहिं मिले आगाई।।
प्रभ चरनी नहिं आवे विशवासा। पाप कुपथ में ले निवासा।।
पशू समान जनम बिताई। सत ठाकर की नहिं पाई सरनाई।।
भरम में जनमे भरम में मरे। भरम की फाँसी अधिक चित्त पड़े।।
आठ पहर रहे जीव पियासा। पलक पलक पाये काल की त्रासा।।
सत बुद्धी नहिं अन्तर धारी। अपने आप की करी खवारी।।
मोह भरम में नित भरमाई। हीरा जनम अकारथ जाई।।
मनमानी नित अपनी धारी। अपने मनोरथ का लेख विचारी।।
अत लोभ मोह और विकार समाया। दुष्ट करम पल पल कमाया।।
अत संकट में नित भरमाई। अपनी करनी देवे सज़ाई।।
इन्द्री भोग में अत गरासा। जीवन की धारी बहु आसा।।
लोक कुटम्ब के मोह फँसाया। साचा नाम नहिं हिरदे गाया।।
ओड़क जग से चले पियासा। बारमबार सहवे जम त्रासा।।
जग आवन का भेद नहिं जानी। मूढ़मती में रह्यो ग़लतानी।।
स्वारथ धार बहु पाप कमाई। परनिंदिया परहान लखाई।।
ओड़क काल ने फाँसी डाली। मूरख जीव चले उठ खाली।।

पाप करम बहु बिध कियो, अत ही लोभ को धार।
'मंगत' सखा ना कोउ भयो, अन्त चलन की बार।।115

मूरख अनमत नित भरमाई। बिना विचार नहिं सार को पाई।।
झूट माया के भरम भुलाया। सत ठाकर नहिं हिरदे ध्याया।।
सतपुरुषों की सार नहिं जानी। मूढ़मती में रह्यो ग़लतानी।।

सत धरम नहिं सोझी पाई। बहुरंग पाप की प्रीत कमाई।।
परहित पर उपकार नहिं जानी। स्वारथ से करे दूजे की हानी।।
भरम गुबार अत बढ़ता जाई। तृषना अगन नित नित जलाई।।
जीवत में सब भये बेगाने। जरा अवस्था के जब आयो ठिकाने।।
सब कुटम्बी देवें धृगकार। ना कोई सीख ना सुने विचार।।
अत ही त्रास इस जीव ने पाई। स्वारथ के सब भये अशनाई।।
ओड़क जग से चले निरासा। अत संकट में लीयो बासा।।
मूढ़मती ने ये फल दिखलाया। रोवत आवे रोवत जाया।।
ताँ सों गुनिया करो विचार। मारग धरम लखो सुख सार।।
सतपुरषों की कहनी मान। सतपुरषों की करनी जान।।
मन में उद्दम धार विशेख। सत रहनी का पावें लेख।।
इक परमेश्वर की ओट पछान। जो कारन करता सकल जहान।।
सरजनहार तेरा सुखरासी। निरमल चित्त से हो विशवासी।।
सतपुरषों की सीख ये धार। मिथ्या जगत में खाटो सार।।
स्वारथ बुद्ध तजो अज्ञान। परमारथ तत्त खोज निरवान।।
अपने मन का भरम मिटाओ। जग आवन का लाभ कमाओ।।

मनमुखता को त्याग कर, गुरमुख मारग खोज।
'मंगत' मिथ्या जगत में, खाट जनम की मौज।।116

मोह माया का जाल अधकाई। शबद सार नहिं मन में आई।।
तुच्छ जीवन में प्रीत विचारी। करम क्रूर हिरदे में धारी।।
विषे विकार में बुद्ध भरमानी। देख माया भयो मूढ़ अज्ञानी।।
असत वस्तु को सत कर माने। विख को तुल अमरत की जाने।।
काल रूप सरीर को धारी। तिसमें जीवन आस विचारी।।
सत सरूप कह बिध परगासे। छल कपट माहीं नित निवासे।।
अपने पाप की ख़बर न कोई। पर की निन्दा चित्त माईं परोई।।
आप ना सोधे औराँ उपदेशे। कपट को धार नहिं जाएँ संदेशे।।
सरजनहार घट रह्या समाई। मनमुख मूढ़ा बाहर उठ धाई।।

सत सम्पत हरिनाम विसारी। विख माया दुःख जाल पसारी।।
सत स्वामी नहीं मन ध्यायो। नाती संग बहु साथ बनायो।।
मन जो दुःख देवे अपारी। पल पल तिसके भोग विचारी।।
नाशवान से करे परीती। तज अबनाशी सब भई अनीती।।
अपनी करनी का फल पायो। तीन ताप में नित जलायो।।
जो कुछ किया सो ही दुखकारी। कौन छुड़ावे जम संकट भारी।।

करम विलक्खन नित करे, मन बहु चतराई राख।
'मंगत' मनमुख जीवड़ा, अन्त नरक दर भाख।।117

नित ही नित कर गुनी विचार। क्या मरे क्या जीवन सार।।
क्या उतपत क्या परलय होई। कहाँ से आवे कहाँ जाए बसोई।।
कौन मित्तर जो नित संगबासी। कौन ज्ञान जो कटे चौरासी।।
एह विचार करो अत सुखदाई। कह बिध मनुआँ शान्त समाई।।
सुख के कारन बहु जतन विचारी। माल मुलक सम्पत बहु धारी।।
सुत दारा नाती परवारा। रैन दिन करे जतन बहु भारा।।
उठ उठ धाए मन अंधकारी। ठौर ना पावे बिन सत विचारी।।
सच वक्खर जिस वनज करीना। गुर परसाद शान्त परखीना।।
संसा त्याग राख विशवासा। सत करतार जल थल निवासा।।
ग़रब गुमान दूषना त्यागो। मिल सतसंग सत पद में जागो।।
छिन छिन काल रह्या विताई। सत तत्त खोज लाभ जग पाई।।
अन्तर वसया सो परमानन्दा। नित ही सिमर जाए जमफंदा।।
परम कलेश में जीव रहाई। सरूप विसार परम दुख पाई।।
अबनाशी पुरख को दिया बिसराई। झूट माया संग रहे लपटाई।।
चले निहथावाँ अन्त की बारी। सम्पत तजी माल परवारी।।

आसा माहीं जनमिया, आसा में मर जाए।
'मंगत' घने कलेश में, नित नित प्यासा रहाए।।118

काल करम का जाल अपारा। जतन करे ना होवे छुटकारा।।
नैनों देखत सब जग जाए। मूढ़े मन को नहीं शान्त आए।।
सब कुछ देखे होए बेगाना। मोहवस होयके नित दु:ख ठाना।।
अदभुत माया अन्तरगत धारी। तीन काल करे करम बकारी।।
मरन विसार किए बहु पापा। ज़ोरज़ुलम को अन्तर थापा।।
अपने आप का बनया घाती। चले निमाना उठ परभाती।।
कुछ तो जीवन करो विचार। क्यों नर आया विच संसार।।
कौन सखा तेरा संग सुहेला। क्यों भरमें जग देखके मेला।।
कोई आवे कोई जावन जाई। वाह वाह रचना साहब रचाई।।
सत पुरषारथ कर गुनि मीता। नित सत सिमर तू होवें पुनीता।।
चौधाँ लोक में वस्त ना कोए। जो इस मन में शान्त परोए।।
मात पिता पुत्तर और धीया। अपने सुख के बने सनेहा।।
मूरख होके क्यों जनम गँवाई। राम विसार नित जिया जलाई।।
सब गुनियों ने कियो बखाना। जप प्रभ नाम मिटे दु:ख नाना।।
वेद ग्रन्थ करें विचारी। भज दीनदयाल परम सुखकारी।।

जग आवन में लाभ है, सतनाम चित्त आए।
'मंगत' बिन प्रभ सिमरने, तीन काल दु:ख पाए।।119

सत्विश्वास

सत विशवास हिरदे में राखो। सतनाम की रसना चाखो।।
बिन विशवास नर पशू समाना। छिनभंगुर में नित ललचाना।।
सरव धरम की सत सार पहचानो। दृढ़ विशवास कर जप भगवानो।।
यज्ञ दान तीरथ बहु जतना। बिन विशवास मिले नहिं रतना।।
हिकमत हुनर बहुती तदबीर। बिन विशवास रहे दिलगीर।।
सब करनी तब पूरन होवे। दृढ़ विशवास मन अन्तर जोवे।।
शास्त्र सिमरत का सुफल विचारी। दृढ़ विशवास चित्त चरन मुरारी।।
मानुष जनम पूरन फल देवे। दृढ़ विशवास सत करम को सेवे।।
कथनी बहुती नहिं करे कल्याना। भाँत भाँत इतिहास बखाना।।
विद्या गरब में आवे जावे। सत धरम की सार ना पावे।।
कथनी कथ कथ मरे दिन राती। रंचक रहनी नहिं मन समाती।।
थोथे पण्डत नहिं सार को जानी। विद्या मान ये गवन निशानी।।
पूरन विद्या का पूरन फल ये ही। आवे विशवास प्रभ चरन सनेही।।
भय भरम सब संकट नासी। सत विशवास जब चित्त परगासी।।
जाँ के मन आयो विशवासा। गुरु की सीख में लियो निवासा।।
सरब जतन तब पूरन फल देवे। दृढ़ विशवास सत चरन को सेवे।।
नाना इतिहास में बुद्ध भरमाई। लख विशवास की कथा अगाई।।
बिन विशवास नर पशू सरूप। छल बल करे धारे संशे कूप।।
सत संगत की रसना गाओ। सत विशवास तब हिरदे पाओ।।

सकल जगत की सम्पता, तब ही पूरन होये।
'मंगत' दृढ़ विशवास से, सत करनी चित्त जोये।।120

होवे रंक छतर सिर धारी। जब विशवास मन माहीं विचारी।।
खल बुद्धी नर होये बुद्धिमाना। दृढ़ विशवास जिस रतन पहचाना।।
मोह बिकारी मुकत रस पाये। सत विशवास जब हिरदे में आये।।

अचरज शकत साहब प्रगटाई। बीच विशवास सब कला चलाई।।
जैसा मन आवे विशवासा। ऐसो रूप हिरदे परगासा।।
जैसा रूप चित्त कलपत करी। मोहबस होये जतन तब धरी।।
अनक जतन मन अंतर राखी। भाँत भाँत करम को भाखी।।
इक दिन करनी पूरन फल देवे। पूर मनोरथ जीव सुख लेवे।।
सकल चकर विशवास आधारी। सत विशवास कोई गुनी विचारी।।
माया मोहबस करे विकारा। करम विलक्खण विशवास विचारा।।
मंद निश्चय मंद ही फल देवे। आवागवन नित्यानित सेवे।।
मानुष जनम की सुन वडियाई। मंद विशवास भरम सब जाई।।
सत विशवास नित नित विचारे। सतपुरषों का जीवन धारे।।
अन्ध गुबार से मन को ठाके। मिल सतसंग सत रसना चाखे।।
विशवास धार साहब दरसावे। चिन्ह वरन से जो अलेप रहावे।।
सत सिखया जब दृढ़ कर मानी। अनुभव परगास साहब पहचानी।।
नित नित राखो ये ही जतना। आवे विशवास सब मिटे कलपना।।
सबसे ऊँच विशवास गियाई। अमर सरूप विशवास से पाई।।
जुग जुग कथा बखानत होई। दृढ़ विशवास का जीवन जोई।।

शोभा अपरम अपार है, जिस पायो सत विशवास।
'मंगत' जीवन अमर भयो, निरभय धाम निवास।।121

पूरन पुरख सो ही गुनवन्ता। एक टेक राखे भगवंता।।
जिस मन अन्दर विशवास प्रभ आया। कलह कलेश सब भरम मिटाया।।
सतपुरषों की सीख मन मानो। दृढ़ विशवास हरि चरन पहचानो।।
ये ही जतन परम सुखकारा। आवागवन से देवे निसतारा।।
दृढ़ विशवास जिस सेव कमाई। जुग जुग अटल तिसकी प्रभताई।।
दृढ़ निश्चय से सब दूषना टारी। परम आनन्द चित प्रीत विचारी।।
दृढ़ निश्चय से प्रभ पल दरसायो। जुगाजुगन्तर सब कठन मिटायो।।
दृढ़ निश्चय से भयो ऊँच परतापी। सत करनी को नित्यानित जापी।।

दृढ़ निश्चय से पिंगू गिरी को लाँघे। कायर पुरष असुरों को बाँधे।।
दृढ़ निश्चय से जन होये ततवेता। समदृष्ट सुख लखे अलेखा।।
दृढ़ निश्चय से नीच राज को पावे। सकल हकूमत विचार चित आवे।।
दृढ़ निश्चय से मन सतपद पाई। अगम सरूप प्रभ कला दिखाई।।
दृढ़ निश्चय से मन पराक्रम धारी। सब शत्रुओं पर जीत विचारी।।
दृढ़ निश्चय से अंधा वेद परगासे। अंतरदृष्ट से सब सार को भासे।।
दृढ़ निश्चय से बल तेज सब पाई। पाप कूप पर विजे लखाई।।
दृढ़ निश्चय से साधन सब पूरी। सकल यतन की पाये मज़दूरी।।
दृढ़ निश्चय से जीव भ्रम जाये। अखण्ड सरूप निज रूप लखाये।।
दृढ़ निश्चय से तत रूप समाई। निहकरम जोत आतम दरसाई।।
दृढ़ निश्चय सब गुनियों की रास। काल त्याग पद परसें अबनास।।

निश्चय रूप ये धरम है, सबका जीवन सार।
'मंगत' निश्चयहीन जो, सो ही पशू विचार।।122

सतसरूप पाओ विशवासा। करम जाल होये भ्रम नासा।।
बिन विशवास नहिं प्रीती पाये। बिना प्रीत नहिं सेव चित्त आये।।
बिना सेव नहिं निरमल होये। जनम जनम के जो पाप लखोये।।
सकल धरम की सार ये जान। आवे विशवास प्रभ चरन निधान।।
सकल जतन तब मुकत समाये। भयो विशवास प्रभ चरन धियाये।।
आवागवन का जाल उतारी। भयो विशवास प्रभ पारमुरारी।।
मन का चलन सुभाओ जान। जब बिशवास जतन बखान।।
मिथ्या माया से पाये खुलासी। आवे विशवास केवल अबनासी।।
काल कलपना सकली जाये। सत विशवास जो अन्तर पाये।।
हरख शोक मन वेग विनासी। निर्मल प्रीत प्रभ चरन परगासी।।
सकल ज्ञान की पाई सार। कारन करता जाना करतार।।
सकले बन्धन बिपत निवारी। आनन्दसरूप की शोभा जब धारी।।
देह का मान तब नास हो जाई। जब देह का करता हिरदे ध्याई।।

सकली शक्ती मन भरमन नासी। सत सरूप का होये विशवासी।।
कोटाँ कोट जीव फिराने। प्रभ विशवास कोई विरला जाने।।
मिथ्या जगत जब मन से देखा। सत विशवास का पाया विवेका।।
दु:ख सरूप जग जीवन जानी। सत विशवास पाये सो ज्ञानी।।
भरम सरूप जब रचना देखी। निरमल विशवास पायो अलेखी।।
द्वन्द विकार जब बंध पछानी। निरबंध सरूप की खोज लखानी।।
आवन जावन जग जीवन देखा। भयो विशवास प्रभ चरन अलेखा।।
छिनकारी मन मिथ्या चतुराई। तिनको त्यागे तब प्रेम प्रभ पाई।।
सो ही गुनी परम गुनवन्त। पायो विशवास चरन भगवन्त।।
सो ही जीव परमगत पाये। सत विशवास प्रभ चरन धियाये।।
सकली बिपता जब जीव की नासे। दृढ़ विशवास प्रभ चरन उपासे।।

आनन्द को तब पाइये, जब आवे सत विशवास।
'मंगत' जनम जनम की भरमना, पल में होये खुलास।।123

अगन सरीखा जग का ताओ। लख चौरासी दु:ख में भरमाओ।।
उठ उठ धायें करें विकार। भवजल सूझे नहिं वारापार।।
अनक भरम में नित भरमाई। पल पल डोले धार चतुराई।।
मोह माया का भयो मदमाती। मूढ़पना धर बने निज घाती।।
वस्तू अनेक संचित कीनी। नहिं धीर परापत अन्धमत चीनी।।
धार कुबुद्ध नित औगन कीजे। अती भयानक सिर बिपता लीजे।।
ना भ्रम जाये ना जीव सुख पाई। जनम अनेक जीव ऐसे विताई।।
अगनी खाये अगन परगासे। पल पल छार में लीजे बासे।।
'मैं' 'मेरी' सयानफ़ धारी। ग़रब गुबार अगन ये भारी।।
सतगुर मेल जब सोझी पाई। मिले विशवास परम सुखदाई।।
पाप भयंकर जीव के नासे। एक भरोसा मन पाये अबनासे।।
झूट विकार बन्धन तब नासी। भयो विशवास प्रभ चरन सुखरासी।।
ज्यों नदी का वेग नहिं बाँधा जाई। ऐसे मन की जानो प्रभताई।।

नीर तुरंग ज्यों गिनत नहिं आवे। ऐसे संशे में मन भरमावे।।
पवन सरूप ज्यों नित झुलारी। ऐसे चंचल मन विरती धारी।।
अतिअत कठिन मन की धारा। जनम जनम का पाप संचारा।।
ऐसे दुष्ट से नहिं मिले खुलासी। अन्धमत जिया नित अन्ध भरवासी।।
मन के मते में मगन रहाई। एक पलक की चैन ना पाई।।
नित जीवन को घायल कीजे। सोई सयाना भेद ये लीजे।।
सत विशवास का बंध लगाई। मन चंचल को नित फँसाई।।
पल पल कीजो सत विचारा। निरमल टेक साचे करतारा।।
दृढ़ निश्चय नित राखो सत स्वामी। चंचल मन तब लेवे बिसरामी।।
मन को थामन का ये ही उपाये। प्रभ के चरन चित्त टेक समाये।।
सत भरवासा राखो मन मेरे। प्रभ की शरन में सुख घनेरे।।

एक निश्चय प्रभ चरन में, जब मन आन समाये।
'मंगत' जाये सब दूषना, जनम मरन दु:खदाये।।124

प्रभ विशवास सत शान्त परगासे। कोट विगन इक पल में नासे।।
शरधा सेवा प्रेम चित आए। विरह वैराग में वास कराये।।
सत सील संतोष घर वासा। ज्ञान विज्ञान सुख सहज निवासा।।
निष्काम विरत निर्मान सुभाओ। पर-उपकार मन उपजे चाओ।।
गुन अनन्त प्रभ प्रीत से पाए। नित आनन्द जीव मंगल गाये।।
उट्ठत बैठत रख भरवासा। सच ठाकर के चरनी निवासा।।
बारमबार तिस सेव पछान। जिसने कीया सकल जहान।।
बारमबार तिस नाम धियाओ। अजर अमर जो नित समाओ।।
बारमबार मन को समझाओ। साची प्रीत प्रभ चरन कमाओ।।
मिथ्या विकार ना सहजे जाई। जतन किये ते रतन प्रभ पाई।।
मन दुस्तर की वाट लखाओ। फिर समाँ ऐसा ना पाओ।।
इक विशवास चित्त चरनी धार। कोट विगन से पावें जयकार।।
निर्मल रीती जग में चली आई। सत परमेश्वर की टेक सुखदाई।।

जिस जन सत विशवास चित्त पायो। सच वक्खर तिस वनज करायो।।
परकिरत विकार ना गिनने आई। तिसका मोह अधिक दुखदाई।।
छिन छिन काया रूप वटाये। मोहवश होए जीव ललचाये।।
बालू की भीत धुयें का अम्बार। चाम नाड़ी का देह मंजार।।
दुरगन्ध अंतर पूरन भरिया। अज्ञान धार ये जीव पसरिया।।
दुरगन्ध भोग में नित ललचाई। नित पियासा भरम को पाई।।
अदभुत खेल ना कथने आई। छाया की प्रीत में अंध लिपटाई।।
सत सरूप पाओ विशवासा। दुरगम फाँस की होए विनासा।।
ज्यों ज्यों सत परीती आए। असत विकार भरम मल जाए।।
नित परकाश पुरख अबनासी। सत विशवास से घट में भासी।।
देह पिण्ड का धरता सोई। शुद्ध सरूप मन माहीं परोई।।

सत मारग की खोज बिन, जीव भरम नहिं जाये।
'मंगत' मोह विकार में, नहिं पलक शांत चित्त आये।।125

छिन तापे छिन ठाँड विचारी। हरख शोक की लगी चिंगारी।।
धावन धावे दिन और राती। नाना यतन मन अन्तर थापी।।
अन्धबुद्धी विशवास से हीना। कैह बिध दुरमत मल होये छीना।।
अधिक ताप पल पल बढ़ जाई। जतन अकारथ सकल रहाई।।
अतिअत दु:ख में जान नित घेरी। चार कुण्ट उठ लावे फेरी।।
ना कोई थाओं ना दिशा दिखाई। जाँ से रोग जीव का जाई।।
जिस सुख की मन में परतीत। सो सुख तो भया दु:ख की रीत।।
जिस मित्तर संग हेत अधिकाई। वोह तो अपने सुख का भाई।।
जिसको अपनी करके मानी। देखत में सब भई बेगानी।।
भरम फाँस में भयो लाचार। बिन विशवास नहिं पावे पार।।
उठ गुनियाँ ये लेख विचार। सत वस्तू का निरना धार।।
सरब विगन से जो रहे अतीत। तीन काल आनन्द सुखरीत।।
अपने आप में सरब गत पूरी। अपरम अपार भज रूप हजूरी।।

सकले भरम तेरे उठ जायें। निह्चल चित्त इक पलक धियायें।।
आद जुगादी पुरख विधाता। तिसकी सेव आनन्द सुखदाता।।
घड़ी घड़ी तिसका जस गाओ। कारन करता कर सीस निवाओ।।
सकल सामग्री जो धारनहारा। पलक में खेले बहु खेल नियारा।।
मान त्याग नित सेव पछान। पूरन पुरख देवे कल्यान।।
अत वडियाई प्रभ की मन राख। अत प्रीती तिस नाम की चाख।।
अत जतन नित गुनी विचार। साचा ठाकर पल पल चितार।।
दृढ़ निश्चय तिस नाम संग पाओ। घट घट मंगल आन समाओ।।
परम परसनता प्रभ सिमरन माहीं। दुबधा दुरमत सब लीन समाईं।।
जग आवन ये लाभ विचार। साची सेव सीख करतार।।
करुनाकर मन माहीं धियाओ। सत विशवास परमपद पाओ।।

साच कमाई जगत में, नारायन से हेत।
'मंगत' जिसने घाल करी, तिसकी मिटी विखेप।।126

आनन्द सरूप विशवास का होई। नित सुखरास कलपत सब खोई।।
विशवासी के दर्शन आवे विशवास। दुबधा जाये होवे प्रेम परगास।।
सत सिखया नित गुनी विचारो। सत विशवास तेज को धारो।।
सतगुर साचा दृढ़ विशवासी। सत विचार का नित भरवासी।।
इत उत जगत की रचना विचारी। सत सरूप का निरना धारी।।
सत धरम में नित उठ चाली। रख विशवास हरें करम की जाली।।
तिसकी संगत नित पधारो। तिसके बचन में तन मन वारो।।
दिवस रैन जतन ये ही राखो। सतपुरषों की कथनी चाखो।।
अधक गुबार में मन भरमाई। बिना विचार परम दु:ख पाई।।
क्या गृहस्ती क्या तियागी। बिना विचार अगन घर लागी।।
सत सरूप नहिं दृष्टी आवे। कूड़ चक्कर में नित भरमावे।।
इन्द्री विकार अधिक दुखदाई। सत विशवास कैसे नर पाई।।
एह बिध करो विचार गियानी। साचे सुख की करो पहचानी।।

छिनभंगुर सुख भोग विचारी। अटल सुख सतरूप निरंकारी।।
देह के सुख देह के संग नासे। अन्तकाल चला जीव उदासे।।
अनक सम्पत भोग की कीनी। भयो निरास देही जब छीनी।।
सकले सुख दुःख रूप दिखाये। अन्तकाल जब जम दरसाये।।
अपनी सम्पत भई बेगानी। कूड़ विकार की करो पहचानी।।
ऐसे जनम अनेक विताये। भरम कलेश नहिं जीव का जाये।।

आवन जावन जगत में, क्यों नर निहों लगाये।
'मंगत' सत विचार कर, एह समाँ हाथ नहिं आए।।127

सत विशवास सुख सार निधाना। सत सरूप परसें भगवाना।।
आनन्द जीवन ताँ का होई। दृढ़ विशवास प्रभ नाम परोई।।
आवे जावे मन औगनकारी। पाप कूप में नित वरतारी।।
संशे अनेक तुरंग उपजाये। धार चतुराई बहु करम कमाये।।
बिन विशवास सब निहफल होई। बिपता माहीं सब अवसर खोई।।
सतपुरषों की ना कहनी मानी। सत विचार ना कियो पहचानी।।
मद को धार बहु किये विकारा। अन्तकाल सहवे डण्ड भारा।।
कूड़ भरवास में भयो ग़लताना। छल कपट में फिरे मसताना।।
ना सतसंग में चीत लगायो। ना सत करम का निरना पायो।।
ना जनम मरन का लेख विचारी। पशू समान सब औध गुज़ारी।।
जीवत में ना तृपती पाई। जीवत में ना सेव कमाई।।
जीवत में ना जपा करतारा। चले निरास जब काल पधारा।।
अपने दुःख का ना कियो विचारा। साच सम्पत नहिं धन संचारा।।
साचा मित्तर नहिं कियो पहचाना। कूड़ परिवार में नित ग़लताना।।
असत शरीर का नहिं लेख विचारा। निसदिन भरमें विच कपट विकारा।।
चंडाल सरूप सम जीवन बितायो। अन्तकाल नर बहु पछतायो।।
बाल जवानी जरा विताई। एक पलक की सार नहिं पाई।।
आसा माहीं नहिं ख़बर नर कीनी। किस मारग को अन्त में चीनी।।
अन्धकार में जनम को धारी। अन्धकार में उठ चले बिकारी।।

पाप करम को खाटियो, रुच रुच प्रेम लगाये।
'मंगत' मिरतक काल में, ना कोई भयो सहाये।।128

सत विचार जो नर विचारी। पावे विशवास परम सुखकारी।।
सतगुर पूरन जब मेल मिलाई। तिसकी सीख विशवास दिखलाई।।
अनक मारग में जो फरावे। चतुर बुद्धी बहु लेख लखावे।।
इक दिन सत पर निश्चय पाये। सकल जतन भयो फलदाये।।
नित सतसंग में प्रीत विचारी। आवे विशवास मन सत को धारी।।
अधक संकट बिपता सिर आई। तब विशवास प्रभ चरन लखाई।।
अपना जीवन जब मरन विचारी। सत विशवास का होवे पुजारी।।
अनक शत्रु जब सिर पर धाये। सच ठाकर पर विशवास तब पाये।।
अपनी हिकमत ना चले तदबीर। आवे विशवास एक तकदीर।।
सतगुर साधू जब किरपाधारी। दृढ़ विशवास भयो रूप मुरारी।।
सकल जगत दु:ख रूप जब जानी। तब विशवास की कथा पहचानी।।
शुद्ध विचार शुद्ध करनी जब होवे। सत विशवास तब मन माहीं परोवे।।
सब जीवों का होवे हितकारी। पर दु:ख हरना नित कार विचारी।।
मान गुमाना जब मन का नासी। सत विशवास तब कला परगासी।।
पर का दु:ख जो हिरदे विचारी। अपना सुख जो नित वरतारी।।
दीन दु:खी की सेव कमाये। सत विशवास तब साहब का पाये।।
सब जीवों में एक दिखाई। सबका सुख उपकार कमाई।।
खेम कुशल आनन्द चित होई। सत विशवास की कथा परोई।।
निरमल कीरत सुफल विचारी। सत विशवासी छतर सिर धारी।।

घट घट व्यापक आप प्रभ, सच्चिदानन्द परगास।
'मंगत' तब परगट होवे, जब गुर सीख विशवास।।129

जनम मरन से चाहें खुलासी। सत सरूप का हो विशवासी।।
सत कथा नित सतसंग प्रीती। सतपुरषों की विचारें नीती।।
अपना जीवन नित अन्तर देखे। पाप कूप के नित करे लेखे।।

नित ही मन की तजे कुटलाई। सतपुरषों संग निहों लगाई।।
भाग उदय गुर मेल मिलाये। तिनकी सीख मन तन समाये।।
कूड़ भरमन सकल चित्त नासे। हरजन पाया सत विशवासे।।
मन को एक थाईं लगाया। अनेक भरमन का मूल चुकाया।।
साचा ठाकर सत कर मानी। सत विशवास पायो ज्ञानी।।
अपने पाप को नित निवारी। सत करनी को हिरदे धारी।।
छिन छिन प्रभ की टेक लखाई। नित अरदास चरन कँवल ध्याई।।
उपजी बिरह जब मन के माईं। दृढ़ विशवास तब हरजन पाईं।।
प्रभ की प्रभता जब सत कर मानी। तीन काल रखयक पहचानी।।
आनन्दसरूप जब भेद विचारा। आये विशवास प्रभ चरन आधारा।।
करम चक्कर जग खेल विचारी। ऊँच नीच जो शोभा धारी।।
आवन जावन सब खेल लखाई। चारखानी की सब रचनाई।।
सरब परकाशी आतम तत्त बूझा। भयो विशवास मुकत तत्त सूझा।।
मोह माया दु:ख रूप पछानी। अती कलेश में जीव अज्ञानी।।
निश्चय इक दिन चलें निरासा। काल चक्कर का देख तमाशा।।
सत सरूप की खोज लगाई। पायो विशवास परम सुखदाई।।
मन का डोलन जो काल सरूप। दु:ख में फिरे गुनी मुनि भूप।।
मिथ्या देह छार हो जाई। जिसकी माँगे बहु मान बड़ाई।।
तुच्छ जीवन जग कियो विचारा। पायो विशवास चरन करतारा।।
अपनी शकत से कुछ ना देखे। देह का रोम नहिं बने विशेखे।।
पर आधार देखे रचनाई। आवे विशवास प्रभ की प्रभताई।।

जगत का खेल विचारया, जब निर्मल बुद्ध के साथ।
'मंगत' सब मिथ्या भया, बिना चेतन परगास।।130

एह बिध रखो मन में विशवासा। मीन को जियों नीर पियासा।।
दाम कंगाल ज्यों प्रीत अधकाई। चन्द चकोर ज्यों लेख लखाई।।
चातक ज्यों वरखा जल प्यासा। अनन प्रीत रख प्रभ विशवासा।।

बिन प्रभ तेरा मित्तर ना कोई। बिन प्रभ तेरा कोई ठाम ना होई।।
बिन प्रभ तेरी नहिं बिपता जाये। बिन प्रभ अन्त ना कोई सहाये।।
बिन प्रभ तेरा जीवन नासे। मिरतक देह करे राख बिलासे।।
सुफल विचार हिरदे विचारो। आद अन्त इक साहब आधारो।।
साहब सिमरें पावें परम खुशहाली। जरा मरन जाये काल की जाली।।
प्रभ सेवें तब होवें परधाना। ऊँच गुनों में जीवन बिताना।।
साची भगती की मुकती दासी। भगत परापत मिले अबनासी।।
पूरन सिखया तत्त ज्ञान उपदेशा। आवे विशवास सरब जग ईशा।।
पूरन बल जग विजय दिखलाई। साची प्रीत इक नाम समाई।।
प्रभ विशवासी सब तेज को धारी। राजे राने सब भये भिखारी।।
प्रभ विशवासी अतुल बुद्ध राखे। अनुभव ज्ञान अकथ को भाखे।।
प्रभ विशवासी रहे सबसे न्यारा। एक प्रीत चित्त में करतारा।।
प्रभ विशवासी नित विजे को धारी। अहंग विकार तजे दुखकारी।।
प्रभ विशवासी नित एक पियासा। सत सरूप सिमरे अबनाशा।।
प्रभ विशवासी कोई भेख ना राखे। निरभेख सरूप आतम रस चाखे।।
प्रभ विशवासी सत ओट पहचानी। काल त्याग शबद तत्त जानी।।

पूरन सम्पत जगत में, प्रभ विशवासी पाये।
'मंगत' ताँ के दरस से, सब संकट मिट जाये।।131

प्रभ विशवासी सुख दुःख सम जानी। एक धीरज हो प्रभ चरन समानी।।
प्रभ विशवासी को नित परसन्ता। इच्छया रोग की कीनी हन्ता।।
प्रभ विशवासी सरब दयालू। पर दु:ख हरना मारग भालू।।
प्रभ विशवासी प्रभ कला दिखलाये। अनहोनी गत दियो वरताये।।
प्रभ विशवासी प्रभ प्रेम परगासी। ताँ के दरस प्रभ निश्चय भासी।।
प्रभ विशवासी नित प्रभ को लोचे। सकल विकार अन्तर संकोचे।।
प्रभ विशवासी मुख घनी उदासी। प्रभ दरशन की सुरता प्यासी।।
प्रभ विशवासी प्रभ धाम को पाए। जनम मरन जाँ काल नहिं खाये।।
प्रभ विशवासी आप को बोधे। पाप करम से मन को सोधे।।

प्रभ विशवासी पाखण्ड को खण्डे। सतसरूप नारायन मंडे।।
प्रभ विशवासी नित निरमल ध्यान। आलख सरूप का कथे ज्ञान।।
प्रभ विशवासी होये सरब गियाता। पल पल सिमरे लेख विधाता।।
प्रभ विशवासी सब हिकमत त्यागे। आज्ञा प्रभ में नित उठ जागे।।
प्रभ विशवासी का मनोरथ पूरा। सरब सिद्धी जपे नाम हज़ूरा।।
प्रभ विशवासी सब विद्या का वक्ता। अदभुत ज्ञान आतम को लखता।।
प्रभ विशवासी भयो सरब अजीत। कामना त्यागी सब दु:ख की रीत।।
प्रभ विशवासी का अचरज खेल। छिन गाये छिन करे कुलेल।।
प्रभ विशवासी बंधन से मुकता। नित नित नाम साहब का भुगता।।
प्रभ विशवासी तृपत को पाये। नित आनन्द रस राम ध्याये।।

ऊँची करनी जगत में, चित्त आवे प्रभ विशवास।
'मंगत' पावे परमगत, मन नित आनन्द परगास।।132

मन का स्वरूप एवं शांति

मन की मैल ना जब लग जाए। तब लग ठाकुर ना दरसाए।।
मन को साधन सिद्धता पूरी। मन को धोवन कठिन मज़दूरी।।
मन को बाँधन कारज बहु भारा। मन को जीतन जग जीवन सारा।।
सकली दुरमत मन माहीं परोई। जनम मरन का कारज निज सोई।।
पूरन विद्या का पंडित सोए। मन की सार लखे घट जोए।।
सो ही वैद पूरन का पूरा। मन की व्याधी मिटावे झूरा।।
सकल प्रस्तिश में पूरन तप सोई। मन में आये शान्त समोई।।
मन ही देव दानव बल सूरा। चारखानी मन रूप ज़हूरा।।
मन में पीर पैग़म्बर अवतारा। मन में ज्ञान विज्ञान आचारा।।
मन में योग वैराग सन्यासा। मन में धारें भेख उदासा।।
मन में गृहस्थी कुटुम्ब परवारी। मन में दाता भयो दातारी।।
मन में साकत निन्दक होए। मन में ज्ञानी गुन ज्ञान परोए।।
मन में कायर रन देख के भागे। मन में सूरा रन देख के जागे।।
मन में सतगुर करें उपदेश। मन में सिखया सिख करें परवेश।।
मन में राजा राज विचारी। नाना भांत की सम्पत धारी।।
मन में वापारी करे वापार। चार कुण्ठ में भरमे अंधियार।।
मन में भरोसा नाती सुत दारा। मन में संचय द्रब बहु भारा।।
मन में ज़ोर जुलम कमावे। मन में खिमा ग़रीबी ध्यावे।।
मन में लेना देना विचार। इत उत मन की सकली कार।।
मन में विषय भोग का भुगता। मन में भयो रूप विरक्ता।।
मन में ज्ञानी ज्ञान विचारे। मन में मूरख पाखण्ड लखारे।।
मन में जीवन की आसा राखे। मन में काल की त्रास को भाखे।।
मन में जनमे मन में मरे। मन में नाना रूप को धरे।।
मन में दुखिया मन में सुख ध्याए। सकली भरमन मन रूप दिखाए।।

सब जग मन का खेल है, कर अन्तर माहीं विचार।
'मंगत' जब मन निश्चल हुआ, आपे रूप करतार।।133

अनँक जतन करे गुनी ज्ञानी। ठौर नहिं पावे ये मन अज्ञानी।।
जप तप योग साधन किरया। मन को बाँधन की सब वितरया।।
कठन कठार वेग नित धारे। एक पलक में कई कोस पधारे।।
अतिअत चंचल रूप भयाना। जतन किए से पावे कल्याना।।
शान्त के कारन करे नित जतना। मिटे ना संशा आस कलपना।।
क्या राजा क्या ऊँच गुनवादी। मन की व्याधि सब धरे उपाधी।।
तृप्ती कारन बहु सम्पत धारी। मिले ना तृप्ती मन अधिक बिकारी।।
कूड़ी रचना छिन छिन विचारे। अगन तृषना में नित जले अंगारे।।
लाख उपाए करे दिन राती। मिले ना धीरज इस मन मदमाती।।
तीरथ फिरे बसे बीबान। भांत भांत करे पुन्न दान।।
वेद ग्रन्थ इतिहास बिचारे। नेम धरम बहु भांत लखारे।।
कठिन तपस्या धरे बानपरस्थी। मिले ना ठौर बिन सतगुर जुगती।।
अनक तुरंग ये मन नित धारे। वाँग भूत बहु खेल खिलारे।।
छिन धीर छिन भए अधीरा। अजब लीला मन धरे बेपीरा।।
जनम काल से मिरतक तक मीता। सकले जतन मन की सुखरीता।।
एह मन वैरी जम रूप पछानो। नित ही जिया तिस संग दुःख ठानो।।
करो उपाए राख चित्त जतन। मन को बाँधे पावे प्रभ रतन।।
मारग ज्ञान से मन परतीते। मन बाँधे सो नर जग जीते।।
मन को जीते पाए सुख आपारा। जिसको कथें वेद आचारा।।
मन का डोलन काल की फाँसी। आवे जावे भरमे चौरासी।।
पूरन ज्ञानी सो ही तत्त बोधे। मन अपने को नित अन्तर सोधे।।
मन में घाले जो साची घाल। सो ही परसे पद दीनदयाल।।
मन अपने की जो दुबधा टारे। सो गुर साचा सब जग निसतारे।।
मन की भरमन सरब दुःख खानी। निहचल मनुआँ पाए अखण्ड सुख ज्ञानी।।

संकट रूप मन कलपना, सब जग भई तरास।
'मंगत' उभरे गुरमुख, जिस मन ज्ञान निवास।।134

मन का भरम सकल संसारा। ज्यों ज्यों कलपे करे विचारा।।
मन का भरम जरा और मरना। करम फल इच्छया में नित विचरना।।
आवागवन सब मन की नीती। आवे जावे करे पलीती।।
तृषना वेग सब मन की कारी। अनक मनोरथ का भए पुजारी।।
मान अपमान सब द्वन्द विकारा। दुरजन मन का सकल पसारा।।
जो इस मन की किरया देखे। मिले बैराग पाये ज्ञान विशेखे।।
जो इस मन की बिपता सोचे। मारग मुकत की किरया लोचे।।
अनक मनोरथ पल पल धारी। अगन भोग में होवे अँगारी।।
छिन में रोवे छिन में हरखाये। भोगे भोग धीर नहिं पाये।।
जनम अनेक ऐसे भरमाई। दुरलभ चोला मानुष पाई।।
दुरमत रोग का करो उपाये। दुर्लभ देह में लियो सार कमाये।।
सत सुकृत ये कथा विचार। सतसरूप खोज निरधार।।
सतपुरषों की सिखया धार। पाप कूप से पावें छुटकार।।
पलक पलक का लेख लखाओ। अपने स्वामी की सेव कमाओ।।
तिसके चरन की राखो प्रीती। सतपुरषों की खोजो नीती।।
बादमुबाद में नहिं जनम गुज़ारो। सत सिखया को हिरदे में धारो।।
पूरन पुरष केवल प्रभ आप। निमख निमख कर तिसका जाप।।
दुरजन मन पर हो असवार। बाज़ी जीत लेवें संसार।।
प्रभ की आज्ञा में निश्चय राख। सत ठाकर की कीरत चाख।।

जनम कदारथ तिसका भयो, जिस पाई प्रभ रास।
'मंगत' अन्तर ध्यान में, पायो शबद परकास।।135

जब एक विशवास साहब पर आया। तब ही जीव सब खेद मिटाया।।
सरब का ठाकर एक प्रभ देखा। द्वैत गुबार गया भरम भुलेखा।।
अपने अन्दर शोभा तिस गाए। मन के मन्दर में जोत जगाए।।

आद अन्त सो रह्या समाई। जुग जुग तिसकी पूरन वडयाई।।
ना जन्मे ना काल तिस खाए। सत करतार जल थल समाए।।
तिसकी महमा गावे दिन राती। तिसका नाम अपरम धन लाखी।।
जाँ जाँ देखे साहब वडयाई। परम आनन्द सो गुरमुख पाई।।
करम सन्देसा जो कठन जंजाला। जिसका रूप भयो जम काला।।
साची भगत से सब मार मुकाया। खेम कुशल मन ठाकर ध्याया।।
अधिक प्रीती तिस चरने केरी। उस्तत करे मिटे करम की फेरी।।
मन का शूल सभी वँजाया। सत परतीत हरि चरन धियाया।।
अन्दर बाहर मन एक रस लेवे। भाओ भगत सच प्रेम को सेवे।।
मन की रचना जो विषे विकारा। नाम की खड़ग से पावे जयकारा।।
जब सत ठाकर हिरदे दरसायो। लाभ जीवन का तब ही पायो।।
अपने साहब को नित नित पुकारे। जो जो पूजे उतरे भव पारे।।
हिकमत त्याग मन विचरे निषकामी। आज्ञा प्रभ की परम सुखधामी।।
मान गुमान निकट नहिं पेखो। खिमा गरीबी नित्यानित लेखो।।
तन मन अरपे विच सब जग दी सेवा। मन में राखे नहिं कपट का भेवा।।
दुःखियाँ का दुःख नित ही निवारे। प्रेम प्रीत चित्त सेव विचारे।।
तीन काल मन की मैल को धोवे। तुच्छ जीवन पर अन्तर में रोवे।।
सकली सम्पत जाने प्रभ दात। तिसका हुकम पछाने दिन रात।।
सत सील परसे संतोखा। मारग पावे तब मुकत अनोखा।।
एक नाम सच नित नित गाए। सत जुगती जो सतगुर बतलाए।।
भरम जाए सब संकट नासा। अबनाशी पुरष का भयो घट परगासा।।

एक साहब की बन्दगी, मन तन लीजो धार।
'मंगत' ये ही सत शान्ती, सब गुनियाँ करी पुकार।।136

एक साहब का नाम विचार। एक साहब का पाओ आधार।।
सकल संकट हरे प्रभ देवा। निरमल चित्त से करे जो सेवा।।
काम क्रोध अगन अत भारी। जल जल होवे जीव अँगारी।।

रंग रंग करम कमाये दिन राती। पाप करम की नीयत थापी।।
करम करूर देवें सन्तापा। बिन प्रभ नाम नहिं पायें खुलासा।।
मिल सतसंग सतनाम विचार। मानुष जनम की खाट ये सार।।
मानुष चोला सुन्दर पाया। बन्ध मुकत का लेख लखाया।।
निज मरने का लेख नहिं जाता। मूढ़मती में नित पछताता।।
उठ संकट से जाग सवेरा। जग में पाया दुरलभ फेरा।।
साचा वक्खर सत वनज कमाओ। साची कीरत घर में पाओ।।
नहीं ये समाँ मिले चतराई। काल गुरू सिर ताक लगाई।।
जीवत में लियो रास सम्भाल। साचा नाम सिमर किरपाल।।
जिस साहब ने किरपा कीनी। सुन्दर देह मानुष की दीनी।।
भाँत भाँत की कला बनाई। देह का कोट किया सरजाई।।
मूढ़मती तूँ मन की त्याग। तिस ठाकर की चरनी लाग।।
और मारग ना कोई उपाये। जिस बिध मनुआँ शान्त समाये।।
लाख जतन कीजे दिन रात। तो भी धीर ना पावे कमज़ात।।
सतगुर मेल सिमर सतनाम। जीवत में पावें बिसराम।।
मारग ये ही परम सुखरासी। अनमत जीव की काटे फाँसी।।

सत सुकृत प्रभ नाम जप, मिल साध संगत परतीत।
'मंगत' मानुष जनम की, सुन ये निरमल रीत।।137

मन अपने का छोड़ अभिमाना। पावें विशवास सरूप कल्याना।।
मन का मान गवन फिराई। मन का मान बहु नाच नचाई।।
मन का मान काम क्रोध परगासे। मिथ्या विकार में जीव निवासे।।
मन का मान अत पाप घनेरा। काल सरूप गवन का फेरा।।
मन का मान सब गुन विनासे। खल बुद्धी धर पाप परगासे।।
मन का मान नित औगन धारी। नित स्वारथ का बने पुजारी।।
मन का मान भ्रम मूल पछान। विसरे गोपाल रोये नादान।।
मन का मान अगन अत भारी। जल जल पड़े जीव अन्धकारी।।

मन का मान ये शत्रु आपार। जीव भरमावे खानी चार।।
मन का मान अविद्या जान। सत सरूप नहिं होवे पछान।।
मन का मान जब अन्तर रहाई। सत विशवास कभूँ ना पाई।।
लख चौरासी जीव भरमाने। मन के मान ने किये दीवाने।।
मन का मान ये विखमी घाटी। तिसको तोड़े होए सचखण्ड वासी।।
मन का मान कारन इच्छया। करम भोग में नित नित रसया।।
जतन अनेक जो भी नर पाये। दुरमत रोग ये मान नहिं जाये।।
गुनी ज्ञानी खट शास्तर वादी। पढ़े कुरान हाफ़िज काज़ी।।
मन का मान नहिं जाये अन्धकारा। पढ़ पढ़ थाके नहिं मिटे विकारा।।
गृहस्थी विरक्ती फिरें भुलेखे। मन का मान नित धरें विशेखे।।
मुख से कथनी बहु कथनाई। दुष्ट विकार मन मान नहिं जाई।।
कोट मद्धे कोई गुरमुख आये। सत विशवास प्रभ चरन लखाये।।
साची कीरत मन तन पिरोई। तब ये मनुआँ निरमल होई।।
मान त्याग समता पाये। आज्ञा साहब पल पल मनाये।।
अन्धकार नासे घट चानन होई। गुरमुख साजन सतगती लखोई।।
भव से उतरे सतनाम गाई। सत विशवास चित्त अधिक समाई।।

मन का मान तियाग के, सत ठाकर नित चेत।
'मंगत' करनी सार ये, भ्रम दुबधा मिटे अनेक।।138

निष्काम करम मन निरमल कीजे। भाओ भगत प्रभ की तब सीजे।।
सत-सेवा जो नित विचारी। कोट पाप मन मैल उतारी।।
पर सुख जो नित हिरदे ध्याई। पाप कूप तिस निकट ना जाई।।
सरब जियाँ संग साँझ विचारी। दुरमत मैल का कष्ट निवारी।।
सतपुरषों के नित सुने इतहासा। सत करनी में लेवे नित वासा।।
मोह अधिक सत धरम में राखी। सो जन रसना निरमल चाखी।।
सत करम बुद्धी परगासे। सील संतोख आये घर बासे।।
तुच्छ देही का जीवन मानी। साची सेव हिरदे पछानी।।

जो कुछ कीजे सब हुकम विचार। साची कीरत पावें करतार।।
मन का मान ये भरम की खाई। सत विचार से ताप मिटाई।।
झूट जगत से फीका मन होये। निर्मल प्रीत प्रभ चरन लखोये।।
साचा ठाकर सत कर ध्याई। नित नित सुने तिसकी प्रभताई।।
प्रभ की प्रीत में हरजन रोए। साची कीरत चित आन समोए।।
झूटा जगत तब निश्चय पाई। सतनाम चित प्रीती आई।।
सिमरे नाम छिन छिन को धार। उट्ठत बैठत करे विचार।।
बैठ इकान्त मन देखे खेल। बहु पछताए लख दुरमत मैल।।
दृढ़ पुरषारथ मन में धारी। सकल व्याध पाखंड निवारी।।
मन का डोलन नित ही थामे। केवल प्रीती प्रभ चरन अनामे।।
जीवन झूट पसारा त्यागे। साचा मारग प्रभ सिमरन जागे।।
दुष्ट विकार तजे कुटलाई। कोमल चित्त पर हेत लखाई।।
पूरन सतगुर की सिखया पाये। मारग साहब की सोझी आये।।
दृढ़ विशवास गुर चरनी राखे। गुर की कहनी पल पल चित्त चाखे।।
दुरमत पड़दा माया का नासे। आनन्द सरूप साहब परगासे।।
साची कीरत सुने सच लेख। साचा जतन साचा पाए भेख।।

सत करम हिरदे धरे, मन का तजे विकार।
'मंगत' पाए आनन्द को, नित घाल यतन तत्त सार।।139

जैसा करम करे दिन राती। तिस ही रंग मनसा उतपाती।।
मलीन करम से होए मनसा मलीन। सत असत नहिं भेद को चीन।।
ऐसे जीव करम संजुगता। जैसा करम ऐसा फल भुगता।।
मिल सतसंग नित खोज विचार। पाप करम नहिं परसे सार।।
छिन छिन मन में सत करम विचारे। मिले आनन्द मिटे भरम गुबारे।।
शुद्ध बुद्धी प्रभ सिमरन पाये। शुद्ध बुद्धी सुख सार को ध्याये।।
हिरदे साहब नाम को गाई। सत करम में प्रीत अधकाई।।
सत विचार करे दिन राती। जग में कोई नहीं संग साथी।।

साचा मित्तर प्रभ आवे चीत। पल पल तिसका गावे गीत।।
सिमर सिमर सतनाम सुखरासी। मिथ्या विकार भरम सब नासी।।
सत परतीत मन में होई। सत सिमरन नित चित्त परोई।।
हक़ पराया मन से नित त्यागी। साची सिफ़त साहब चित्त लागी।।
जो कुछ कीजे फल तिसका त्यागे। सत सिमरन में नित रहे लागे।।
साहब दाता बड़ा दातारी। सरनागत को नित उभारी।।
एक टेक राखो निज स्वामी। गवन विनासे ले बिसरामी।।
साच कमाई नित उठ घाल। आज्ञा बूझ पूरन प्रभ दयाल।।
प्रेम भाओ प्रभ नाम के संग। प्रेम से वाचे कथा परसंग।।
प्रेम से ठाकर सेव कमाओ। निश्चल चित सतनाम ध्याओ।।
जो उतपत और बिनसे जाई। तिसकी प्रीत अधिक दुखदाई।।
तीन काल जो सदा सम रूप। सिमर सतनाम आतम सुख भूप।।
मोह माया नर नित डोलाये। सँभल सँभल कर नित चाल चलाये।।
दृढ़ निश्चय केवल प्रभ चरना। तिसकी आज्ञा नित तिस सरना।।
मिले विवेक शबद निरवान। सुरत समाई भई ग़लतान।।
करम का संसा मन से जाये। अधिक प्रीत प्रभ चरनी पाये।।

एह बिध साधन जो करे, साच प्रीती को धार।
'मंगत' मन निर्मल होये, पावे शबद विचार।।140

जिस जन धरम में आई परतीत। तिसका मन वरते सुखरीत।।
सो कुलवन्ता सो ही बुद्धिमाना। सच परतीत जिस धरम पहचाना।।
सकल विखाद की होई तब हानी। सत धरम में मुकत पहचानी।।
एक आधार प्रभ चरनी पाया। आज्ञा तिसकी रहे समाया।।
तन मन धन सब तिसकी दात। साचे ठाकर का सब ही परताप।।
एक बूंद से जिस कियो आकारा। बल बुद्धी मन तेज विचारा।।
जिसकी शकत में लीला धारें। तिसके चरनी नित नित पधारें।।
जो कुछ हुआ सो तिसकी वडयाई। आद अन्त मध्य रह्या समाई।।
तिसके चानन से जग परगासे। सिमरो ठाकर मन भूत विनासे।।

साचे ठाकर की जब पाई वडयाई। तब ये मनुआँ सुख रूप समाई।।
सतगुर मन्दरोई इक मन्तर दीना। तिसके तेज से मन दु:ख छीना।।
एह मन निहचल भया वाँग सुमेर। कसके बाँध संग प्रेम ज़ंजीर।।
सार कला परमेश्वर जग जानी। आठ पहर तिस सेव पहचानी।।
ज्यों ज्यों मन में आई सत परीती। प्याला प्रेम पी मन हरी पलीती।।
बादमुबाद निन्दा विकार। हर की भगत से भयो विख छार।।
अमरत नाम मन चुगे दिन राती। सकल विकार से भई खुलासी।।
पूरन करनी भव का पन्ध चूका। सर्वज्ञ सरूप पाए अपार अनूपा।।
प्रभ का दर्शन तीन काल दरसावे। जो ये मन सत ठौर में आवे।।
पवन रहित ज्यों दीपक परगासे। विरत रहित मन रूप समासे।।
परसे रूप आनन्द आपारा। नित नित कथे प्रेम करतारा।।
भया मस्ताना सच नाम के रंग। पलक पलक सुने शबद परसंग।।
मन करे क्रीड़ा हर चरन समावे। भयो कदारथ प्रभ भगत लखावे।।
वाँग सागर मन भयो गम्भीर। अन्तरगत लागा प्रेम का तीर।।
घायल हुआ प्रभ चरन के संग। अमरत पिया नित भया निषंग।।

प्रीती साचे नाम की, मन का हरे विकार।
'मंगत' हरजन नित जपे, उतरे भवनिध पार।।141

जतन किये से रतन पछाना। पूरन पुरख ठाकर निरवाना।।
घट घट व्यापक सदा अलेपा। सत सरूप का कथो विवेका।।
अगम आपार अत ही बिसमाद। सरूप पछाने कोई गुरमुख साध।।
इस मन की दुबधा तब नासे। सत परतीत प्रभ चरन उपासे।।
प्रभ सिमरन बिन नहिं पाये कल्याना। जुग जुग भरमे ये जीव अंजाना।।
सकल निधान ये ही जग सार। प्रभ का सिमरन करे निस्तार।।
समाँ अमोलक न पलक गँवायो। पूरन प्रभ की सेव कमायो।।
तिस बिन तेरा नहिं कोई ठिकाना। कियो विचार जुगती बिध नाना।।
जो सरजीवे ये काची भीत। नित ही तिसको राखो चीत।।
जिसने धारा ये सकल पसार। तिसके चरनी पाओ आधार।।

गुनी मुनी जग आये सयाने। हर की भगत चित्त सार पछाने।।
ऐसा जीवन तूँ मन धार। मानुष जनम नहिं बारमबार।।
सुकृत कीरत लियो जग कमाये। सत परतीत लियो चरन धियाये।।
सरब जियाँ की सेवा धार। सबमें देख एको करतार।।
तेरा भरम तभी नर नासे। जो चित्त राखें प्रभ भरवासे।।
तन मन धन तीनों को त्याग। सत ठाकर की सेवा लाग।।
तिसकी दात तिस आगे भेंट। पूरन पुरख सब हरे विखेप।।
कामना त्याग चित्त धर निषकामी। पूरन पुरख पायें अन्तरयामी।।
ये ही लाभ जीवन का भारी। सत ठाकर की जो सरन विचारी।।

पारब्रह्म की सरन में, जो जन आये मीत।
'मंगत' सो निस्तर भये, भवजल गहरी भीत।।142

कह बिध सिमराँ तेरा नाम स्वामी। औगनहार मन घट बिसरामी।।
नाना भाँत तिसको समझाऊँ। नित ही भरमे मूढ़ निहथाओं।।
माया चक्कर को सत कर मानी। सरजनहार नहिं सिमरे अभिमानी।।
अपने रंग बहु धारे चतुराई। मूढ़पने की करे प्रभताई।।
अपनी करनी का फल नित पावे। झूट भरम में आवे जावे।।
जान बूझ होए पशू समाना। सत सरूप ठाकर विसराना।।
सत संगत में धरे नहिं प्रीती। मूरख होके करे बदनीती।।
पाप कूप नित मन में धारी। अपने जीवन की करी ख़वारी।।
काम क्रोध अगन नित तापे। जन्मे मरे विच भरम संतापे।।
अती मलीन सुभाओ को धारी। सूझे नहीं सत धरम अपारी।।
भरम में कई जनम विताये। बिन हरी भगत नहिं छूटन पाये।।
दुरलभ करम मानुष देह धारी। सत ठाकर की लियो सेव विचारी।।
सतपुरषों का मारग जाप। सतनाम हिरदे में थाप।।
रे मन ऐसी करनी धार। जो ये बिनसे गवन विकार।।
राग द्वेष अगन का ताओ। प्रभ सिमरन से होए अभाओ।।

अपना सरजनहार जप देव। दुरलभ जग में ऐसी सेव।।
अपना ठाकर हिरदे में चेत। काल करम दु:ख जाये विखेप।।
अपना स्वामी नित लियो चितार। मानुष देह होवे बलहार।।
पुरख समरथ जिसकी सब बन्त। हिरदे ध्याओ पूरन भगवन्त।।

परमेश्वर को सिमरिये, बार बार चित्त माहीं।
'मंगत' मिले सत शान्ती, बौहड़ गरभ ना पाईं।।143

जब मन अपने की भूल गँवाई। आवागवन का चक्कर मिटाई।।
मन में रचना कुल संसार। मन को राखे मिले करतार।।
सतपुरषों की सिखया सार। मन को बाँधे ले जीत संसार।।
दुस्तर मन की नित करो निगरानी। संताप सरूप ये मन डोलानी।।
शास्त्तर सिमरत नित करें पुकार। मन को जीतन मुकत तत्त सार।।
मनमानी सब रचना त्याग। आज्ञा प्रभ की में उठ जाग।।
गरब गुबार जो मन के दूत। तिनको त्याग पावें सुख रूप।।
काम क्रोध लोभ हंकार। मोह सरूप मन लशकर धार।।
सत सील संतोख विचारी। खिमा वैराग धर लशकर मारी।।
मिथ्या कलप मन की रचनाई। नाम रूप गुन करम लखाई।।
साचे नाम की जोत जगाओ। मिथ्या कलप सब होवे अभाओ।।
करम का भुगता मन नित रहाई। करम फल इच्छया में नित भरमाई।।
छिन हरखे छिन शोक विचारी। चंचल रूप अत विरती धारी।।
सकले करम प्रभ आज्ञा में त्याग। मन को बाँध सत मारग लाग।।
साची प्रीत प्रभ चरनी राख। आपा मेट सत शान्त चाख।।
अबनाशी पुरष जब घर दिखाई। चंचल मन तब लीन समाई।।
स्वारथ बुद्धी मन अगन बढ़ाए। भोग पदारथ अत सम्पत पाए।।
तिसके मद में नित मतवारी। सत कुसत नहिं कभूँ विचारी।।
कैह बिध पाइये तिस पर जीत। अती भयंकर तिसकी रीत।।
सतगुर सिखया जब पाई सार। सत सरूप चित्त प्रीत विचार।।

झूठी देही सत आतम राम। आतम प्रीत मन करे निषकाम।।
अपना सुख दूजे वरतावे। पर-उपकारी जीवन को पावे।।
नरक सरूप स्वारथ बुद्ध नासी। निष्काम करम सत मारग भासी।।
परहित बुद्ध पाया परगास। जनम जनम की दूषन भई नास।।

स्वारथ से मन डूबता, परमारथ दे निस्तार।
'मंगत' नित विचार के, कर साधन पर-उपकार।।144

पर-उपकारी नित जीवन पाओ। परमगती की तब सार लखाओ।।
स्वारथ बुद्धी अगन तियाग। पर उपकार में उठके जाग।।
झूट देही के सुख जो मीता। काल सरूप ये ही अनीता।।
देह के सुख से नहिं छूटन पाये। आतम सुख की नहिं रसना आये।।
देह के सुख से तब पावे शान्त। परोपकार जब धारे सिद्धान्त।।
देह के सुख से जब मन उकताये। आतम सुख की रसना तब पाये।।
देह मिथ्या सुख कहाँ नर होई। अती गुबार अंध जीव परोई।।
झूट विकार से नहिं छूटन पाये। सुख की इच्छया में बहुरूप वटाए।।
देह सुख मिथ्या न इस्थिर रहाई। भुगता जीव परम दु:ख पाई।।
जो सुख देखे सो दु:ख सरूप। भरम का बाँधा सहवे जम कूप।।
गुरमुख बुद्धी जब आई विचार। परसुख की चित्त सूझी कार।।
झूट सुख भरम से मुकत समाई। परसुख हेत कीरत चित्त आई।।
ज्यों ज्यों और का दु:ख निवारी। अपने मन की मिटे गुबारी।।
परसुख देके मन शान्त समाई। साची कीरत प्रभ की तब पाई।।
परमानन्द सुख अनुभव होई। अपने घट में भयो प्रगटोई।।
पर-उपकार नित मारग साधी। जनम जनम की मिटे सब व्याधी।।
देह के सुख से जब उपरस होई। शबद भेद तब कथा परोई।।
सकल पाप की स्वारथ जड़ नासी। परोपकार तत्त ज्ञान परगासी।।
अतिअत वेग मन का बिनसाई। शुद्ध विचार की प्रीत लखाई।।
ज्यों ज्यों सोधे सत करम की रीता। सत परतीत मन होये पुनीता।।

इन्द्री भोग सुख बिख सम जानी। नाम की रसना जब करी पहचानी।।
साचा नाम जब पाया आधार। अबनाशी सुख पाया निरंकार।।
निरमल चेता तिस चरन पिरोई। दुस्तर मन पर तब जीत लखोई।।
आलख शबद घर परगट पाई। तब ये मनुआँ गयो लीन समाई।।

सत सरूप को पाये के, मन चंचल भयो अचिंत।
'मंगत' मिटी सब कलपना, ले शबद ज्ञान अनंत।।145

संसार की रचना

सत सरूप अपार अनामी। अच्छर अबगत सरब अन्तरयामी।।
जुग जुग आद आप बिसमादी। नित सम रूप अगम अगाधी।।
आलख अद्वैत नहिं पारावारा। अपनी माया का रचा पसारा।।
तीन काल आनन्द सरूप। घाट वाध ना पावे अनूप।।
आप अजनमा सरब अलेप। माया रूप वटावे अनेक।।
सरब कला पूरन अबनाश। सरब जियाँ के अन्तरगत वास।।
नाना नाम धर सिद्ध मुन ध्याएँ। अखय पुरष का पार ना पाएँ।।
प्रथमे मनसा सहज उपजाई। बिना कारन रची रचनाई।।
तीन गुन माया धर परगट कीनी। अनक प्रकार रचना रच दीनी।।
तेज वायू जल पृथवी आकास। इन पाँचों का सकल तमाश।।
बुद्धी मन और हंकार। आठ तत्त परगट रूप संसार।।
पाँच भूत रूप विटाए। पच्चीस प्राकृत का रूप दिखलाए।।
इच्छया चिन्ता भय मोह विकार। नाना भाँत घट उपजे बिकार।।
अचरज माया गत होई बिस्तार। चारखानी रचया संसार।।
लोकालोक पुरियाँ मंडल देस। अंडज पिण्डज उदभुज सेतज वेस।।
चाँद सूरज की अत जोती परकास। दिवस रैन प्रगटे पख रुत मास।।
चराचर भूत परगट कीने। भये मोह परापत जड़ माया चीने।।
दर्शन अचरज अन्तर बिख सार। '**मंगत**' भरमे जीव नित खानी चार।।146
दुख सुख करम फल उपजाए। ऊँच नीच गत जीव भरमाए।।
चौदाँ लोक पसरे पासार। प्रभ की माया सब घट संचार।।
देव दानव पीर अवतार। सिद्ध रिखीशर गुनी गुन वचार।।
सबको माया नित भरमाए। राज राजेन्द्र नहिं छूटन पाए।।
उदे अस्त तक नित उठ धाए। मुकत ना पाए देख अनवरचित्त माए।।
करम के संसे में जीव ग़लतान। फल को बाँछे नित रोए नादान।।

पाँच भूत का सूख्शम भाओ। शबद स्पर्श रूप रस गंध समाओ।।
इन्द्री विखे नित भोगे जीव। अनन्त वरख भोगे नहिं धीरज लीव।।
आस आस में जूनी भरमाएँ। मिले ना तृपत इस जादू माएँ।।
चारखानी ये बँधी आपार। मानुष जनम छूटन की धार।।
साध जनाँ इक निरनय कीना। मिथ्या माया सत शबद परखीना।।
नित सतसंग में लियो निवास। विखयम माया से होए खुलास।।
सत सरूप का सिमरन लीयो। सिमर सिमर तिसमें ही जीयो।।
सतगुर मेल घट कँवल परगासे। अन्तर मिले पुरख आप अबनासे।।

मानुष तन को पायके, परस लियो सत ठौर।
'मंगत' समाँ बितायके, फिरें चौरासी घौर।।147

ईश्वर पूजा

(क) पूजा का गलत स्वरूप

जप तप संजम का फल है सार। मन परतीत लेवे निरधार।।
अन्तर कपट रहे लपटाए। मुख से मोक्ष की रसना गाए।।
अन्तर इच्छया अगन है जारी। मुख से बोले ज्ञान निरधारी।।
मन में राखे जगत प्यार। बाहरों सेवे सो दातार।।
मन में धारे रसना भोग। बाहरों रूप बनावे योग।।
अन्तर मन माहीं द्वैत बकार। बाहरों पूजे सर्वज्ञ निरंकार।।
अन्तर राखी कठन कुटलाई। बाहरों भेख भगत दिखलाई।।
अन्तर लेवे जगत की ओट। बाहरों जग से रहे अलोप।।
अन्तर माला धन की फेरे। बाहरों नाम आलख जपेरे।।
अन्तर राखे शत्रु और मीता। बाहरों कथे ज्ञान निरभेखा।।
अन्तर माहीं नारी संग प्यार। बाहरों त्यागी रूप को धार।।
अन्तर धारे अनेक तुरंग। बाहरों राखे दृष्टी इक रंग।।
अन्तर माहीं जगत पसार। बाहरों कथे एक निरंकार।।
अपना मन रहे विपरीत। और जियाँ देवे परतीत।।
मन में राखे बगल सुभाओ। नदी तीर समाध लगाओ।।
अन्तर माहीं मीन की प्यास। छिन छिन लोचे तिस गवन बिलास।।
नीर से उमड़ी मीन को देखे। एक झपट दे उदर माहीं परीखे।।
बिन परतीत ऐसी मन कार। कपट को राख छले संसार।।
पूरा ज्ञान परम पुनीत। जो मन पावे नाम परतीत।।
सिर सिर बाज़ी गुरमुख खेले। टूटी मन की अन्तर में मेले।।
पाखण्ड त्याग रहे निरमान। निर्मल जुगत तब करी पहचान।।
सरब कला पूरा जन होए। मन अपने में नाम परोए।।

नित विखाद के उठे तुरंग। बिना परतीत कैसे चढ़े हर रंग।।

परम धाम को पावना, केवल मन परतीत।
'मंगत' कठन ये खेल है, खेले कोई पुनीत।।148

देह भेखी बहु मिले पुजारी। साची भगत कोई विरला विचारी।।
क्या सन्यासी क्या बैरागी। नाना भेख धरे मंदभागी।।
देह का भेख नहिं धीरज देवे। तप भयंकर जो नित सेवे।।
जब लग मन नहिं आये विशवासा। जतन बेअर्थ में चित्त बासा।।
मनसा रोग नहिं जीव का नासी। गृह को त्याग लई झूट उदासी।।
माँग के खाना धरती आसन। साची भगत की ये नहीं उपासन।।
वेद पढ़े औराँ उपदेशे। अन्तर धारे भोग संदेशे।।
कठन कराल साधन को धारी। बिन गुर भेंट नहिं भगत विचारी।।
चन्द्रायन बरत का नीयम राखे। कातिक माघ अशनान को भाखे।।
गिरी हिमालय पर आसन धारी। बिना ज्ञान सब दु:ख विचारी।।
जब लग मन विरती नहिं त्यागे। करम फल इच्छया नहिं मन से भागे।।
जब लग भगती सार नहिं पाये। सरब जतन अकारथ जाये।।
इन्द्री दमना बहु विध कीनी। मन से भोग विकार को चीनी।।
बाहरों भेख अतीत का धारी। अंदर हंगता करे ख़वारी।।
तीरथ तट पर नित वराजे। शुद्ध नीर मजन देह साजे।।
भूत प्रेत यखनी को पूजे। पेट के कारन विकार नित सूझे।।
पाँच धूनी को नित ही तापे। उलट कपाली योग को जापे।।
बिन तत्त ज्ञान नहिं दूषना जाये। दुस्तर मनुआँ नित भरमाये।।
अदभुत चक्कर माया बिसतारी। पूरे गुर बिन ना हो निसतारी।।

आतम तत्त परबीन गुर, जब आन मिलाये मीत।
'मंगत' तिनकी सिखया, हिरदा करे पुनीत।।149

अनक भाँत की किरया साधी। दुष्ट वासना नहिं मिटे उपाधी।।
सतसंग अनेक सुने विख्याना। रंचक मन नहिं सार पछाना।।

कथनी माहीं चतर बुद्ध धारी। रहनी रंचक नहिं हिये विचारी।।
छल कपट संग प्रीत लखाई। डूब गयो विच अपनी चतुराई।।
अनँक प्रकार सेवा चित्त धारी। मान मद नित करे खवारी।।
कामना धार बहु जतन करीना। मोह वस होके नित गरब फरीना।।
मन्तर अनेक किये निध्यायन। अनँक देवत का करें आवाहन।।
मन्द पूजा में जनम गँवाई। आतम विचार बिन कभूँ शान्त ना आई।।
सकल जतन अकारथ होये। बिन गुर सिखया नहिं सार कोई पाए।।
झूट बैराग का भेख विचारी। तज गृह नार जन भयो भिखारी।।
अनँक स्वाँग देही के बनाये। सीस जटा तन राख रमाये।।
मदरा माँस चरस को पीवे। दुरमत बुद्धी कष्ट बहु देवे।।
अनँक जमायत संतन की धाया। परमानन्द का लेख नहिं पाया।।
मूढ़मती नहिं रंचक नासी। छल को धार नित फिरे चौरासी।।
विद्या विचार बहु पाठ करीने। अनेक सप्ताह में गुनी फरीने।।
अखण्ड बानी का साधन धारें। पेट के कारन सब जतन विचारें।।
मन में शान्त रंचक नहिं आई। भयो दीवाना बहु पाठ पठाई।।
सत सरूप का निरना नहिं पायो। झूट परकिरत का मोह नहीं मिटायो।।
नहीं चित्त रसे सतनाम प्रभताई। कपट को धार नित संकट पाई।।

चतुर चतुराई में डूब गये, मन नहिं पायो धीर।
'मंगत' बिना प्रेम के, भरमे गुनी गहीर।।150

(ख) पूजा का सही स्वरूप

जैसा मन निश्चय को धारी। तिस अनुकूल करे ब्यौहारी।।
जैसी संगत ऐसा विशवास। जतन करे होवे सुखरास।।
जैसा आदर्श मन माहीं समाई। तिस अनुकूल संगत में जाई।।
जीवन मूल आदर्श पछान। जिससे पावें लाभ और हान।।
मारग धरम अत तीखन धार। अनंक जतन से पावे सार।।
सतपुरषों का जीवन जानी। मारग धरम का लेख पछानी।।
जिस बिध जीवन गुनियों ने विताया। सुने परसंग तब भेद लखाया।।
हर का रूप नज़री नहिं आवे। हरजन दरशन से पतयावे।।
प्रभ की महमा जिस घट परगासी। तिनका दरशन परम सुखरासी।।
प्रभ की आज्ञा में जनम विताई। मोह माया का लेप नहिं पाई।।
सुकृत काज अत ही करीने। तिनकी कीरत सुखसार को चीने।।
ताँ सों मन में नित करो विचार। तिनका जीवन हिरदे धार।।
जिस देवत का तूँ पुजारी। गुन और करम नित करो विचारी।।
तिनकी सिखया तन मन में धारो। साची पूजा देवे सुख कारो।।
जो नहिं गुन और करम पछाता। जो नहिं सिखया हिरदे रंगराता।।
जो नहिं साधन सार चित्त पाई। जित बिध गुनियों ने करी कमाई।।
मनमानी मन अन्तर राखी। झूट देवत की पूजा भाखी।।
पाखण्ड माहीं जनम गँवाये। पेट के कारन बहु भेख बनाये।।
भरम गुबार में आवे जाये। झूटी पूजा गवन फराये।।

मन की तजी नहिं दूषना, पूजे देवत अनेक।
'मंगत' धार पाखण्ड को, नहीं लखया सत लेख।।151

गुरू पीर नहिं नबी छुड़ावे। अपनी करनी की गत पावे।।
ना कोई देवी देव सहाये। अपनी करनी देवे सज़ाये।।

ताँ सों गुनियों करो विचार। साची करनी सत कर धार।।
पाखण्ड छोड़ सत मारग सोध। काल करम का मिटे विरोध।।
अपनी करनी जो अत अन्धकारी। देव भरोसा नहिं दे छुटकारी।।
मूढ़मती क्यों धारी चीत। करनी से होवे निरमल नीत।।
करनी रूप देव पहचान। ज्यों ज्यों करें पावे कल्यान।।
मारग जगत ये खेल पहचानी। अपनी करनी सबको बँधानी।।
करनी मलीन जो चित्त में धारी। अनंक देवत का भयो पुजारी।।
अनंक गुरू पीर मनाये। तीरथ अनेक उठ उठ नहाये।।
कथा परसंग सुने इतहासा। साची करनी नहीं चित्त बासा।।
पाखण्ड माहीं जनम गँवाई। अपनी करनी फेर फराई।।
ना कोई बन्ध छुड़ावनहारा। अपनी करनी संकट दे भारा।।
मनमुखता तूँ मन से त्याग। सत विवेक सुनो वडभाग।।
त्रैगुन माया जाल पसारी। करम का बाँधा जीव अन्धकारी।।
जैसी करनी ऐसी गत पावे। अपनी करनी फल दिखलावे।।
मूल धरम ये ही विचार। साची करनी मिले सुख सार।।
साची सिखया गुर की ये ही। सत करनी का होवें सनेही।।
साची पूजा देवत की जान। जे चित्त परसे सत करनी निधान।।

देवी देव की साधना, और गुरू पीर आधार।
'मंगत' सबका अर्थ ये, सत करनी हिये विचार।।152

गुरू पीर का सत आधार। जो चित्त आवे सत विचार।।
देवी देव की साधन सेव। जे चित्त आवे सत करम का भेव।।
वेद कतेब कथा इतहास। निरमल करनी का मिले अभ्यास।।
जगत जंजाल अत ही अन्धकारा। मन मूरख नहिं सूझे सारा।।
अनेक जतन से नित समझाई। गुरू पीर की सीख लखाई।।
सतपुरषों की कीरत वाची। जो कर मन निरमल गत भाखी।।
सरब जतन कर जो फिर भरमाई। गयो अकारथ नहिं सार कछु पाई।।

भरम माहीं सब वक़्त गँवायो। गुरू पीर बहुरंग मनायो।।
निरमल सीख नहिं हिरदे मानी। धार गुमान करें पाप अधिकानी।।
करनी बाँधा संकट अत पावें। भये ना सहाई जो जतन लखावें।।
जो तेरी करनी निरमल होई। साची सिखया मन माहीं परोई।।
सत उद्दम नित हिरदे धारी। भये सहायक गुरु पीर आचारी।।
सीख के कारन सब थाओं विचारो। गुरू पीर और ज्ञान आपारो।।
सीख के कारन देवत की पूजा। सीख मनावे तब शान्त पद सूझा।।
जो कर सीख नहीं मन लखाई। पाखण्ड पूज के जनम गँवाई।।
उठ गुनवन्ता लेख विचार। अपनी करनी देवे निसतार।।
अपनी करनी देवत बनाये। अपनी करनी राज तेज दिखलाये।।
अपनी करनी देवे ऊँच नीच रंग। सकल जगत करनी परसंग।।
सतपुरषों की सीख विचार। साची करनी मन तन में धार।।

करम चक्कर संसार में, जीव नित फेर फराये।
'मंगत' जैसी करनी करे, ऐसी गत लख पाये।।153

सतपुरषों ने सत साधन धारी। सत आधार जीवन को काढ़ी।।
मारग धरम में तन मन वारी। सतपुरष सो आये बलहारी।।
सत की खोज में जनम गँवाई। झूट माया का भरम चुकाई।।
पाखण्ड विकार को खण्डन करी। सत परतीत इक चित्त में धरी।।
निरमल नीती सतनाम विचारी। सत करम नित हिरदे धारी।।
एह बिध जतन जीवन में पायो। सतपुरष तब नाम कहलायो।।
साची करनी सत पद दीना। रूप निरंजन अन्तर चीना।।
भय भरम सब दोख मिटाई। सत करनी ये सतपुरषों ने पाई।।
आप तरे औराँ सुख दीया। मारग धरम में दृढ़ वरतीया।।
पर-की हेत से सेवा धारी। निष्काम करम के भये पुजारी।।
सत सरूप अन्तर घट जानी। पल पल तिसकी सेव पछानी।।
आज्ञा प्रभ की चित्त में धारी। सुख दु:ख दोनों सम कर विचारी।।

खिमावान और पर-उपकारी। सतपुरषों ने सत करनी धारी।।
सत करनी ने निर्भय पद दीया। प्रभ के चरन में रमत रमीया।।
अपनी करनी से पाया उद्धार। तिनकी सीख आदर्श संसार।।
निरमल करनी का करो विचार। जिससे उद्धरे बहुजन पार।।
भय भरम सब जाये अन्धकारा। सत करनी जो करें विचारा।।
सकल देवत गुरु देवें वधाई। सत करनी जो दृढ़ कर पाई।।
आलस छोड़ जतन सत धार। खाट वक्खर सत धरम विचार।।

सत पुरषारथ धार के, जग से पाओ जीत।
'मंगत' करनी कर चलो, जो तीन काल सुखरीत।।154

मनमानी नर अपनी त्याग। मारग धरम में उठके जाग।।
कोटाँ कोट जीव आये संसार। करनी का नित कियो ब्यौहार।।
जैसी करनी जो कर गये। तिस अनुकूल पत जग में लये।।
मूरख मन तूँ कर विचार। किस कारन आया संसार।।
शान्त सरूप का मारग खोज। बन्ध खुलासी अपनी सूझ।।
नित ही जतन ये साचा धार। साची करनी पल पल विचार।।
करनी से तूँ सत पद पावें। करनी से फिर गरभ ना आवें।।
मारग करम करो विचार। बन्ध खुलासी पावें सार।।
मन में साचा रख विशवास। मोह भरम की काटो फाँस।।
सतपुरषों की सीख विचार। उतरें भव दुस्तर से पार।।
सतपुरषों ने ज्यों गत पाई। जिस बिध साचा धरम कमाई।।
एह बिध रहनी तू मन धार। परमगती पावें सुख सार।।
निरमल करनी लेख लखाओ। स्वारथ बुद्ध अंधकार मिटाओ।।
पर-उपकार अन्तर में धार। निष्काम भाओ से सेवा विचार।।
अपने मन को जतन से राख। साचा नाम निरंतर चाख।।
पर की सेव में जनम गँवाई। सतपुरषों की ये सीख सुखदाई।।
मनमानी अभिमान को छोड़। सत परमेश्वर के चरनी चित जोड़।।

परहित से पर का दु:ख निवार। आज्ञा प्रभ की हिरदे धार।।
ऐसी करनी जिस लीनी धार। सतपुरषों की पाई पूजा सार।।

सतपुरषों की पूजा, ये ही यथारथ जान।
'मंगत' तिनकी सीख से, पावें साचा नाम निधान।।155

सतपुरषों की पूजा ये ही। तिनकी सीख जो मन लख लेई।।
सतपुरषों की सेवा सार। जो तिनकी करनी का आवे विचार।।
सतपुरषों का मारग जानी। धरम सरूप पाये परवानी।।
सतपुरषों की नीती सार। मारग धरम में तन मन वार।।
सतपुरषों का निरमल ज्ञान। मान त्याग भाओ दीन पछान।।
सतपुरषों का यथारथ लेख। सरब जियाँ से कीजो हेत।।
सतपुरषों की करनी सार। पर का दु:ख करें निवार।।
सतपुरषों का तप ये जान। सबमें देखें एक भगवान।।
सतपुरषों का ये अनुराग। मिथ्या जग से पावें बैराग।।
सतपुरषों का साचा योग। मन की दुरमत काटे रोग।।
अपने मन को साधन करी। सतपुरषों ने सिद्धता धरी।।
आतम तत्त खोजें नित नीत। सतपुरषों की ये जुगत पुनीत।।
अपरम महमा संतन ने धारी। सत मारग के आये ब्यौपारी।।
तिनकी सीख पाये सुख होई। दुरमत मैल भरम की खोई।।
शान्त सरूप पाई गत पूरी। सतपुरषों की पाई गम्भीरी।।
सतपुरषों की सिखया गत देवे। सत परतीत गुनी जो सेवे।।
बिन करनी सब पूजा थोथी। देवी देव पूजें नित पोथी।।
मारग धरम हिरदे विचार। पल पल साची करनी धार।।
मन मूरख है अती गँवार। बिन करनी नहिं पाये निस्तार।।

बन्धन रूप संसार से, सो जन भये कल्यान।
'मंगत' साची करनी, जिन चित्त करी पछान।।156

धर्म का स्वरूप

सत धरम का सुनो निधान। मानुष जीवन को देवे कल्यान।।
धरम सरूप का निश्चय जोई। सकली बिपता जीव की खोई।।
धरम मूल धरम आधार। धरम ही बन्ध छुड़ावनहार।।
धरम का रूप चिन्ह आकार कोई नाहीं। समूह सतकरम सो धरम लखाईं।।
अत सतकरम में धरी परीती। साच धरम की पाई नीती।।
मज़हब पंथ के नहिं धरम आधार। धरम सहित चले चक्कर संसार।।
प्रभ की निरमल रीती जोई। धरम सरूप कहलाये सोई।।
शान्त मारग जो जतन लखाई। धरम सरूप जानो गुनि राई।।
जिस जतन से मन निरमल होई। सो साधन नर धरम कहलोई।।
जिस वस्तू से मन तृपताये। निरना धरम का सो वस्त कहलाये।।
पाप करम जिस भाँत से नासे। कल्यान सरूप सो धरम बिलासे।।
जीव की भरमन अविद्या जाये। साधन सार धरम जब पाये।।
अनेक सरूप धरम ना धारी। कल्यान का मारग एक लखारी।।
पूरब पच्छम का जीव जो होई। कल्यान धरम सब एक लखोई।।
जिस जुगती से जीव कामना जाये। मारग धरम सो सत कहलाये।।
जिस करनी से जाये गुमाना। सत सरूप सो धरम पछाना।।
जिस साधन से काल परहरे। सो साधन रूप धरम उच्चरे।।
जो मुशक्कत करे बंध खुलासी। मारग धरम सो सत परगासी।।
हंग बुद्ध विकार को छेदे। मारग धरम का तब जन बेधे।।
एक परमेश्वर पर आये विशवासा। सो जन मारग धरम निवासा।।
कल्यान का उद्दम जब चित धारी। मारग धरम तब लेख विचारी।।
अपने बन्धन का जब करे उपाये। मारग धरम शान्त तब पाये।।
भय भरम जब मन निवारी। सत धरम तब कथा विचारी।।

धरम का रूप ना जीव कोए, ना कोई मज़हब और पंथ।
'मंगत' यतन जो मुकत का, सो धरम कर वाचें ग्रन्थ।।157

मारग जो कल्यान दिखाई। धरम सरूप जानो सुखदाई।।
सब गुनियों ने सार लखाई। एको धरम सबमें विचराई।।
देश नीती भाँत भाँत दिखावे। पल पल माहीं रूप विटावे।।
वोह तो धरम ना करो पहचानी। लोकाचार रिवाज लखानी।।
धरम नीती नहिं रूप विटाये। जुगा जुगन्तर इक भाव लखाये।।
लोकाचार रिवाज जो धारी। बादमुबाद की सकल बकारी।।
अनमत जीव ना धरम पछानी। लोकाचार में बाद बखानी।।
सतपुरष सत धरम लखाये। कल्यान का मारग एक दिखाये।।
बादमुबाद में मनमुख धायें। सार विसार अन्त पछतायें।।
नाना रंग का वैर परगासे। सत ना सूझे नर अन्ध भरवासे।।
धरम सरूप तो जानत नाहीं। सबसे ऊँचा मान धराईं।।
पंडित काज़ी कई डूबे सयाने। साचे धरम की सार नहिं जाने।।
रवी परकाश ज्यों सबको सुखदाई। साचा धरम सबमें शान्त वरताई।।
पवन पानी से ज्यों सब सुख पावें। मारग धरम में सब कल्यान समावें।।
बादमुबाद जाँ नर होई। साचा धरम ना जानो कोई।।
जो परचार सब हेत दिखाई। कल्यान का जतन सबमें प्रगटाई।।
बाद तियाग एकता पाये। साचा धरम सो जान गुनि राये।।
जिस विद्या से मन भरम निवारे। एक भरोसा प्रभ चरन विचारे।।
परहित जीवन ज्ञान परगासी। धरम सरूप सो जानो सुखरासी।।
जिस जुगती से परमेश्वर देखे। करम जाल का मिटे संदेसे।।
आसा मनसा सब विगन निवारी। निर्मल धरम सो करो विचारी।।
जिस रहनी से मन पाप को छोड़े। पर-उपकारी रसना को लोड़े।।
सब जीवों की सेब कमाये। मारग सो सतधरम कहलाये।।
धरम की रसना सब बन्धन तोड़े। गुरमुख विरला ये सार निचोड़े।।

सतपुरषों का है एक धरम, परमादी बहुरंग धार।
'मंगत' मिथ्याबाद में, नित डूब रहा है संसार।।158

जो करम शान्त वरताये। छल कपट का लेप नहिं पाये।।
आपा पर का कल्यान समाई। सो करम सत धरम कहलाई।।
जिस गुन से मन औगन छोड़े। एक साहब चित्त चरनी जोड़े।।
जीवत में सतसार को पाई। धरम सरूप सो ही सुखदाई।।
जो किरया देवे विशवासा। एक साहब की चरनी आसा।।
इन्द्री विकार दूषना जाये। सो साधन सत धरम कहलाये।।
जिस साधन से मन प्रेम परगासी। मोह ममता की काटे फाँसी।।
मिथ्या जग से उपरस होई। मारग धरम पछानो सो ही।।
जो कीरत मन भरम को टारे। सत विशवास आतम विचारे।।
देह विकार करम मल नासे। सो कीरत सत धरम बिलासे।।
जो रसना मन भय निवारी। शत्रु मित्तर सब एक दिखारी।।
निष्काम प्रीती सब संग बन आई। सो रसना सत धरम कहलाई।।
जो जीवन पर ताईं पछानी। पर के दुःख में निज सुख वरतानी।।
ग़रब गुबार मान को त्यागी। भेद पछानो सत धरम वडभागी।।
जो मरना जीवन में धारी। तन मन धन अरपे उपकारी।।
सरब जियाँ की धूड़ लखाई। सो मरना जीवन को पाई।।
जो उपदेश देवे प्रभ चरन विशवासा। काम क्रोध करे भरम का नासा।।
इकागर चित्त सतनाम विचारी। सो उपदेश सत धरम सँचारी।।
जो निश्चय सत करम का धारी। रहनी कहनी सब सत विचारी।।
अपने मन की मैल नित धोई। सो निश्चय सत धरम परोई।।
जो बानी वैराग परगासे। मिथ्या रूप जगत सब भासे।।
केवल प्रभ चरनी आवे अनुराग। सो बानी सत धरम की जाग।।
जो कथा निरपख परगासी। एक साहब की सिफ़त बिलासी।।
गुन औगन दोनों निरनाये। सो कथा सत धरम प्रगटाये।।

प्रेम का रंग जाँ रंगया, द्वेष ग़ुबार विनास।
'मंगत' विरले हरजन, सत धरम में लियो निवास।।159

मिथ्या जगत सतनाम विचारी। मारग धरम का सो ही पुजारी।।
इक उस्तत प्रभ चरन बखानी। आपा मेटे पाये धरम की खानी।।
जो ज्ञान निरद्वन्द परगासे। करमफल इच्छया भरम करे नासे।।
सत यतन शरधा उपजावे। सो ज्ञान रूप धरम समावे।।
जो करम प्रभ आज्ञा में छोड़े। करता भाओ अपने को तोड़े।।
निरद्वन्द भाओ में लीन समाईं। ये साधन सत धरम वरताईं।।
सत सरूप विवेक जो धारी। सदा अतीत प्रभ रूप विचारी।।
मन की उपाधी सकल तियागी। धरम सरूप पाये सो बैरागी।।
दान जो अधिकारी को देवे। आपा मान नहिं हिरदे सेवे।।
प्रभ की वस्तू प्रभ आगे भेंटे। साचा दान सो धरम विशेखे।।
जिस यज्ञ में नहिं द्वैत कोई भासे। करता भोगता इक प्रेम विलासे।।
सरब जीवों में सत ठाकर जानी। सो यज्ञ धरम अनुकूल पछानी।।
जो परिवारी नित रहे निरमान। सकली सम्पत प्रभ दात पछान।।
दीन दु:खी की करे ख़बरगुज़ारी। धरम सरूप सो जानो परिवारी।।
जो तिरिया निज पती सँग हेता। निष्काम सरूप में राखे प्रीता।।
दासी रूप में जीवन गुज़ारी। पतिब्रतायुक्त धरम सो नारी।।
जो ब्यौहारी निज हक पछानी। पर का हक सम बिख कर जानी।।
सादा जीवन नित सतसंग प्रीती। सो ब्यौहारी जाने धरम की नीती।।
आहार जो नहीं तमोगुन देवे। बुद्ध सुतन्तर नहिं पाप को लेवे।।
भूख समान जो आहार करीजे। सो आहारी मारग धरम लखीजे।।
जो नरेश परजा का हेती। परजा का सेवन करे संग प्रीती।।
अन्याए पुरष को डण्ड नित देवे। धरम सरूप नरेश सो लेवे।।
परजा का दु:ख नित निरवर्त करी। अपना सुख नहिं हिरदे धरी।।
जगत सेवा प्रभ हुकम पछानी। साचे धरम की रीती नरेश सो जानी।।

कामना रूपी अगन में, जीव जले दिन रात।
'मंगत' मारग धरम में, जीव शीतल हो जात।।160

मुकत सरूप धरम विचार। मिले आधार पायें छुटकार।।
सत असत मन निरना कीजो। सत जतन में जीवन दीजो।।
पाप कूप से होए खुलासी। ये विचार धरम परगासी।।
नित जीवन की उनती कीजो। भाओ भगत रस अमरत पीजो।।
सब जीवों की सेव कमाओ। दुरलभ सार धरम ये पाओ।।
अपना बंधन मुकत पछानो। बन्धन करम नहिं हिरदे आनो।।
निरबन्ध रूप संग रखो परीती। साचे धरम की सार ये नीती।।
परधन परनारी विख पेखे। दुष्ट का संग नहिं भूल के देखे।।
सतपुरषों संग हेत विचारी। सो साजन जानो धरम आचारी।।
अपने मन को जो नित सोधे। पल पल ठाकर अन्तर बोधे।।
दुरमत जाल माया विख टारी। सो गुर साचा सतधरम विचारी।।
जो साधू नित मन को साधे। एक प्रीत जपे नाम अगाधे।।
निषकाम भाओ जो हिरदे धारी। सो साधू सतधरम लखारी।।
जो गुनियाँ साचा गुन तोले। भाओ प्रीती सब संग बोले।।
निज औगन को नित निवारी। सो गुनिया सतधरम विचारी।।
जो पंडत सत कथा विचारे। निरमान भाओ का चोला धारे।।
सत जीवन में जतन नित राखे। सो पंडत सतधरम को चाखे।।
भगत सो ही जिस प्रभ से हेता। बाद बदी नहिं हिरदे लेपा।।
प्रेम रंग मन मगन समाई। ऐसे भगत धरम गत पाई।।
ऊँच नीच संग एक परीती। सब सुखदाई राखे नीती।।
खिमा गरीबी घट माहीं बसाई। सतपुरष सतधरम कमाई।।
औगनकारी मन ये मीता। मारग धरम से होये पुनीता।।
नित ही मारग धरम में धायो। दुरलभ कीरत जग में पायो।।
सत भरवास सत जतन कमाई। गुरमुख चोला धरम का पाई।।

मारग धरम कल्यान का, सतपुरषाँ करी विचार।
'मंगत' जो साधे नित प्रेम से, उतरे भवनिध पार।।161

ऐसे मारग में नित चालो। जाँ से हरखे दीनदयालो।।
सतपुरषों की संगत धारो। सत सिखया हिरदे विचारो।।
दृढ़ निश्चय प्रभ चरन में राखो। सब कुछ तिसकी आज्ञा में भाखो।।
दीन दुखी की सेवा कीजो। सत मारग की रसना लीजो।।
धन सम्पत उपकार में त्यागो। सत सरूप में उठके जागो।।
सब जीवों पर कीजो दाया। परम पुरख साहब हरखाया।।
खिमा सरूप धारो नित नीता। परदुख विचार करो परहेता।।
पाप पुन्न नित करो विचारा। पाप करम सब तजो विकारा।।
उठ परभाती भज गोबिन्दा। दिवस रैन पावें आनन्दा।।
सन्ध्याकाल नित नाम धियाओ। पाप करम से मुक्ता पाओ।।
पूरे गुर की सेव कमाओ। मारग सुफल धरम का पाओ।।
सबका सुख मन माईं लोचो। कपट विकार कभूँ नहिं सोचो।।
परनारी तुल मात पहचानो। पर-धन तुल विख के जानो।।
पाप करम से मन को ठाको। सत मारग में निश्चय राखो।।
सरब माहीं देखो भगवंता। सबका दु:ख हरो गुनवन्ता।।
चार दिनाँ जग जीवन जानो। सत करनी हिरदे पहचानो।।
मान त्याग जियाँ सेव कमाओ। दुर्लभ मारग ये धरम का पाओ।।
निर्मल यतन सतगुर मिल कीजो। आनन्द सरूप मोक्ष पद लीजो।।

मन अपने को सोधिये, मारग धरम के माहीं।
'मंगत' कहे पुकार के, जुग जुग शान्त समाईं।।162

एह बिध धरम कमाओ मीता। सुफल जनम आगे सुखरीता।।
नित सतसंग सत कथा विचार। सत करम नित हिरदे धार।।
पूरन विशवास प्रभ चरन में राखो। सकल जगत प्रभता तिस जापो।।
संध्या प्रात:काल नित ध्याओ। दृढ़ नीयम ये गुरमुख पाओ।।
शुद्ध ब्यौहार करो दिन राती। कपट विकार कभूँ ना चाखी।।
एक दिन जग से चलना विचार। ताँ सो सत करम नित धार।।

दीन दुखी की सेवा धारो। परम प्रीत सब संग विचारो।।
जतन जतन कर सतधरम कमाओ। दुरलभ शांत परमगत पाओ।।
इन्द्री विकार से मन को ठाको। सत किरया नित अन्तर राखो।।
साहब चरन संग प्रीत अधिकाई। सिमर सिमर परम सुख पाई।।
सकली दात प्रभ हुकम पछानी। भूल कर हिरदे ना धरें अभिमानी।।
सरजनहार जो पुरख अबनासी। भाओ प्रीत जप नाम सुखरासी।।
करम विकार नर सहज ना जाई। आवागवन का फेर फिराई।।
सत परतीत प्रभ नाम जब पावें। करम विकार की मैल तब बहावें।।
मन अपने में मान नहिं राखो। सत धरम की कीरत नित चाखो।।
झूट देही का पावें विछोड़ा। सिमर दयाल सरब गत पूरा।।
उठत बैठत प्रभ चरन चित रहाई। सत विशवास पावें परम सुखदाई।।
सुपन समान जग देखन आया। नाम विसार के अन्त पछताया।।
ग़रब गुबार में अन्धमत होई। धरम विसार नर पावें ना ढोई।।
मानुष जनम का फल अधिकाई। सम्पत धरम जो हिरदे आई।।
सत मारग की रसना पाई। सतनाम की प्रीत लखाई।।
सत यतन नित हिरदे धारी। महा विकार रूप गरब निवारी।।
निहचल चित्त सत शांत परगासी। मानुष चोला तब भयो सुखरासी।।
प्रेम प्रीत सतनाम धियाई। कोट विगन छिन नाश समाई।।

बिपत हरन मंगल करन, प्रभ का नाम अपार।
'मंगत' जो ध्याये नित प्रेम से, तिस चरनी बलहार।।163

परकिरत का जाल अधिक बिस्तारी। बिना जतन नहिं उतरे पारी।।
साचा जतन नित मन माहीं विचार। अबगत रूप पावें मुरार।।
जुगत आहार ब्यौहार में धारे। संजम बुद्ध नित लेख विचारे।।
आहार पवित्र खुदया परमाना। ब्यौहार पवित्र जग निर्बाह वरताना।।
साची संगत सतपुरषों की धार। समाँ पाये सत कथा विचार।।
संध्या प्रातः प्रभ नाम चितार। बैठ इकान्त निश्चय ये धार।।
सब जीवों संग हेत पछान। सबकी सुख मन माहीं बखान।।

जगत की रचना पल पल विचार। अंत समय का नित करो शुमार।।
धरम के मारग में प्रीत बढ़ाओ। संचत माया सत करम लगाओ।।
सतपुरषों की सीख नित जाप। पाप करम का बिनसे ताप।।
साची प्रीत प्रभ चरन पछान। मन में बाँछो नित नाम निधान।।
साचे धरम का निरना धार। दिन दिन प्रीती अधिक विचार।।
वैर बखीली मद मान नहिं पेख। दासाभाव में जीवन देख।।
अपने बंधन का करो विचार। अपनी औधी का निर्नय नित धार।।
समय गया नर हाथ ना आई। विचरत काल में सत करो कमाई।।
कर दीन अनाथ दुखियों की सेव। मान त्याग पायें सत भेव।।
औगन मन के जो नित अधकाई। रसना प्रेम में दियो जलाई।।
एक दिन चलना निश्चय कर मीत। पर-उपकार धारो नित नीत।।
पर-दुख हरयो सुख नित वरताओ। साचा हुकम साहब चित्त पाओ।।
लोक की सेवा मन मैल गँवाई। लोक की सेवा चित्त धीर लखाई।।
लोक की सेवा मोह भ्रम नासे। निरमल प्रेम घट में परगासे।।
लोक की सेवा मारग कल्यान। सतपुरषों का ये सत फ़रमान।।
लोक की सेवा परलोक सहाई। जम का संकट नहिं सुपने पाई।।
लोक की सेवा में होये निरमान। साची कीरत पाई भगवान।।

लोक सेवा संसार में, निरमल धरम विचार।
'मंगत' भाओ निषकाम से, नित ही खाटो सार।।164

सदाचार

सदाचार की कथा सुनाऊँ। सदाचारी से बल बल जाऊँ।।
सदाचार है ज्ञान की सार। सदाचारी परसे करतार।।
बिना ववेक मन नित अँधियार। सदाचार ले होए उजियार।।
धरम करम की सकल ये सार। मन में आवे जो सदाचार।।
गुरू पीर की सिखया जोई। मन तन अपने लियो परोई।।
अपनी हिकमत त्याग ग़रूर। सदाचार का चढ़े सरूर।।
बिन सदाचार मन अगन सरीखा। बिन सदाचार सो नर जग फीका।।
बिन सदाचार ना पाए तत्त ज्ञान। सदाचार करे भरम की हान।।
मन तन में ठाँड उपजावे। सदाचार की रसना जो पावे।।
सो ही पण्डत वेद का वक्ता। सो ही क़ाज़ी कुरान का पठता।।
सो ही पोप अंजील पछानी। सदाचार की जो सार लखानी।।
सो ही गुरू जगत निसतारी। सो ही तपीशर तेज अधकारी।।
सो ही पीर हाजी है सो ही। सदाचार जो मन माहीं पिरोई।।
सो ही सियाना सत कुलवादी। सो ही ज्ञानी अपार अगाधी।।
सो ही मानुष सबका सिरताजा। सदाचार चित्त लेवे समाजा।।
सो ही मनुआँ अधिक बैरागी। सो ही गुनी परम गुनभागी।।
सो ही पैगम्बर सिद्ध अवतारा। सो ही बलकारी परम बलधारा।।
सो ही मित्तर परम सुखदाई। जो सदाचार में रहे समाई।।
प्रभ अपने को सो ही पहचाने। जुगत मुकत का भेद लखाने।।
सो ही आलिम सब इलम का दानी। सदाचार जिस करी पहचानी।।
मिथ्या जगत भरम ग़ुबार। सूझे ना कुछ पारावार।।
काम क्रोध मोह लोभ घनेरा। नित ही बुद्ध में छाए अँधेरा।।
सत्त असत ना सोझी आवे। अधिक बिकार में नित दुःख पावे।।

सतपुरष जग आया, मेटन को संताप।
'मंगत' सिखलावे ज्ञान गत, और साहब परताप।।165

गुरमुख रूप ये है सदाचार। मनमुख भरम हरे अंधकार।।
सत करम सदाचार सरूप। सकल मिटावे विखे के कूप।।
मानुष जीवन की है तत्त सार। सत करम की परसे कार।।
असत करम कुपथ तियागे। सदाचार की तब सिमरत जागे।।
भाओ भगत घर आए समावे। सँभल सँभल कर करम कमावे।।
सकल करम में होवे परबीन। अपनी ग़फ़लत को आपे चीन।।
तब सत सरूप का सिमरन पावे। भगत ज्ञान ले दुस्तर तर जावे।।
सदाचार ये बानी आकाश। साचा हुकम साहब अबनाश।।
जो नित रमे सो ही सुख पावे। चंचल मनुआँ धीर लखावे।।
सदाचार ये शक्ती करतार। सदाचारी देख भासे निरंकार।।
उज्जल नीती सत विशवासा। खिमा ग़रीबी में ले निवासा।।
अखण्ड चित्त हर सिमरन पावे। दर्शन सदाचारी से साहब दरसावे।।
सब जीवों पर होवे किरपाल। पर-दुख हरे मन रहे दयाल।।
शोभा कीरत इक करते की गाए। ले सदाचार हर रूप समाए।।
सदाचार अमरत भोजन जान। तृपते जीव मिटे भरम अज्ञान।।
सकल पदारथ जो जग दरसाए। भोग भोग कर नित तिरखाए।।
अमरत पान सदाचारी मन आया। सत परतीत प्रभ सिमरन पाया।।
ग़रब गरूर सकल विख नासे। दीन बन्दगी ले साहब अरदासे।।
कठन वेग मन का मटावे। शरधा कीरत हर सिमरन पावे।।
जग मिथ्या देख सत को खोजे। सकल विकार तज हर कीरत सूझे।।
शुभ करम में प्रीत उपजावे। तन मन मान त्याग जग सेव कमावे।।
भरम गुबार तब होई विनासा। सत सरूप पावे परकासा।।
बिन भोजन मन रहे तृपताई। अजर पुरष की शोभा पाई।।

सत करम की खोजना, देवे मन कल्यान।
'मंगत' दिन दिन शान्ती, होवे भरम की हान।।166

मिले सदाचार पावे जीवन की सार। करम विलक्खन से होवे निसतार।।
इन्द्री भोग में उपरसता भाखे। धीरज धरम अन्तर रस चाखे।।

कूड़ देही का मान निवारी। सत परतीत नित जपे मुरारी।।
अपना सुख नहिं मन को भावे। और सुख दे नित रीजावे।।
आप ना खावन लावन का चाओ। अमरत भोजन औरों को खलाओ।।
अपने तन की नहिं सेवा माँगे। अधम जीव की नित चरनी लागे।।
अपनी आप ना करे वडियाई। और कीरत रहे मन समाई।।
सबसे नीचा आप पछाने। सदाचार की सो गत जाने।।
दिवस रैन मन ये ही भाओ। और के सुख में नित वरताओ।।
दुखदाई को भी सुख देवे। सत सदाचार को सो जन सेवे।।
सतसरूप अबनाशी इक टेक। सत करम धरम का पावे लेख।।
मन के सकल विखाद निवारे। सो ही गुर पूरा विचारे।।
जिसके मन से आपामत नासी। खेम-कुशल सतबानी परकासी।।
छिन छिन मन का खेद निवारे। सत करम से जगत उद्धारे।।
साचे धरम पर रहे कुरबाना। सदाचार का तिस लेख पहचाना।।
सो ही पैग़म्बर प्रभ फ़रमान दिखावे। सदाचार का भेद समझावे।।
कुफ़र शैतान पर घात चलाए। सच बन्दगी का राह दिखलाए।।
हिरस खुदी की पढ़े तक़बीर। साहब देखन की दिखलावे तदबीर।।
हराम हलाल की करे पहचान। हलाल को खावे मिटे शैतान।।
सब कुछ देखे साहब की ज़ात। कूड़ी हिरस हराम पछात।।
हिरस त्यागे तब पाए हलाल। आपा मिटे तब होए कमाल।।
जीव जन्त पर रहम कमाए। रहमत ज़ात का राह दिखलाए।।
तन मन गाले विच अगनी सदाचार। सो ही पैग़म्बर देखे साहब दीदार।।

सदाचार है शिरोमनी, सत मारग निरंकार।
'मंगत' तिसमें जो मरे, सो ही जान अवतार।।167

जप तप संयम का फल ये जान। सदाचार की आवे पहचान।।
निष्काम करम करम-मैल को धोए। साचा सिमरन तब परगट होए।।
लोक परलोक में है सुखदाई। सदाचार चित्त विरत समाई।।

दो जहान का बन्धन काटे। परम गुरू सदाचार चित्त राटे।।
मरने से प्रथमे मर जावे। सदाचार का भेद जो पावे।।
ले सदाचार पाए अजब घराना। सकल जगत का बिन्द पहचाना।।
बड़ी करामत ये सिद्धी परवान। भरमत मनुआँ पावे इक ठान।।
सब जीवों के दिल इक सूत पिरोए। सदाचार की प्रभता जाँ होए।।
भरम हरे प्रेम दिखलावे। साचे साहब का मरम समझावे।।
साचा मज़हब और साचा पंथ। साचा ज्ञान सो ही सच ग्रन्थ।।
सबकी सार सबकी तहकीक। सदाचार जग साचा रफीक।।
इल्मो हुनर नीती कानून। पुत्तर धीया मर्द खातून।।
राजा परजा गुरू और शीष। भगती भगत विचारे जगदीश।।
सब ही बाँधे एक सदाचार। साचा हुकम जो है करतार।।
ऊँच नीच जो चक्कर दखावे। सदाचार का सब लेख चलावे।।
जितना जिसमें सदाचार समाए। इतनी ही तिसमें प्रभताए।।
नीच पुरष जो सदाचार से हीन। अन्ध बुद्ध सो नित मलीन।।
राजा जब आचार तियागे। जाए सिंघासन होए दुरभागे।।
बुद्धीमान जो आचार को छोड़े। भ्रष्टबुद्धी होए सिर अपना फोड़े।।
जो जो जीव आचार तियागे। दु:ख विकार तिन अन्तर जागे।।
जो कुल जाती देश बदआचारी। कट कट मरें दु:ख सहवें भारी।।
नित कलंकी कलंक में धाएँ। नित ही रोएँ मार के आहें।।
आठ पहर सिर चढ़े ग़नीम। छूट ना पाए सिर आई मुहीम।।

राज तेज और कीरती, सब ही होए उजाड़।
'मंगत' काया जगत की, पलटे ये आचार।।168

दुखिया जीव भयो आचार तियाग। सत को छोड़ असत में जाग।।
सकल बल होए जीव विनास। ज्यों कर धूप जलावे घास।।
अनक प्रकार औगुन चित्त धावे। नित ही जीव हान को पावे।।
साचा साहब सबका प्रतिपालक। सरब का रखयक सरब का मालक।।

अपना तेज दे जन प्रगटावे। सदाचार की जो राह दिखलावे।।
सकल दोख जीव के नासे। सतपुरष के सुन बचन बिलासे।।
कहनी रहनी का पावे भेद। बन्ध मुकत का समझे सुख छेद।।
अपनी उन्नति का आवे सबको चाओ। करम विलक्खन सहज मिट जाओ।।
मुर्दा जीवन फिर जीवन को पाए। सदाचार मन पान कराए।।
विखाद जाए मन होवे इक धार। आलस जाए होये हुशियार।।
विषे विकार से होवे विरक्ता। सत धरम ले होए जन मुक्ता।।
उत्तम करनी उत्तम रहनी को पाए। मन तन अन्दर सदाचार समाए।।
धन्न साधू सतगुर जग आया। सत करम सत धरम दिखाया।।
सब जीवों की त्रास मटाई। साचा मारग प्रभ का दिखलाई।।
सदाचार का समझावे भेद। जिसको परस जाएँ सब खेद।।
सत विशवास पुरशारथ सत जाने। सत विचार की करे पहचाने।।
निरमान भाओ परोपकार को सेवे। अपनी वस्तु बिन दूजे ना चित्त देवे।।
प्रेम परीती सब जीवों से राखे। सादा जीवन न्ति ही चित्त भाखे।।
नित सतसंग में राखे प्रीती। मरन विचारे पाए सदाचार की रीती।।
परम गुन में नित चित्त धारे। करम विलक्खन से हो निसतारे।।
अपने मन का विकार तियागे। सत करम में प्रीती जागे।।
दुस्तर जग में सुन सार उपाए। सत करम सतनाम चित्त आए।।
सत मारग में दृढ़ता नित राखे। पारब्रह्म तब अन्तर में भाखे।।

करम अकरम की सुध मिले, सतगुर सुने संदेस।
'मंगत' पावे परम गत, जो धारे आचार विशेख।।169

सदाचार के दस भूषण

सत् विशवास यानी यकीने पाक

जिसके मन विशवास नहीं, वोह तो भूत शैतान।
ना करनी की सूझ है, ना कर सके नादान।।

सो ही दोज़खी जानिए, बेयकीना जोए।
बादल वांग आकास के, बिन बरसे मिट जाए।।

बेयकीना होय के, दीन दुनी दोए हार।
ना दुनियाँ का सुख मिला, न अगला राह सँवार।।

संशे में ही चल गई, सारी औध अंजान।
आजकल भरवास में, प्यासा चला निमान।।

हुज्जतबाज़ी मन धरे, और घमण्ड आपार।
ना किसी की सीख ले, ना मन सीख विचार।।

अर्थ कछु ना पा सके, जो गुर पीर पर ना रखे यकीन।
हाथ धोए के चालिया, 'मंगत' अन्त बेदीन।।170

सत् पुरुषार्थ यानी साची कोशिश

जाँ के मन उद्दम नहीं, सो दलिद्री जान।
करनी तो कुछ ना करे, मुख से बड़ा गुमान।।

कौड़ी देवे ना हाथ से, हातिम नाम धराए।
क़दम सके चल एक ना, फूँक से पहाड़ गराए।।

मार सके ना कूकड़ी, सिंह शिकारी मान।
बना सके ना झोंपड़ी, माँगे तख़्त शाहान।।

एक पैसा नहिं हस्ती, गंज का बने अमीर।
चुल्ली भर पानी नहीं, बैठ बाग़ीचा सीर।।

करतूत रखे शैतान की, मोमिन रूप बनाए।
मुख से ही सो बावरा, बैठा वड़े पकाए।।

घालन में सो कायर है, खावन को हुशियार।
ऐसा मानुष जगत में, नित लेवे धृगकार।।

उद्दम ना नर छाडिये, जब लग देह में प्रान।
'मंगत' उद्दम जो रखे, नित अधिक पाए सो शान।।171

सत् विचार यानी साची सोच

जिसके मन विचार नहीं, पाथर सो नर जान।
वरख हज़ार रहे नीर में, निकले सूख सुखान।।

बिन विचार ना पा सके, दीन दुनी की सार।
ग़फ़लत में ही मिट जाए, जैसे धुआँ अंबार।।

करम देवे न फल कोई, जो कीजे बेसोच।
जतन अकारथ सब जाए, बैठा सिर को नोच।।

जिसके अन्तर सोच नहीं, सो तो कुफ़र शैतान।
कबीरा करे गुनाह नित, ख़सलत धर हैवान।।

दुनियाँ दुस्तर जाल है, बेसोचा दु:ख पाए।
बिना पहचान करनी करे, दरगह पाए सज़ाए।।

समझ सोच कर घालियो, होवे मुशक्कत पूर।
चले हुकम उस्ताद ले, 'मंगत' मिलें हजूर।।172

निर्मानता यानी आजज़ी

रहमत रब की पायके, मत कीजो अभिमान।
अन्दर तेरे वस रह्या, सब कुछ करे पहचान।।

माटी केरा पिंजरा, जो कीजे सरजीत।
अंत वडियाई जिस दी, इस बालू की भीत।।

धन जोबन और माल सब, है तिसकी नित दात।
अपना तो कुछ ना भया, मान करे कमज़ात।।

ज़ोर जुलम बहुता करें, होवें खाक आखीर।
मान गुमान छाड के, ले कफ़न होवे दिलगीर।।

कुफ़र काम शैतान का, आजिज़ मानुष ज़ात।
बन्दा करे गुमान जो, सो कीजे अपना घात।।

भूल कर ना कीजिए, कूड़ी देह का मान।
'मंगत' एक ही पलक में, उड़ जाएँ धूड़ समान।।173

पर उपकार यानी नेकी

इस दुनिया में आयके, खाट चलो कुछ लाभ।
आगे वडी सरकार है, देवें पूर हसाब।।

ख़ाली आया ख़ाली जाए, होए मालिक हफ़त अक़लीम।
ख़ाक सिरहाने है खड़ी, नर खोलो अकल सलीम।।

जो दुनिया में आया, जाए प्यासा अन्त।
जतन करे बहु भाँत के, तो भी दुखिया जन्त।।

चार दिन की खेड है, रहना नहीं यहाँ मीत।
नेकी उठके घाल लो, लें जम दरवाज़ा जीत।।

पीर पैग़म्बर औलिया, कर नेकी पावें छूट।
बिन उपकार के मानवा, सहे जमाँ की कूट।।

मन से करे उपकार जो, दुखी दीन के साथ।
'मंगत' शोभा जगत करे, आगे बख़्श देवे सो नाथ।।174

अपनी वस्तु पर संतोख यानी हक शनासी

हक़ पहचाने अपना, पर-हक़ देवे ना चीत।
हक़ पराया जो खाए, सो ही नर बदनीत।।

परनारी परधन, परनिन्दा जो राख।
सिफ़त ये ही शैतान की, हिरदे में लो भाख।।

परनारी के संग से, रावन पाई घात।
एह गुनाह कबीरा जो करे, दो जहान दुख पात।।

बिना सबर और शान्ती, दुनिया रूप अँगार।
पाप करे बहु भाँत कर, जल जल भए अंधियार।।

जो ये करे बिकार नर, दोए जहाँ का चोर।
एथे पावे राजडंड, आगे इज़राइल करेगा धौड़।।

परनारी सम मात के, परधन बिख कर जान।
परनिन्दा वड ताप है, तापे तीन जहान।।

भूल कर ना पाइये कुसंग, ना मन खोट विचार।
साहिब दा फ़रमान सुन, 'मंगत' करे पुकार।।175

प्रेम यानी ला-ग़र्ज मुहब्बत

जिसके मन में प्रेम नहीं, सो नर जान स्वान।
आठ पहर भौंकत फिरे, सब वैरी दिसे जहान।।

प्रेम सिफ़त है साहब दी, बाद सिफ़त शैतान।
जिनके अन्दर प्रेम नहीं, सो नित बाद बखान।।

बाद बदे सो मूढ़ है, करे जीव की घात।
आगे राह दिखाय के, पीछे मारे लात।।

बाहरों करे प्यार बहू, मन से देवे हान।
मलहम लगाए जख़म पर, दे निमक की छान।।

अन्तर धारे कपट को, बाहरों प्रेम दिखाए।
चीता चोर कमान ज्यों, निव के घात कमाए।।

जिसके मन में और है, बाहरों और दिखाए।
दग़ाबाज़ सो जानिए, ना भूलिए बात मिठाए।।

साचा प्रेम जब तक नहीं, तब लग कुफ़र विकार।
अपनी ख़ुदी को धार के, और की खाल उतार।।

दोए जहान बेहुरमती, जो पाए ना प्रेम की सार।
प्रेम बिना मानुष को, जानो ढोर गँवार।।

छाडो अपनी खुदी को, सुनयो राह निजात।
मानुष से देवत होए, जो मन प्रेम कमात।।

सिद्ध तपीशर औलिया, नबी वली अवतार।
एक प्रेम परीत से, 'मंगत' भए निसतार।।176

सादगी

जिसके मन में सादगी, साचा सादिक़ सोए।
अपना सुख दूजे देवे, माने रब रज़ाए।।

कूड़ी देह का मान तज, सिमरे परवरदिगार।
मरयादा का करे खान पान, चाहे घर में भरे अंबार।।

आदत को क़ाबू करे, बहुता ना ललचाए।
जेती भोगे सम्पत, अन्त पियासा जाए।।

रोगी सोगी सो ही है, जिसका मन अय्याश।
खावे अमरत अन्तर, काढे बिख की बास।।

कूड़ी देह सँवारता, ज्यों वेष्या का साँग।
कुल कलंकी सो जानिए, करे पाप बहुराँग।।

निरलज्या बेअदब सो, सादा मन जाँ नाहे।
धार खुदी क़लबूत में, वाँग भूत नाचाए।।

सादा खावन सादा लावन, सादा बचन बिलास।
'मंगत' रहनी देव की, जो पाए तो पाप विनास।।177

सत् संगत

साची संगत बिन, तीन काल है सन्ताप।
मनमानी अपनी करे, दुःख पावे दिन रात।।

सोहबत जैसी जिसकी, ऐसा होये रूप।
बगला हंस के डार में, हो गया हंस सरूप।।

चोरी यारी रंग तमाशे, मन को इनसे ठाक।
संगत कर सतपुरष की, मालिक पावें पाक़।।

मन में तो शैतान है, सच सोहबत से होए दूर।
जब मन आया चाँदना, अंधकार भयो काफूर।।

कहनी रहनी मरन और जीना, सबका पावे भेद।
संगत साची में रमे, बिन यतन जाएँ सब खेद।।

भूल कर ना कीजियो, दुरजन का नर संग।
मिले सदाकत ना कभी, उल्टा मिले कलंक।।

पानी ज्यों तरावत, देवत कुल संसार।
'मंगत' साचे संग से, दिन दिन सुख आपार।।178

मौत की याद

मरना मनों विसार के, पाप करे बहु भान्त।
धार खुदी शैतान की, पावत ना कभूँ शान्त।।

मरना जिस विसारिया, सो काफ़र बेपीर।
जीवन की आसा माहीं, गहरी करे तक़सीर।।

मुरशद कामल जगत में, एको मौत पहचान।
जिस मरना मन मानिया, करे ना दूजे हान।।

मरने के ही ग़म से, पाए साहब दीदार।
हिरस गई संसार की, मिट गये सकल बकार।।

और का मरन देखता, अपना मरन भुलाए।
ये ही ग़फलत धार के, बेहद पाप कमाए।।

जिसको मरने का खौफ़ है, सो ही सूफ़ी जान।
पाए राह निजात की, मिल मुरशद विख्यान।।

जो आया सो जाएगा, ये निश्चय कर मीत।
नेकी को नित खाट लो, आगे सुख की रीत।।

इक मरना मन याद कर, दूजा साहब की याद।
तीजे नेकी याद कर, मंजूर होवे फ़रयाद।।

मानुष कामल सो ही है, जो अन्त का करे विचार।
झूठा जीवन देख के, सेव करे संसार।।

दस भूखन सदाचार के, जो जन लेवे धार।
तीन लोक का सुख मिले, मानुष देह बलिहार।।

सत करम सुख देत हैं, हरें दु:ख संताप।
मन तन से जो सेंवदा, पावे जग परताप।।

सब संगत ये बूझयो, करनी जग परवान।
जैसी जैसी जो करे, 'मंगत' फल पहचान।।179

सादगी

करमभोग में रखे मरयादा। पाप करम हरे नित परमादा।।
अपने पाप की करे नित हानी। सत करनी मन माहीं पछानी।।
जीवन सादा मुख साधन सार। सादा जीवन सब हरे विकार।।
सादा जीवन देव सरूप। वैष्या साँग अगन का कूप।।
भूल कर ना मन लियो अय्याशी। यही कलपना काल की फाँसी।।
पहनावा सादा नित राखे। जाँ से गरब देही नहिं भाखे।।
सादा पहनावा गुन रखे अपारा। तुच्छ सम्पत में चले गुज़ारा।।
सब जीवों से प्रीत लखाई। सादा रहनी जब चित्त में आई।।
ग़रब ग़रूर देही सब नासे। सादा रहनी जब मन परगासे।।
दु:ख सरूप सुख रूप हो जाये। सत सादगी जब हिरदे आये।।
नित सुतन्तर नहिं तमोगुन व्यापे। ज़ोर जुलम नहिं पाप को जापे।।
सादा रहनी परहित उपजावे। साहब शोभा हिरदे में आवे।।
सादा रहनी चित्त पर उपकारी। पाप करम से पावे छुटकारी।।
सादा रहनी मन देवे खुशहाली। सब जीवों से मिले साँझ निहाली।।
सादा रहनी प्रभ याद करावे। भाओ भगत अन्तर में पावे।।
सादा रहनी विकार मल धोवे। सत विचार हिरदे में जोवे।।
सादा रहनी प्रेम सरूप। बादमुबाद हरे बिख का कूप।।
सादा रहनी परताप बढ़ावे। पर दु:ख हरना चित्त कारज आवे।।
सादा रहनी प्रभ धाम पहुंचाये। विच गरीबी सत सम्पत पाये।।

सादा जीवन जिसका, तिसका मन परसन्न।
'मंगत' साधन जो करे, पाए अमोलक धन्न।।180

सादा रहनी देवगत देवे। भाओ प्रीत जो हिरदे में सेवे।।
मन में सादगी जब आन समाई। तब ही सादा जीवन पाई।।
छिनभंगुर जब देही पहचानी। सत करनी चित्त आन समानी।।

काल सरूप जब कियो विचारा। सत धरम का मारग तब धारा।।
सादा रहनी से देही अरोग। नित नित पावे धरम संजोग।।
सादा रहनी इस भाँत रहावे। जम का कंकर तब नहिं पावे।।
आहार ब्यौहार को सादा कीजे। सत विचार पल पल लीजे।।
मदिरा मांस और नशा विकारा। तिनको त्यागे करे धरम विचारा।।
जैसा आहार मन रूप सो धारी। कभूँ ना कीजो नर आहार विकारी।।
आहार पवित्तर जो जन कीजे। पवित्तर विचार सो ही जन लीजे।।
जैसा आहार से रक्त उपजाये। ऐसी कामना मन में उठ धाये।।
जैसी कामना ऐसे करम को कीजे। पाप भोग नित दु:ख लखीजे।।
कुल जाती का परकाश जो माँगे। आहार पवित्तर संजम चित्त बाँधे।।
दीरघ आयू अरोग को देवे। आहार पवित्तर जो नित सेवे।।
नित का करम ये करो सुधार। गुन अनेक तिसमें विचार।।
जैसा आहार वीरज होए ऐसा। तिस अनुकूल चले बंस ही तैसा।।
मलीन करम अशुद्ध आहारी। तीन लोक में नित होये ख़वारी।।
प्रथमे साधन ये ही विचार। अनयुक्त पदारथ नहिं कीजो आहार।।
अनेक पदारथ हैं जग माईं। भ्रष्ट आहार नर दुष्ट कमाईं।।

जिब्भा की रसना माहीं, मत हो ग़लतान।
'मंगत' कुंडी नरक की, जीव करे हैरान।।181

शुद्ध आहार

आहार पवित्तर देव बुद्ध परगासे। देव करम में कीजे बासे।।
आहार पवित्तर सब नीती परगासे। राज सुराज की सतगत भासे।।
आहार पवित्तर अपरम गुन देवे। पवित्तर आहारी प्रभ चरन को सेवे।।
आहार मलीन नित करे अशांत। संशे उपजें नाना भ्रान्त।।
सतपुरषों की कहनी ये सार। आहार मलीन देवे विकार।।
भंग तम्बाकू चरस को पीवे। बुद्ध मलीन नहिं धरम को लीवे।।
मदिरा माँस का जो नित आहारी। बुद्ध चण्डाल तिसमें विसतारी।।
गज़ब गरूर देही बहु राखे। अत ही पाप करम को भाखे।।
ना चित्त शांत दया नहिं बोधे। कहर को धार नरक दर सूझे।।
जो जन खाना विचार से खाये। तीखण सुरती नहिं रोग को पाये।।
देह का पिंजर आहार परमानी। जैसा आहार तेही देह प्रगटानी।।
द्रब को धार ना अनमत होई। आहार भ्रष्ट सकली मत खोई।।
जो कोई अपना जीवन सुधारे। शुद्ध आहार मन माहीं विचारे।।
जीभा रसना ना नर तृपताई। भाँतक भाँत जो रस को खाई।।
सबसे ऊँच नीती परमान। शुद्ध आहारी सबमें परधान।।
पाप पुन्न का आवे विचार। निर्मल रीती से कीजे आहार।।
प्रभ ने कला ये अजब बनाई। शुद्ध तेल से नित संचाई।।
सत पुरषारथ रहनी सत पावे। सूक्षम आहार शुद्ध रूप का खावे।।
मन की अगनी को नित बुझाये। जल विचार तिस ऊपर पाये।।

खट्टा मीठा तीखणा, चटपटा नित खाए।
'मंगत' दीरघ वासना, मन को नित भरमाए।।182

मन साधन का सुनो उपाये। साची करनी लियो कमाये।।
निर्मल आहार करो दिन राती। आहार भ्रष्ट त्यागो दुःख दाती।।
निर्मल आहार विचार सत देवे। देह अरोग सत धरम को सेवे।।

जीवन रखया ताईं आहार पछान। जैसा आहार करे पाये निधान।।
सत मारग को सो जन सोधे। जो आहार भ्रष्ट का करे निरोधे।।
भूक समान भोजन को कीजे। सत ठाकर की महमा लीजे।।
अनंक पदारथ जिस बनाये। तिसकी प्रभता अन्तर गाये।।
तिसकी दात सब कुछ जाने। साची सेवा अन्तर पहचाने।।
देव भोजन इस भाँत से खाई। देव बुद्धी तिससे प्रगटाई।।
पाप पुन्न का पायो विचार। निर्मल करनी लई अन्तर धार।।
प्रभ दाते की प्रभता जानी। निर्मान भाओ अन्तर पहचानी।।
वैर विनास प्रेम परगासी। तिस ठाकर की महमा भासी।।
सरब जियाँ का जो रखवारी। तीनकाल जो किरपाधारी।।
रंग रंग पदारथ परगट कीये। सब जीवों को नित वरतीये।।
सरब प्रतिपालक आप स्वामी। तिसकी शोभा परम सुखधामी।।
प्रभ दाते की दात पछान। मूरख मन का त्याग गुमान।।
सरजनहार सदा चित्त राख। पूरन गुर की सुन ये साख।।
आनन्द दाता सब दोख निवारी। नित नित तिसके चरन पधारी।।
प्रेम भगत पाओ परसाद। दूर होवें सब मन अपराध।।

निर्मल आहार नित कीजिये, निर्मल पाइये विचार।
'मंगत' महमा साहब की, तब चित्त करे चितार।।183

शुद्ध व्यवहार

सत साधन ब्यौहार में धार। उज्जल नीती का आवे विचार।।
अपने हक़ पर रहे संतोखी। पावे शांत सरब तिरलोकी।।
ऐसा ब्यौहार कभू ना कीजो। दूजे कष्ट जिस माहीं लखीजो।।
हक़ परमान नफ़ा सुखदाई। परहक़ अगन बड़ी दुखदाई।।
मान धार नहिं करे विचारा। परहक़ सेव पायें नरक दुआरा।।
दीन दुखी क्या नर द्रब धारी। एक दृष्ट से करो ब्यौहारी।।
भूल करके ना दूजा हक़ खाओ। दीरघ पाप ये ही दुखदाओ।।
ब्यौहार पवित्तर में लछमी जो पाये। अनखुट होवे नहिं घाट को जाये।।
अपने मन में नित शांत समाये। परहक़ में जो चीत ना लाये।।
शुद्ध ब्यौहार ये देव ख़जाना। रिद्ध सिद्ध तिसमें रहे परधाना।।
शुद्ध ब्यौहारी शोभा अपार। साचा हुकम माना करतार।।
बाल न बीका तिसका होये। सत ब्यौहार जो मन में जोये।।
सत ब्यौहार का धन सुखदाई। साचे धरम में सो वरताई।।
शुद्ध ब्यौहारी त्रैलोक को जीते। तिसका पदारथ करे शुद्ध नीते।।
सत ब्यौहारी मन परसन्ता। यथा परापत आज्ञा भगवन्ता।।
साधू संत गुर पीर आचारी। तिस दाते दर भये भिखारी।।
सत धरम से द्रब कमाये। साचे करम में नित वरताये।।
प्रजापत रूप सो शुद्ध ब्यौहारी। तिसका दर्शन करे आप मुरारी।।
सो गृहस्ती बैकुण्ठ को जाये। उज्जल करम मन माहीं कमाये।।

शुद्ध ब्यौहारी पुरष जो, अघट्ट लछमी पाये।
'मंगत' सत ब्यौहार में, लछमी वास कराये।।184

ब्यौहार सरूप ये मन का होई। जैसा ब्यौहार ऐसी पत जोई।।
शुद्ध ब्यौहारी मन सदा अचिन्त। सत संतोख हिरदे जपन्त।।
शुद्ध ब्यौहारी का देव परिवार। प्रेम सरूप का वाँ परचार।।

शुद्ध ब्यौहारी चित्त धरम में धारे। पल पल आज्ञा साहब विचारे।।
शुद्ध ब्यौहारी नहिं करे गुमाना। सकली सम्पत पेखे भगवाना।।
शुद्ध ब्यौहारी का चलन सुखदाई। नित नित प्रभता साहब की गाई।।
शुद्ध ब्यौहारी द्रब धरम के ताहीं। अशुद्ध ब्यौहारी नित भोग कमाईं।।
शुद्ध ब्यौहारी मन शुद्ध आचार। भाओ भगत हिरदे विचार।।
शुद्ध ब्यौहारी दूजे सुख देवे। साचा साहब तब हरखीवे।।
शुद्ध ब्यौहारी की साहब रास। आज्ञा साहब में करे बिलास।।
शुद्ध ब्यौहारी के मन संकोच। अर्थ यथारथ खर्च को लोच।।
शुद्ध ब्यौहारी नित पाप तियागे। मरन विचार सत धरम में जागे।।
शुद्ध ब्यौहारी उत्तम गत पावे। जुग जुग जीवन निरमल ध्यावे।।
शुद्ध ब्यौहारी शुद्ध नीयत राखे। सकली सम्पत तिसका दर भाखे।।
देव परिवार पावे शुद्ध आचारी। जो जन होवे सत ब्यौहारी।।
सब मानुषों का ये ही अधिकार। पल पल कीजो शुद्ध ब्यौहार।।
साची करनी ये ही परधान। परहक़ देखे ज़हर समान।।
मन मूरख के नहिं दाओ विचारे। सँभल सँभल कर करे ब्यौहारे।।
परम साधन नित ही साधो। निरमल करनी अन्तर आराधो।।

सत विचार तब जानिये, जब करनी निर्मल पाये।
'मंगत' साधन सार है, मिटे भरम परछाये।।185

सो गृहस्ती मुकत सरूप। शुद्ध ब्यौहार लखे जगत अनूप।।
लेन देन में शुद्ध नीयत राखे। परहक कौड़ी नहीं चित चाखे।।
करम बंधन ही दु:ख ये भारा। पाप करम उपजावे गुबारा।।
अशुद्ध ब्यौहार बुद्धी को नासे। विचार रहित दुरमत परगासे।।
अशुद्ध ब्यौहार मोह अगन बढ़ावे। लाख करोड़ी में नहिं तृपतावे।।
अशुद्ध ब्यौहार अधिक भय देवे। चोर चतुर का संकट लेवे।।
अशुद्ध ब्यौहार को लज्जित नाहीं। निरलज होके पाप कमाईं।।
अशुद्ध ब्यौहारी का कपटी परिवार। अन्तरगत सब करें बिकार।।

लज्या शरम अदब ना कोई। एक एक पर शत्रू होई।।
अशुद्ध ब्यौहारी का चित्त बिकराल। कभूँ ना सिमरे दीनदयाल।।
अशुद्ध ब्यौहारी अन्तर बदनीत। अपने सुख की पाले प्रीत।।
अशुद्ध ब्यौहारी का कपट विचार। परनिन्दा परहान को धार।।
अशुद्ध ब्यौहारी चित्त मित्तर ना कोई। वैर बिकार की माल पिरोई।।
अशुद्ध ब्यौहारी का गुरु पीर न कोई। धार अभिमान घरम पत खोई।।
अशुद्ध ब्यौहारी भये सबका दोखी। निसदिन चाल चले अनोखी।।
अशुद्ध ब्यौहारी चित्त सदा बिकार। पल पल जीवन में दु:ख धार।।
नरक सरूप तिस जीवन होई। एक पलक में सब सम्पत खोई।।
तिसका जीवन अती दुखदाई। पाप की सम्पत पल नाश हो जाई।।
अपनी करनी पर अन्त को रोवे। जीवत में जो पाप को जोवे।।

पाप करम जमरूप हैं, अन्त देवें दु:ख भारी।
'मंगत' ऐसा करम ना कीजियो, जो अन्त होवे दुखकारी।।186

सेवा

सत सेवा को हिरदे धार। सत साधन ये परम गुन सार।।
सत सेवा सब बंधन नासे। परम धरम में कोई गुनी निवासे।।
नित उठ राखो ये ही जतना। पाप करम सब मिटे कलपना।।
अपना पाप तब ही नर जाये। सेवा धरम जो सार को पाये।।
निष्काम सेवा सत सेवा होई। कल्यान सरूप ये धरम पिरोई।।
सेवादार मन सदा निहाल। पाप कूप काटे जंजाल।।
अर्थ छोड़ जो सेवा धारी। तिस जन को आये मिले मुरारी।।
सेवा कर नहिं पाये अभिमाना। साचा मारग धरम पहचाना।।
सेवा से शुद्ध नीयत होवे। सत परतीत धरम ये जोवे।।
सेवा से मन परहक़ छोड़े। गरब शैतान की गरदन तोड़े।।
सेवा करे से बुद्धी परगासे। सत सरूप अन्तर में भासे।।
सेवा करे मन होये निरमाना। साचा ठाकर तिस कियो पहचाना।।
सेवा करे से मन सुख छोड़े। निज सुख आतम हिरदे जोड़े।।
सेवा करे पावे गत देवा। धरम सरूप केवल ये सेवा।।
जिस मन को कुछ सोझी आई। पर उपकार जीवन तब पाई।।
मन की अगन शांत ना होई। पर की सेव ना हिरदे जोई।।
सब वस्तू संसार की जोई। पर-अर्थ जीवन सबका होई।।
बरिच्छ सरूप पर के ताईं। फल छाया को नित वरताईं।।
जल का रूप दूजे सुख धरे। आपा मिटा सरजीवत करे।।

अम्बर वायू अगनी, नित ही सेवा धार।
'मंगत' मूढ़ा मानुष, नहिं सूझे कुछ सार।।187

जो जो जग आये अवतारी। तिनका जीवन पर-उपकारी।।
राम कथा क्या कृष्ण का खेला। पर-उपकार का रचियो मेला।।
हरीचन्द और मोरधज भूपा। पर-उपकार का शुद्ध सरूपा।।

ब्रह्मा बिशन महेश अगाधी। पर-उपकार को नित नित साधी।।
बावन परशू नरसिंघ आये। पर-उपकार ताईं सीस धराये।।
कपिल कनाद गौतम और व्यास। पर-उपकार में करें निवास।।
गौतम बुद्ध ऋखब महावीरा। पर-उपकारी धर आये सरीरा।।
रामानन्द शंकर आचारी। सीस दियो नित पर-उपकारी।।
दादू कबीर नानक तपधारी। पर-उपकार ताईं चोला धारी।।
ईसा मूसा दाऊद और हातम। इब्राहीम मोहम्मद सुखदातम।।
फैसागौरस और सुकरात। ज़रोदश्त उपकार कमात।।
अनगिनत ना गिनती करूँ शुमार। साध का चोला करे उपकार।।
साची सिफ़त साचा निशान। पर-उपकार साचा फ़रमान।।
बन्ध खुलासी सोही जन पाये। पर-उपकार में चीत लगाये।।
सतपुरषों का जीवन सार। रुच रुच मन में धरें उपकार।।
परदु:ख हरना हिरदा निर्मल कीजे। सत परतीत जो अन्तर सीजे।।
परम धरम शकत अपार। जो जन परसें तिस तों बलहार।।
बड़ी कुरबानी साचा ये त्याग। हिरदे आवे सेवा अनुराग।।
अपना सीस निवारे जोये। साचा सेवक जग में सोये।।

मन अपने को सोधिये, विच मारग पर-उपकार।
'मंगत' ये ही बन्दगी, भव से करे निस्तार।।188

अपने आप का करो कल्यान। सत करतार का सुन फ़रमान।।
सतकरम सत-सेवा धार। मन का नासे पाप गुबार।।
अर्थ रहित जो सेवा धारी। मानुष जनम की पाई सतकारी।।
दीनदयाल परमेश्वर ध्याये। साचा हुकम सत-सेव कमाये।।
सरब जियाँ का भयो हितकारी। परदु:ख हरना नित कार विचारी।।
धरम का मूल सेवा ये जानी। दिन दिन प्रीत प्रभ हिये पहचानी।।
इच्छया रोग का दारू ये ही। सत-सेवा मन होवे सनेही।।
ज्यों ज्यों सेवा में प्रीत बढ़ाये। आपामत दु:ख मूल उड़ जाये।।

पर का सुख निज दु:ख भुलाई। मारग शान्त का लेख लखाई।।
पर-हित जीवन वैर विनासे। एको प्रीत सबमें परगासे।।
दीन दु:खी की सेवा जोई। मोह अगनी तब शांत समोई।।
पल पल सेवा जो हिरदे धारी। साचे प्रेम की चढ़ी खुमारी।।
जग को मिथ्या सच राम दिखायो। साची सेव से परम गत पायो।।
लोक परलोक में पाई जयकार। साची सेव जो कियो विचार।।
अगनी तृषना शांत समाई। सत सेवा जब हिरदे आई।।
छिन छिन सत सरूप को गाये। आपा त्याग परम सुख पाये।।
तन मन धन का जो दातारी। साची सेव तिस हुकम विचारी।।
साची सेव ये साचा करम। साची भगती ये साचा धरम।।
मन की मैल सहजें उतराई। साची सेव का साबन लाई।।

सेवा तुल नहिं धरम है, सेवा तुल नहिं ज्ञान।
'मंगत' सेवा धरम से, हरी भरम बिख खान।।189

पर सेवा जिस हिरदे ध्याई। राम रतन सो ही जन पाई।।
सबके संकट हरनेहारा। इक परमेश्वर करो विचारा।।
जो तूँ साहब से मेला चाहें। साहब की करनी हिरदे ध्यायें।।
पर सेवा निज फ़रज़ पहचानी। ग़रज़ त्याग भरम की खानी।।
ज्यों ज्यों सेवे मन धीर समाये। सत परमेश्वर की प्रभता पाये।।
तुच्छ जीवन पर होये निरासा। पर-की सेव में कीना बासा।।
महापुरष सो मुकत सरूप। पर की सेव घाले सुखरूप।।
औखद साचे नाम की खाये। पर की सेव हिरदे में लाये।।
दीन ग़रीबी में रहे लवलीन। सत ठाकर को हिरदे चीन।।
भरम त्याग मन लीन समाई। निष्काम विरत घर परगट पाई।।
प्रभ की चरनी पायो वासा। सतगुर सीख में लियो निवासा।।
औगनकारी मन निरमल भयो। पर की सेव परमपद दयो।।
नित बलहारी तिसके चरना। पर की सेव में जो विचरना।।

सुकृत सीख सन्तन ने दीनी। दुरमत रोग की दुबधा छीनी।।
निरमल सीख पल पल कमाई। निष्काम करम मारग को पाई।।
जगत बखेड़ा मारग था मीता। सतगुर सेव से पाई जीता।।
पर की सेव हिरदे में पाई। खिमा दया चित्त अन्तर आई।।
साचे नाम के नीर संग धोई। तब ये सुरता निरमल होई।।
परम आनन्द प्रभ पूरन पायो। निष्काम करम में लीन समायो।।

मारग दुरलभ जगत में, पर-सेवा निषकाम।
'मंगत' तिसमें विचर के, निरभय पायो धाम।।190

साची सेव करो मन मेरे। परम धरम गुन देत घनेरे।।
सेव बन्दगी मुकत द्वारा। सेव बिना नर मुगध गँवारा।।
सकल धरम की सार ये मीता। साची सेव से मन हो पुनीता।।
दुरलभ कारज करो पहचान। साची सेव मिले भगवान।।
जो जो सेवे सो ही सुखरासी। सेव पाए सब विगन विनासी।।
मन तन अन्दर सेव कमाए। कूड़ कपट की मैल वँजाए।।
साचा भगत ले साची कार। भाओ प्रेम से सेवे करतार।।
सत सेवा मल दोख निवारे। गरब गुमान सब भरम को टारे।।
बिन सेवा मन उज्जल नाहीं। धरम करम बहु राखे मन माहीं।।
साची सेवा प्रभ रूप मिलाए। साची सेवा धरम अधिकाए।।
मन उज्जल नर ताँ का पहचानो। सेवा प्रेम सब जीवों मन आनो।।
पारब्रह्म का ये ही तप ध्यान। तन मन त्यागे सत सेव कल्यान।।
मन की अगन होवे तब दूर। हर के द्वार के बने मज़दूर।।
उट्ठत बैठत मन सेवा धारी। सकल जियाँ का होवे अधिकारी।।
ये ही साचा धरम पहचान। सत सेवा परसो भगवान।।
कुटल कठोर मन पावे शान्त। सेवा अगन करे भसम भरमन्त।।
बिन सेवा ना पाए कुछ सार। दीन दुनी दें दोनों हार।।
धन्न पुरष जिस हिरदे को धोया। हर की सेव राखे मन जोया।।
सकल गुमान हर सेव से जाए। अबगत आनन्द सो ही नर पाए।।

जप तप संजम तब ही फल देवें। साची भाओ से जब हिरदे सेवें।।
सेवा करे सबका बल लेबे। महाबली बल सेव को सेवे।।
साचा जतन ले अमरत नित पीवे। साचे नाम में नित जीवन जीवे।।
साधजनां ने कियो फ़रमाना। सेव टहल से हरो गुमाना।।

साची सेवा जब मिली, तब मन को भया आनन्द ।
'मंगत' सेवा धरम से, गयो गुबार द्वन्द।।191

परम शकत सेवा ये जान। प्रभ का तेज उमड़े निरवान।।
तन मन धन तीनों को त्यागे। पर उपकार की रसना में जागे।।
सेवा करन से मन भए अरोगी। धरम करम सत ज्ञान सँजोगी।।
कुल जाती सो ही बलवाना। जिस दीन दुखी की सेव पहचाना।।
प्रभ अपने से माँगो नित नीत। साची सेव हर भगत पुनीत।।
घाल कमावे करे उपकार। राह पहचाने साचा करतार।।
सम्पत धन जो सेवा में देवे। चार गुना परगट हो लेवे।।
मानुष जनम का भए उद्धार। सेव सेव हरचरन निरंकार।।
सेवा ज्ञान भगत अनूप। जो सेवे होवे आनन्दसरूप।।
कुल जाती परवार होवे हरया। साची सेव ले हर चरनी पड़या।।
नित आनन्द प्रभ निरवान। सेव सेव कर करें पहचान।।
साध जनाँ की हो चरनी धूड़। गरब गुमान त्याग दु:ख दूर।।
दीन आजज़ी हरचरन पियार। सिमर सिमर भए दु:ख छार।।
सो ही साधू तत का वादी। साची सेव ले हरी उपाधी।।
पल पल जीवन अपना सोधे। सेव बन्दगी हिरदे में बोधे।।
अन्न बस्तर और हाथ से करे सेवा। निष्काम विरत से हरखे सो देवा।।
तन मन धन इक साहब का माने। तीनों दे के हर सेव पहचाने।।
निर्मल होवे मन बड़ा बकारी। दर्शन देखे घट माहीं मुरारी।।
अपने प्रन को नित ही दृढ़ राखे। साध बचन को हिरदे में भाखे।।
दुरमत जाए परकासे हरनाम। अघट नाद संग सुरत बिसराम।।

अपना खोटा खरा पहचाने। मारग साचे में सुरत ग़लताने।।
साची संगत से पाया परसाद। सेव सेव के हरया परमाद।।
पूरे गुर की भई परतीत। साचा धरम पायो सुखरीत।।

खिमा दया और बन्दगी, साचे प्रभ का भेख।
'मंगत' हरे बिकार सब, पाए आनन्द आलेख।।192

सकल पाप का मूल अभिमाना। गुनी ज्ञानी नित भरमाना।।
अनंक जतन जो भी नर धारी। मन का मान नहिं जाये अन्धकारी।।
सहज मारग ये करो पछान। पर-की हेत पर-सेव ध्यान।।
वैर विकार ममता सब नासे। पर-का हेत जो अन्तर भासे।।
मान मद जाये गुमाना। पर-की सेव जो करी पछाना।।
प्रभ का साचा हुकम पछान। पर-की सेवा हिरदे आन।।
सेवा करत मिले अबनासी। काल करम की काटी फाँसी।।
परम योग परम ज्ञान। पर-की सेव मिले निरमान।।
सरब जियाँ की धूड़ रमाई। दृढ़ निश्चय से सेव कमाई।।
मान त्याग होये निरमानी। साची भगती सार पछानी।।
प्रेम सरूप भगती का जान। प्रेम पायें जब तजें गुमान।।
पर-की सेव जो हिरदे धारी। जाये गुमान भरम अन्धकारी।।
दीन दु:खी का भाओ विचारी। अपना सुख नित ही वरतारी।।
अधिक प्रेम राखे मन माहीं। सबमें देखे एको साईं।।
मिथ्याकार दरसे संसारा। सत सरूप केवल करतारा।।
मिले बैराग संशा सब जाये। साची सेवा सत धाम पहुँचाये।।
मन की बाँछा पूरन होई। जो चित्त पर-की सेव परोई।।
सो वडदाता परम ज्ञानी। एह बिध रसना जिसने जानी।।
दुरमत मूल जाये हंकार। घर में पावे शबद विचार।।

साची सेवा पाय के, मन के हरे विकार।
'मंगत' मारग धरम का, साचा ये उपकार।।193

सत सेवा हिरदे धरो, बृच्छों की मत ले।
धार भाओ निष्काम को, फल छाया और को दे।।

नदी नीर ज्यों उजला करे, सब दुर्गन्ध ले बहाए।
ऐसे भाओ निषकाम से, तूँ पर-की सेव कमाए।।

मन तन को निर्मल करे, जो पर-की सेवा धारे।
भरम स्वारथ अगन से, सो जन उतरे पारे।।

सेवा को धारण करे, मन में आवे धीर।
निर्मल धारा प्रेम की, चित्त परसे अती गम्भीर।।

तन मन धन अर्पन करे, पर-के हेत जो मीत।
'मंगत' मारग धरम में, सो पावे दृढ़ परतीत।।194

बन्धन का स्वरूप

बन्धन सरूप का सुनो विवेक। सत मारग का पावें लेख।।
बन्धन सरूप हंग बुद्ध विकार। भरमे जीव जूनी बहु धार।।
बन्धन सरूप ये इच्छया का रोग। शुभ अशुभ पावे करम संजोग।।
बन्धन सरूप मन करता भाओ। करम भोग में नित भरमाओ।।
बन्धन सरूप देह अभिमान। लोक-लाज धार के नहिं शांत पहचान।।
बन्धन सरूप नित ऊँचा जाने आप। काम क्रोध की अगन घट व्याप।।
बन्धन सरूप नर विद्या से हीन। सत कुसत नहिं हिरदे चीन।।
बन्धन सरूप जो गुर पीर से हीन। मान मद धार के करे करम मलीन।।
बन्धन सरूप सत सिखया ना भाये। कुबुद्धि को धार के जीव परम दुःख पाये।।
बन्धन सरूप नर दुष्ट का संग। धरम त्याग करे पाप बहु रंग।।
बन्धन सरूप माया मोह बहु धारी। नित अशांत रहे वाँग अंगारी।।
बन्धन सरूप असत का वादी। छल कपट धारके जले परमादी।।
बन्धन सरूप जाँ नहिं धरम पियार। अधरम विकार में भरमे गँवार।।
बन्धन सरूप जो पुरषारथ से हीन। आलस विकार में फिरे मलीन।।
बन्धन सरूप अत लोभ जो धारी। अरब खरब पाये नहिं धीर विचारी।।
बन्धन सरूप सब देही आकार। सत विचार बिन नित दुःख धार।।
बन्धन सरूप स्वारथ वादी। करे विकार दुर्जन भाओ को साधी।।
बन्धन सरूप जो गरभ जून आया। झूट संसार देख नित भरमाया।।
बन्धन सरूप ये कुल संसार। सार को त्याग विच भरमे आसार।।
बन्धन सरूप सब मन की किरया। झूट संसार में नित पसरिया।।
बन्धन सरूप जग सकल परिवार। तिसके मोह में करे विकार।।
बन्धन सरूप कुल जग दृष्यमान। माया मोहनी करी परगट भगवान।।

सत सरूप भगवान बिन, सब जग बन्धन रूप।
'मंगत' लीला देख के, मोहे गुनी मुनि भूप।।195

नाम रूप गुन करम आकारा। बन्धन रूप ये सकल विकारा।।
बन्धन सरूप नर अंध विशवासी। सत विसार धारे भ्रम फाँसी।।
बन्धन सरूप जग जीवन आसा। काल सरूप की माने त्रासा।।
बन्धन सरूप जो सार नहीं पछाने। संकल्प विकल्प परम दु:ख ठाने।।
बन्धन सरूप ये मन नित दोखी। पल पल चाल चले अनोखी।।
बन्धन सरूप जो दु:ख भेद नहिं जानी। असत विकार में नित सुख मानी।।
बन्धन सरूप सब इन्द्री की रसना। भोगे भोग नित बढ़े तृषना।।
बन्धन सरूप जो देह सत कर मानी। तिसके भोग में नित ग़लतानी।।
बन्धन सरूप ये मज़हब की फाँसी। समता ज्ञान की कीजे नासी।।
बन्धन सरूप जो नहीं चित्त हेता। वैर बदी में नित रमनीता।।
बन्धन सरूप जो चले मनमाना। धर अभिमान करे पाप बिध नाना।।
बन्धन सरूप जो साधन बिन विद्या। धर अभिमान नित पाप में फँदिया।।
बन्धन सरूप नर नित नित सूझे। बिन प्रभ ध्यान नर और को पूजे।।
बन्धन सरूप मढ़ी मसान की पूजा। हीन विश्वास होये नर नित दु:ख सूझा।।
बन्धन सरूप सब बिन तत्त ज्ञान। करम का संसा धर फिरे चारों खान।।
बन्धन सरूप जो नर बाद बधावे। कथनी कथ कथ जनम गँवावे।।
बन्धन सरूप नर आहार विकारी। तमोगुन बढ़े चित्त अगन अपारी।।
बन्धन सरूप जो परहक़ खाये। छल सरूप धर परम दु:ख पाये।।
बन्धन सरूप जानो सतकर्म बिन मीता। करम मलीन धर फिरे अनीता।।
बन्धन सरूप का मूल ये जान। देह के सुख में जो रहे ग़लतान।।
बन्धन सरूप सब रंग तमाशे। काल गँवाये नर कूड़ भरवासे।।
बन्धन सरूप राज तेज की आसा। करम करूर की धारी नित फाँसा।।
बन्धन सरूप बिन प्रभ आज्ञा माने। द्वन्द विकार नित भ्रम चित्त ठाने।।
बिन तत्त ज्ञान सब बन्धन होई। मिथ्या भरम में सुरत परोई।।

निरबन्ध रूप सत शबद है, जो घट घट रिह्या वियाप।
'मंगत' जिस जन सोधिया, नहिं परसे दु:ख सन्ताप।।196

बन्धन सरूप करम फल ममता। इच्छया भोग में नित नित रमता।।
बन्धन सरूप मन कलपना सारी। मोह माया नित भरम विचारी।।
करो विचार नर चतुर सुजाना। बन्धन रूप माया भगवाना।।
अदभुत जाल माया विसतारी। ग़रब गुबार में नित गवन विचारी।।
बन्धन रूप करम जंजाला। पलक ना छूटे जीव दु:ख भाला।।
बन्धन रूप मन ममता पेखो। भाँतक भाँत भरम को देखो।।
संकट भारी में जीव गरासा। भय भरम की धारी फाँसा।।
नित तृखत नित भय समाई। दु:ख सुख भरम चक्कर भरमाई।।
छिन हरखे छिन शोक वियापे। राग द्वेष अगन में तापे।।
बिना विवेक नहिं छूटन पाये। मोह जंजाल अनवर्चित माये।।
गुनी गियानी भये दीवाने। बंधन माहीं नित ग़लताने।।
लोक परलोक की इच्छया जो धारी। बन्धन सरूप ये निश्चय दुखकारी।।
जीवन की आसा मरन भय जो पाई। माया बन्धन की ये सब प्रभताई।।
काम क्रोध अत चित हँकारी। बन्धन सरूप ये कलपना सारी।।
पाँच पचीस परकिरत जंजाला। बन्धन रूप ये ही जमकाला।।
तिसके मोह में जीव दु:ख पाई। तीन ताप अगन में नित जलाई।।
मान मद धार नर अनमत होई। नाश रूप जगत में निश्चय परोई।।
आठ पहर भय में जीव गरासे। इच्छया विकार धारी दुस्तर फाँसे।।
करम के भोग आनन्द सुख पेखे। करम विनाश से भये दु:ख विशेखे।।
माया भरम से मुकत ना होई। करम के जाल में नित फिरोई।।
औगन अपार करे दिन और राती। पल पल जीवन की करे नर घाती।।
दुरमत धार के नित भरमाई। बन्धन में बन्धन पड़े जीव दु:ख पाई।।
अधिक सयानफ़ नर मन में धारी। सतगुर मेल बिन नहिं बन्धन निवारी।।
मुकतसरूप जब सतगुर पाये। निरबंध रूप का भेद लखाये।।

माया छाया दुस्तर में, अनर्थ जीव भरमाये।
'मंगत' बिन परसे गुरपदम के, कभूँ नहिं छूटन पाये।।197

कल्याण का स्वरूप

कल्याण सरूप केवल जगदीशा। सरब गत पूरन सरब का ईशा।।
कल्याण सरूप शबद मुकन्दा। सचखण्ड बसे पुरख अखण्डा।।
कल्याण सरूप आतम तत्त जान। सरब परकाशी जोत निरवान।।
कल्याण सरूप निज रूप विचार। घट घट बोले जो पुरख आपार।।
कल्याण सरूप इक पुरख बिधाता। घट घट व्यापक सरब गत जाता।।
कल्याण सरूप इक जोत निरंकारी। सरब व्यापक बिन रूप आपारी।।
कल्याण सरूप ब्रह्म नाद पछान। बिंद पिंड को जो करे सावधान।।
कल्याण सरूप निरअच्छर देवा। बानी रहित रूप लखीवा।।
कल्याण सरूप प्रभ अजर अबनासी। जुगा जुगंतर समरूप परगासी।।
कल्याण सरूप इक निरगुन धार। दसवें द्वार में करे पुकार।।
कल्याण सरूप आलख अनामी। हस्ती तृन में सम बिसरामी।।
कल्याण सरूप अबगत जोती। शबद सरूप सब घट अलोपी।।
कल्याण सरूप नित पारब्रह्म। सरब नियारा नहिं व्यापे करम।।
कल्याण सरूप नर पेखो सोई। जगत का जीवन रूप है जोई।।
कल्याण सरूप अद्वैत अनादी। चिन्ह वरन नहिं धरे उपाधी।।
कल्याण सरूप इक परमेश्वर जान। जिसकी महमा नहिं होवे बखान।।
नेती नेती कर वेद विचारे। अनंत अपार कर सिद्ध मुनी पुकारे।।
सरब के अंतरगत निवासी। कल्याण सरूप सो ही अबनासी।।
असंख नाम तिसकी कीरत। अनन्त सरूप हैं तिसकी मूरत।।
जगत विस्तार तिसकी प्रभताई। अकारन रूप सब घट समाई।।
इच्छया भरम सब तिसकी माया। आनंद सरूप नित आप समाया।।
वारापार ना तिसका पाई। जो जो सिमरे कल्याण समाई।।
अपना कौतक आपे धारी। कल्याण सरूप पुरख निरधारी।।
अखण्ड शकत निरवान सरूपा। सम सरूप बसे नित अनूपा।।

कल्याण सरूप प्रभ जान के, नित ही धरो धियान।
'मंगत' ये ही परमगत, जीव भये निरवान।।198

कल्याण सरूप केवल सतनाम। बन्ध छुड़ावे दे बिसराम।।
कल्याण सरूप सतसंग विचार। शुद्ध विवेक मिले सुख सार।।
कल्याण सरूप सतगुर का मेल। सत सरूप का परसे खेल।।
कल्याण सरूप सतगुर की दीख्या। अबगत रूप घट माहीं परीख्या।।
कल्याण सरूप सत करम विचार। पाप विनासे पाये सत सार।।
कल्याण सरूप सत सेवा साधन। खेम कुशल तत्त रूप आराधन।।
कल्याण सरूप पर दु:ख हरना। सत सरूप का पावे निरना।।
कल्याण सरूप मन सत विशवासी। पाप करम की काटे फाँसी।।
कल्याण सरूप निज मरन विचारी। दुष्ट विकार की मिटे ख़्वारी।।
कल्याण सरूप सब जीवों से हेता। साचे धरम की जाने नीता।।
कल्याण सरूप निज पाप विचारे। सत करनी की बुद्ध उजियारे।।
कल्याण सरूप मन राखे नीचा। गरब विनासे दु:ख सरूपा।।
कल्याण सरूप सत कथा विचार। उपजे प्रीती सत करनी सार।।
कल्याण सरूप मन भोग तियागी। आतम रस की शोभा जागी।।
कल्याण सरूप सत मारग ध्यान। पूरन सतगुर का सुने निधान।।
कल्याण सरूप सत नीयम धारी। पाप कुपथ की मिटे ख़्वारी।।
कल्याण सरूप चित पर-उपकार। पाँच दूत का हरे बिकार।।
कल्याण सरूप ब्रह्मचर्य विचारी। आयू दीरघ अरोग पधारी।।
कल्याण सरूप सादा जीवन धारी। सरब धरम की मिले जुगत अपारी।।
कल्याण सरूप प्रभ चरन परीत। आवागवन की बिनसे रीत।।
कल्याण सरूप सब जीवों से एका। रल-मिल संगत सुने विवेका।।
कल्याण सरूप प्रभ आज्ञा सेवे। द्वन्द विकार को नित हर लेवे।।
कल्याण सरूप सत जुगत विचार। दृढ़ कर राखे ये मन गँवार।।
कल्याण सरूप प्रभ चरन अनुराग। झूट भोग से मिले बैराग।।

मन के भरम को त्यागना, मारग ये कल्याण।
'मंगत' मन जब निर्मल भया, दरस पायो भगवान।।199

कल्याण सरूप नित शुद्ध विचार। सत असत की परसे सार।।
कल्याण सरूप मन दोख को हरना। सत विशवास में नित विचरना।।
कल्याण सरूप दु:ख निरना कीजे। हंग विकार की मैल हर लीजे।।
कल्याण सरूप नित शुद्ध आहार। बुद्ध सुतन्तर मिटे देही विकार।।
कल्याण सरूप नित शुद्ध ब्यौहार। मिले संतोष निज सम्पत सार।।
कल्याण सरूप दुष्ट मनसा त्यागी। भ्रष्ट विकार की दुरमत भागी।।
कल्याण सरूप प्रभ की अरदास। कल्यान सरूप प्रभ चरन विशवास।।
कल्याण सरूप अनाथ की सेवा। हरखत भये पूरन प्रभ देवा।।
नित ही सत तत्त कीजे खोज। मिटे विकार पाये मुकत की सूझ।।
सत आधार जीवन नित धारी। पाये कल्याण परम गुनकारी।।
सत सरूप नित हिरदे ध्याये। छीजे बन्धन आनन्द घर पाये।।
समता ज्ञान का मारग बूझे। कल्याण सरूप का निरना सूझे।।
लाभ और हान इक चित्त देखे। दृढ़ निश्चय प्रभ चरन को पेखे।।
दु:ख सुख धारे एके नीती। द्वन्द विकार की हरे पलीती।।
गुपत शबद घर परगट कीजे। सरब कल्याण मारग को लीजे।।
शबद परापत तत कल्याना। आनन्द सरूप पद निरवाना।।
मैं मेरी दु:ख बन्धन नासे। सत शबद जब घर परकासे।।
शबद परतीत मुकत तत्त सार। गुरमुख विरले सुनी पुकार।।
अनहद शबद जब घट विचारी। अकल्पत समाध में बुद्ध मतवारी।।
इच्छया भोग सब बन्धन जाई। अजर पुरष संग मेल मिलाई।।
करम विकार दु:ख रूप सब नासे। नित आनन्द बानी परगासे।।
मन की भरमन शान्त समाई। आलख शबद कल्यान को पाई।।
पूरन करमी सत मारग पाये। पूरन प्रभ की सेव कमाये।।
आद जुगादी रह्या समाई। जो जो पूजे सो गत पाई।।

दुस्तर मारग इच्छया, चारखानी भरमाये।
'मंगत' बिन सत साधन, नहिं जीव पार कोई पाये।।200

सत्-पुरुषार्थ

निर्मल उद्दम मेरे चित्त समाये। करूँ परनाम तेरी चरनी माये।।
निर्मल उद्दम दीजो सत सेवा। पर-का हेत रसे मन भेवा।।
निर्मल उद्दम सत सिमरन पाऊँ। पलक पलक तेरा जस गाऊँ।।
निर्मल उद्दम पाऊँ पर-दुःख हरना। सरब जियाँ की रहूँ मैं सरना।।
निर्मल उद्दम सत कथूँ विवेक। सत सरूप तेरा सत लेख।।
निर्मल उद्दम पाऊँ सत ब्यौहार। हिरदे सिमरूँ तेरा नाम अपार।।
निर्मल उद्दम ये ही चित्त माँगे। सत संगत सत सेवा लागे।।
निर्मल उद्दम सत मारग धाऊँ। ज्ञान विज्ञान से नित तृपताऊँ।।
निर्मल उद्दम मन भरम तियागूँ। सत सरूप तेरे में जागूँ।।
निर्मल उद्दम सत सुनूँ परसंग। साची प्रीत चढ़े चित्त रंग।।
निर्मल उद्दम मन तन समाये। कायर जीवन निकट नहिं आये।।
भला विचार चित्त बुद्ध विचारी। उद्दम दीजो प्रभ किरपाधारी।।
बन्ध छुड़ावें देवें सत सेव। निर्मल उद्दम करो दात प्रभ देव।।
तन मन मेरा नित सत कमाई। अन्तर बाहर सत कीरत पाई।।
सत आधार जीवन को धारी। उद्दम दीजो सत पारमुरारी।।
तेरी आज्ञा मैं पल पल ध्याऊँ। सकले करम तुध भेंट कराऊँ।।
आपा त्याग चित्त गुरबत पाये। उद्दम दीजो पूरन प्रभराए।।
निर्मल नाम की रसना चाखूँ। अबगत शबद को हिरदे लाखूँ।।
हंग विकार बुद्धी का जाये। ऐसा उद्दम दीजो सुखदाये।।

सत पुरषारथ धार के, जीतूँ भरम संग्राम।
'मंगत' कीजे बेनती, घर परसूँ निर्मल धाम।।201

वैर का त्याग

प्रेम से संगत गाइयो, साचे धरम का गीत।
ये मन कुटल कठोर है, धरम से होए पुनीत।।

साची संगत साचा धरम, नित ही साच विचार।
सच कमावन जगत में, मानुष देह की कार।।

बिना सच परतीत के, परसे ना सुख सार।
लागी विषे की अगनी, जल जल भए अँगयार।।

सब संसार है दुखिया, लाख करोड़ी मीत।
जिसके मन विशवास नहीं, सो ही नर बदनीत।।

साचा धरम कमाए लो, पावें सुख घनेर।
मिटे करम की वासना, और चौरासी फेर।।

सब जीवों से हेत रख, दिल से वैर तियाग।
साचा प्रेम परगट कर, दुरलभ पावें भाग।।

सो ही नरकी जीव है, जो मन में राखे वैर।
आठ पहर जलता रहे, नित वरतावे कहर।।

धरम करम सब नष्ट होए, सकला तेज विनास।
कुल जाती और देश को, ये वैर करे नित नास।।

धनी दलिद्री हो जाए, राज तजे नरेश।
सकली सम्पत नष्ट होए, जाँ वैर करे परवेश।।

शक्ती सब ही मिट जाए, मन होए अन्त चोर।
साचा प्रेम विसार के, जाए चौरासी घोर।।

माया रूप ये बाद है, प्रेम रूप गोबिन्द।
जिसके मन प्रेम नहीं, दुखिया तिसकी जिन्द।।

बुद्धीमान सो आखिए, सो ही नर कुलवन्त।
सो ही शक्तीमान है, जो तजे वैर कलंक।।

सो ही जान धर्मातमा, सो ही ज्ञानी होए।
बाद विखाद जिसने तजा, हिरदे प्रेम परोए।।

माला फेरे प्रेम की, परदु:ख हरना कार।
दीन ग़रीबी भावना, ये साचा धरम वचार।।

सो ही जन चण्डाल है, जो राखे कपट का भेख।
देश धरम का नाश करे, उल्टा धारे लेख।।

चार दिनाँ की खेड है, इस जग में जीवन मीत।
साचा रूप नारायन का, नित राखो मन परतीत।।

जिस दर बाजत नौबताँ, होवें छतीसों राग।
उज्जड़ खेड़े हो गए, बोलें वहां पर काग।।

जो आया सो जाएगा, राजा राना मीर।
निकले प्रान जब देह से, ओढ़े कफ़न सरीर।।

महल अटारी ना सँग चली, ना चली वडी जागीर।
करनी अपनी सँग चले, खोल नैन मतधीर।।

साची सम्पत धरम की, नित ही घालो मीत।
परम शान्त संसार में, एक धरम की प्रीत।।

लख चौरासी जीव में, सो ही जन परवान।
'मंगत' धरम विचारना, जुग जुग अटल निशान।।202

सत्-विद्या

विद्या तो बहुती पढ़ी, पर सूझी ना कुछ सार।
विद्या को कहु दोख ना, पढ़नहार गँवार।।

मन परकाशन कारने, पढ़ पढ़ हूआ बौर।।
पर अन्धकार बढ़ता गया, सूझा नहीं कोऊ ठौर।।

पढ़ पढ़ मन अन्धा हुआ, चले भ्रान्त बहु चाल।
चाल मेटन के कारने, पढ़न पठावन जाल।।

पढ़ा तो नर क्या पढ़ा, पायो नहीं कुछ मूल।
पढ़ पाठन से क्या होये, जो मन फँसे भूल।।

पढ़न कारने जाँवदा, सीलवन्त गुनवान।
जिस पढ़ने ममता गई, सो पढ़ना परवान।।

पढ़ना अक्षर एक का, और सकल है जाल।
जाँ पढ़ने दुरमत गई, परगट भये दयाल।।

पढ़ना तो परवान है, मानुख जाँ की ज़ात।
पढ़ने ते उजला होए, बिनसे मन कमज़ात।।

बादमुबाद निवारया, तिस पंडित आदेस।
बौहते जन निस्तर भए, तिस जन के उपदेश।।

जिस मन बाँधी दुरमती, तिस क्या जानी सार।
पढ़ पढ़ वक़्त गँवाया, भरमे अन्ध गुबार।।

पढ़ना तो बहुता पढ़े, काज़ी कुतब कुरान।
फिर जब गुढ़ना आया, तब उल्टी खिंची कमान।।

पढ़ने से ना रीझता, ख़लक का परवर्दिगार।
जिस मन तिसको मानेआ, तिस जन हो छुटकार।।

सत असत को खोजते, पंडित पढ़े पुरान।
पर सत का निरना ना हुआ, बिन सतगुर विख्यान।।

जिस पढ़ने मन पढ़ जाए, शान्त सुख को पाए।
मनन भाओ व्यापे नहीं, ख़ुद मत सीस कटाए।।

एक वक़्त के पढ़न से, मन नहिं आवे रास।
आठ पहर सतता पढ़े, तब होवे परकास।।

सकल जगत बाँधा फिरे, मोह माया के जाल।
क्या पंडित क्या काज़ी, पढ़ पढ़ भया जंजाल।।

सकल जगत को सार है, पढ़ना अक्षर एक।
जिस पढ़ने से खेवट मिले, ज्ञान गुन विवेक।।

धन दौलत के कारने, पढ़ना तो नहिं मीत।
पढ़ना तब सुफला होवे, जब उजलत भई नीत।।

मैं तो कुछ सीखा नहीं, पर विद्या की पाई सार।
'मंगत' पढ़ना सुगम है, पर गुढ़ना औखी कार।।203

सो पढ़ना सुख देत है, मन बानी पढ़ ले।
कथनी करनी छाड के, मन भीतर रस ले।।

जिसका मन पंडित हुआ, टूटा हंग विकार।
समता रस पीवे सोई, लखे कला करतार।।

जो जो वस्तू नर पढ़े, तिस ही का गुन ले।
लोभे चितवे दाम को, पंडित मान धरे।।

भय भरान्त बहु बढ़े, जाँ चितवन है दाम।
साचा भगत जन निश्चल होवे, पूँजी जाँ हरनाम।।

दाम काम सब छाडने, दो दिन के ये मीत।
आद अन्त साखी होए, सो प्रभ आप पुनीत।।

धरम के साधन कारने, कारज पढ़न का होए।
'मंगत' साधन यूँ करे, हिरदे हरी परोए।।204

वैर बदी तिस निकट ना, जिस ध्याया रछपाल।
स्वास स्वास सिमरन किया, छाड कूड़ जंजाल।।

केवल पढ़ने ना मिला, वेद ग्रन्थ का मूल।
पढ़ सुन जिस मन मानेआ, परखी गत अनकूल।।

भोले भाले जगत में, जिन पाया हरनाम।
वेद खड़ा तिस द्वार पर, जाँ बसे निषकाम।।

वेद पढ़न का सार ये, घट घट जान निरंकार।
इस विध विरती जिस पाई, तिस साधन गुनकार।।

पढ़ने तो दोनों गये, वशिष्ठ हरनाकश राये।
एक तो ब्रह्मवेत्ता बने, इक नख स्यों पेट फड़ाये।।

बुद्ध अनकूल है पढ़ना, जेई बुद्ध तेआ जाप।
निर्मल बुद्ध विरले भई, गया दुर्मत का ताप।।

असंख वरख पढ़ता रहे, धारे मन में मान।
अमरत को नित विख करे, उलटी बुद्ध ये जान।।

वेद कतेब का मूल है, अक्षर एक ओंकार।
शिव सनकादिक ध्याँवदे, उतरस मन मद छार।।

वक़्त जात है बावरे, रस्ता है बहु दूर।
अटपट औखत घाट हैं, चढ़ कर होए मनूर।।

जेता पढ़ना नर पढ़े, एता मन दु:ख पाए।
अनक सिद्धान्त माँह भरमत फिरे, ठौर हाथ ना आए।।

पढ़ना एको नाम का, और पढ़न दे त्याग।
'मंगत' निश्चल चित होवे, प्रेम हरी रस लाग।।205

सतसरूप में मिले विशवासा। सतपुरषों की सीख निवासा।।
अती भयंकर ताप से छूटे। साची सिखया की रसना जो लूटे।।
कहन सुनन से मन धीर समाया। सत ठाकर पर निश्चय पाया।।
सकल जगत का भेद पछाता। जनम मरन का जो सन्तापा।।
अती गुवार माया जो धारी। साध सीख से भयो विचारी।।
गुप्त सरूप को परगट पाया। साध सीख मनुआँ तृपताया।।
जो तूँ मारग धरम का सूझें। सतपुरुषों की कीरत बूझें।।
मन में धरें बिरह अधिकाई। तब मारग धरम की सार लखाई।।
माया चक्कर है अदभुत भारी। चंचल मन की होये ख़वारी।।
बिना विचार धीर ना पाई। पलक पलक अत ताप लखाई।।
राग द्वेष अधिक चित्त फांसी। भोग विकार की अधिक तरासी।।
आसा तृषना अधिक गुबारा। अनक मनोरथ रूप अंगारा।।
पारावार ना नज़री आवे। माया जाल संकट अधिकावे।।
सतपुरषों की सीख लखाई। सत सरूप का निरनय पाई।।
भरम गुबार भयो चित्त नासी। साची सीख से शान्त निवासी।।
परम जतन हिरदे में पाया। मारग धरम का भेद लखाया।।
नित नित मनुआँ सार कमाई। भरम त्याग के धीरज पाई।।
साची भगती प्रभ की जानी। पल पल तिसकी सेव पछानी।।
निरमल प्रेम पायो विशवासा। साची सीख से निर्भय निवासा।।

बार बार चितारिये, सतपुरषों के लेख।
'मंगत' तिनकी कीरती, देवे धरम का भेख।।206

अहंकार का उपाय

आपामत अंधकार अत, त्रैगुन माया जाल।
'मंगत' तिससे छूटिये, जब सतगुर मिलें दयाल।।207

आपामत मूल अज्ञाना। निसदिन भरमे जीव अनजाना।।
सत सरूप शोभा विसराई। दुरमत भरम में आवे जाई।।
धर अभिमान जतन नित कीजे। मोह माया का जाल नहिं छीजे।।
करम भोग इच्छया अत धारी। नरक स्वर्ग दु:ख सुख विचारी।।
आपामत ये संकट का मूल। भरमे जीव सूक्षम अस्थूल।।
आपामत दुबधा जो त्यागे। गवन विनास सत मारग लागे।।
साची सिखया ये ही सुखदाई। तजो आपामत परम दुखदाई।।
शास्तर सिमरत अनेक विचारे। ग़रब धार नहिं उतरे पारे।।
परचण्ड सरूप माया दुखकारी। अनमत जीव मत आपा धारी।।
अल्पज्ञ भाओ नित गरासी। कामना करम मन माहीं उपासी।।
छिन हरखे छिन शोक समाई। बिना विवेक नहिं दुबधा जाई।।
देह अभिमान जीव जो धारी। आपामत ये करो विचारी।।
देह के भोग में नित लपटाई। बिनसे देही परम दु:ख पाई।।
काम क्रोध अगन में तापे। आपामत रूप सन्तापे।।
बहुरंग जतन जीव नित धारी। दुर्मत विगन नहिं मिटे दु:खकारी।।
पाप पुन्न में नित समाई। आपामत धर आवे जाई।।
बिख सरूप माया परगास। सभी जन्त भये भय निवास।।
बिन तत ज्ञान तृपत नहिं पाई। चारखानी में नित भरमाई।।
दुरमत रोग नहिं आपामत जाये। गुनी ज्ञानी बहु लेख लिखाये।।
मिथ्या रूप को सत कर जानी। असत माया का भयो अभिमानी।।
धर अभिमान नित प्यासा जाए। आपामत ये रोग अधिकाए।।
तीरथ बरत नियम बहु धारी। अधिक तपस्या में जीवन काढ़ी।।

बिना विवेक नहिं भरमन जाई। करम चक्कर में फेर फराई।।
मिल सतगुर सत सीख विचार। आपामत जाये भरम बिकार।।

सत सरूप का सिमरना, सत सरूप विशवास।
'मंगत' ऐसी धारना, करे आपामत का नाश।।208

आतम ज्ञान में मनसा धार। मिथ्या देह का जाये अन्धकार।।
सच्चदानन्द चेतन परगासी। आतम खोज पुरख अबनासी।।
आतम ज्ञान सब मैल को धोवे। गुरमुख विरले प्रापत होवे।।
शबद सरूप पुरख निरधार। सतनाम सिमर जग सार।।
आतम मूल जब ही पछाता। आपामत सब बंधन काटा।।
अंतरयामी घट घट समाया। आतम तत्त खोज निरमाया।।
रवि परकाश ज्यों अंधकार विनासे। आतम ज्ञान करे इयों मोह तम नासे।।
तपन बुझावे ज्यों मेघ की धार। आनन्द उपजावे त्यों आतम विचार।।
कोट नदियाँ ज्यूँ सागर समाएँ। आतम विवेक से इयों भ्रम मिट जाएँ।।
सरब व्यापक सरब अलेपा। वाँग आकाश तत्त आतम अलेखा।।
सबके आद मद्ध अन्त समाई। सरब शकत आतम वरताई।।
नित आनन्द सरूप अनादी। जो करे विचार सब मिटे उपाधी।।
आतम ज्ञान आतम ध्याना। आतम खोज पद निरवाना।।
आतम विशवास आतम की पूजा। आतम तीरथ परस सुख सूझा।।
आतम कीरत कथा विचारी। सत निध्यास आतम का धारी।।
देह मिथ्या सत आतम जानी। आतम प्रेम में मन ग़लतानी।।
आतम बिरह जगत से उदासी। आतम पूजे तब आपामत नासी।।
देवों का देव आतम पहचान। साखी पुरष आलख निरवान।।
आतम आधार सब जगत को देखे। सरब शकत आतम को पेखे।।
सतगुर पूरा जो आतमदरसी। तिसकी सेव तत्त आतम परसी।।
आतम योग आतम विवेका। आतम सिमरन है सार अलेखा।।
आतम पछाने देह मद नासे। आनन्द सरूप में पाए निवासे।।

आतम पछाने मन धीर समाई। आवागवन सब भ्रम मिट जाई।।
आतम ध्यान सुख अपरम आपार। परम विवेकी कोई खोजे सार।।

आपामत विकार में, सब ही जीव भरमायें।
'मंगत' आतम ज्ञान बिन, पलक ना धीरज पायें।।209

कर्म गति

करम सरूप की करो पहचान। मारग पावें तत्व ज्ञान।।
करम सरूप सकल संसारा। आवागवन चौरासी धारा।।
करम शकत सबको भरमावे। करम का बाँधा नित आवे जावे।।
दुरगम माया का रूप ये करमा। सरब तत्वों का करम ही ये धरमा।।
करम की झाई अपरम अपारा। करम का भेद बहु गहन विचारा।।
करम सरूप को जो निरनाये। परम ज्ञानी सो पुरख कहलाये।।
करम में बाँधे सकले जन्त। पल पल माहीं नित भरमंत।।
जनम से लेकर मरन तक मीता। करम की इच्छया धारी दुखरीता।।
एक पलक नहिं होय निहकरमी। भटक भटक कर औध विचरनी।।
मानुष पशू जंगम अस्थावर। करम के चक्कर में सभी चलावर।।
करम शकत ये प्रभ की माया। तिसका भेद नहिं लखने पाया।।
जेती बुद्ध जिस जन ने पाई। एता भेद कुदरत अरथाई।।
जेता भेद जिस मन आया। परम शकत पर निश्चय पाया।।
नाना रंग ये तत्व वटायें। पल में और की और दिखायें।।
उतपत परलय रूप जो होई। गती संसार ये करम फरोई।।
इस्थिर वस्तु ना कोई दिखलाये। पल पल में बहुरंग वटाये।।
त्रैविखमी माया का ये ही जंतर। सूली चढ़े सब जीव भयंकर।।
करनी का बाँधा दु:ख सुख पाये। जैसी करे तैसी मिले सज़ाये।।
चराचर भूत नित भरमायें। करमगती धर आवें जायें।।

करम शकत आपार है, मिथ्या भरम अंधकार।
'मंगत' करम की वासना में, भरमे कुल संसार।।210

पिण्ड ब्रह्मण्ड की रचना जो होई। करम सूत में सकल परोई।।
नाम रूप गुन को परगासी। सबमें करम शकत बिलासी।।
अचरज लीला प्रभ ने रचाई। करम रूप माया प्रगटाई।।

ऊँच नीच जूनी गत धारी। करम आधार सब खेल विचारी।।
निश्चय करम ले बुद्ध प्रगटाई। मनन करम में मन उपजाई।।
शून्न करम आकाश रमीना। अस्पंद करम पवन नित चीना।।
जलावन करम अगन विचारी। बहना करम नित जल संचारी।।
जड़ता करम में धरन समाई। अचरज खेल साहब रचाई।।
हेल मेल तत्वों का होई। भाँतक भाँत गुन करम प्रगटोई।।
त्रैगुन माया पासार पासारी। अनक भाँत करम को धारी।।
करम में करम होये लवलीना। करम से करम भयो प्रगटीना।।
भिन्न भिन्न रूप को करम ये धारी। पल पल में बहु रूप वटारी।।
अचरज माया नहिं वरनी जाये। बाँधा जीव परम दुःख पाये।।
इच्छया करम नित अन्तर धारी। करता भुगता नित आप विचारी।।
आपामती ये अधिक दुखदाई। करम जन्तर में फिर फिर आई।।
सूझे बूझे ना अन्धा अभिमानी। करम का बाँधा भरमे चारों खानी।।
इच्छया करम ये दीरघ रोग। जनम मरन का होवे संजोग।।
करता भाओ जो अन्तर धारी। करम की फाँसी पाई विकारी।।
हंग विकार ना चित्त का जाई। करम का जाल ना मिटने आई।।

वार पार सूझे नहीं, करम जाल को धार।
'मंगत' उपजे वासना, नाना भोग विकार।।211

जब लग करम विचार नहिं पाई। छूट ना पावे भरम दुखदाई।।
करम वचार बिना शान्त ना आये। दिवस रैन जिया भरमाये।।
करम वचार बिना जीव दुःख पाई। बारमबार जूनी भरमाई।।
दुःख सुख भोग जो नित विचारी। करमगती की ये सकली कारी।।
जैसा करम करे दिन राती। तिस अनकूल दुख सुख को जापी।।
परकिरत भोग ये रोग अपारी। जल जल होवे ये जीव अँगियारी।।
सातक राजस तामस धारी। शुभ अशुभ करम वचारी।।
जैसा करम मन माहीं परोई। तिस अनकूल प्रापत फल होई।।

करमफल इच्छया पल पल वचारी। संकल्प विकल्प अंतर दुख धारी।।
मन चंचल बुद्धी भरमाये। घनी सयानफ़ नित लेख लखाये।।
अपना जाल आपे बिसतारी। दुख सुख भोग सहवे डण्ड भारी।।
अन्धमत जीया नित परदेसी। दुष्ट विकार में नित परवेसी।।
करमफल भोग में नित भरमाई। अनक जतन धारे चतुराई।।
मनमुखता भ्रम जाल विसतारी। कभूँ ना सूझे मारग निसतारी।।
लोक परलोक की रचना रचावे। काम क्रोध में लीन समावे।।
लोभ मोह मद में ग़लतानी। करम भोग दुबधा पहचानी।।
इन्द्री विकार को नित नित सोचे। भरम विकार को नित नित लोचे।।
मकड़ी ज्यों मुख जाल प्रगटाई। तिसमें फँस नाश को पाई।।
एह बिध जीव करमगत धारी। जन्मे मरे दुःख सुख विचारी।।

छिन दुखिया छिन सुखिया, भयो करम जाल को धार।
'मंगत' इच्छया करम की, देवे गवन संसार।।212

बिख बीजे नर बिख ही पाये। ऊँच नीच जूनी भरमाये।।
मूरख मन में नित मदधारी। पाप पुन्न नहिं हिये विचारी।।
तुच्छ जीवन का नित धरे गुमाना। काल चक्कर नहिं देखे अनजाना।।
किसका कौन जगत में होई। करम संजोग सब चक्कर चलोई।।
लेन देन में भये संग साथी। लेखा चुका नहिं भयो कोई नाती।।
किते लेना लेवे किते देन मुकाये। करमगती संग साक बनाये।।
अनमत जीव का सत मितर ना कोई। अपनी करनी का लेख परोई।।
छिन छिन जो नर करें बिकारा। धरमराज घट करी पुकारा।।
हिरदे माहीं नित लेख लखाई। शुभ अशुभ जो करम कमाई।।
पाप पुन्न जो मन तन में ध्याई। गुन औगन नित बुद्ध में सँचाई।।
जिस जिस भाँत जिया करम को कीजे। तिस अनुकूल बुद्ध रूप लखीजे।।
सतगुन तमगुन रजगुन माया। हंग बुद्ध अज्ञान सरूप धराया।।
त्रैगुन माया में जीव भरमाई। तिस अनुकूल करम चक्कर चलाई।।

जिस गुन धार करम को भोगे। उसही सुभाओ वस जीव भयो रोगे।।
सुभाव सरूप करम का बिन्द। त्रैगुन माया का असली पिण्ड।।
सुभाओ बस नित जीव रहाई। लख चौरासी में फेर फिराई।।
जैसा करम जीवन में धारी। तिस अनुकूल नित सुभाओ विचारी।।
सुभाओ बस होये जीव पिण्ड को धारे। सुख दु:ख रूप नर्क स्वर्ग विचारे।।
सातक करम से सुभाओ सातक होई। सातक सुभाओ से देवगती लखोई।।
राजस करम से सुभाओ राजस पावे। राजस सुभाओ मंदगती दिखावे।।
तामस करम से सुभाओ तामस होई। तामस सुभाओ नीच गती फिरोई।।
सुभाओ वस होये नित गवन विचारी। सुख दु:ख करमफल भोग लखारी।।
जैसा सुभाओ धर देह को धारे। तिस अनुकूल करे करम ब्यौहारे।।
ज्यों ज्यों नवीन करम संचारी। अतिअत चंचल सुभाओ वरतारी।।

करमगती अपार है, जीव नहिं छूटन पाये।
'मंगत' जैसी कामना, ऐसे रूप समाये।।213

करम सरूप का करो विचार। निरना पावें इस संसार।।
त्रैगुन माया करम परगासी। करम अधार पंच भूत विलासी।।
हेल मेल तत्तों का होई। अनक भाँत करम प्रगटोई।।
करम में तत्त चक्कर लगावें। बहुरंग रूप करम प्रगटावें।।
जीव अभिमानी करम का होई। माया फाँस ये रूप लखोई।।
रंग रंग करम का भुगता होई। रंग-रंग रस में सुरत डुबोई।।
इच्छया ग़रब गुबार घनेरा। करम का भोग ये गवन का फेरा।।
इच्छया भरम में नित भरमाई। शुभ अशुभ बहु करम लखाई।।
जैसा करम मन मनसा धारी। तिसके भोग में दु:ख सुख विचारी।।
अत जंजाल माया विसतारा। करम चक्कर से नहिं पाये निसतारा।।
चारखानी नित नित भरमाई। करम चक्कर अपार अथाई।।
नित ही करम का भोग विचारी। भोगे करम नित सुख दु:ख लखारी।।
छिनकारी ये करम की रचना। भोग बिनासे जीव धरे कलपना।।
जतन अनेक मन में नित धारे। सम्पत अनेक संचित विचारे।।

सम्पत भुगता आप को मानी। मिले ना धीर फिरे चारेखानी।।
बहुरंग इच्छया बहुरंग भोग। बहुरंग करम का किया संजोग।।
ये जंजाल सरूप संसारा। त्रैगुन माया का सकल पासारा।।
ऊँच नीच करमगत देवे। रंग रंग जूनी में नित भरमीवे।।
संसा मिटे ना अधिक अपारी। जन्मे मरे नित होवे खवारी।।
करम की इच्छया ना पूरन होई। ना ये जीव सत शांत समोई।।
जैसा करम मनसा में धारी। तिसके भोग में जतन विचारी।।
भोग परापत छिन होये विनासा। अधिक सयानफ़ धर जीव पियासा।।
इच्छया चक्कर ना भरमन जाई। त्रास त्रास सब जीव लखाई।।
त्रैगुन ताप में जीव नित तापे। जनम अनेक धारे संतापे।।

करम चक्कर संसार है, करम ही बन्ध सरूप।
'मंगत' मिले तब शान्ती, जब पाये निज रूप।।214

ऐसी जुगती करो विचार। करम बन्ध से होये निसतार।।
इच्छया करम भ्रम जीव अधिकाई। एक पलक नहिं धीर लखाई।।
भोग वस होए बहु जुगत विचारे। सत कुसत करम को धारे।।
करम की गिनती नहीं शुमार। पाप पुन्न बहु बिध विचार।।
पाप करम अनन्त सरूप। भोगे जीव पाये दु:ख रूप।।
पुन्न करम का ये ही विचार। भाँतक भाँत लेवें गुनि धार।।
पुन्न करम का फल सुखदाई। सुख को भोगे फिर दु:ख लखाई।।
शुभ अशुभ करम की किरया। जनम अनेक जीव ये फिरिया।।
करम का जाल न निरविरत होई। ना शान्त में जीव समोई।।
पुन्न करम बहु भाँत के धारी। यज्ञ दान तपस्या विचारी।।
मन अभिमान ना जाये मीता। करता भाओ परम दुखरीता।।
सुख से दु:ख दु:ख से सुख पाई। इत उत रचना माया रचनाई।।
द्वन्द विकार का ये दुस्तर जाल। फिरे अशान्त जीव दुख भाल।।
दुरमत रोग ये अत दुखकारी। छिन हरखे छिन शोक विचारी।।

जतन अनेक करे दिन रैन। मिले ना शान्त अखण्ड सुख चैन।।
ज्ञान ध्यान बहुता विचारे। दुरमत मैल नहिं उतरे पारे।।
इच्छया से करम करम से भोग। दु:ख सुख का नित बने संजोग।।
अनेक जूनी धर करम कमाई। मन को धीर कभूँ नहिं आई।।
आवे जावे ये जीव अभिमानी। निसदिन भरमे विच चारेखानी।।
सतपुरषाँ इक जुगत लखाई। सत मारग की कथा अरथाई।।
सत सरूप अजर अबनासी। काल करम नहिं धारे फाँसी।।
नित आनन्द घट घट समाई। सरब जगत को खेल खिलाई।।
तिसकी भगत सब बिपता टारे। दुस्तर माया से निसतारे।।
तिसकी महमा जिस जन गाई। निहकरम सरूप में लीन समाई।।

माया जाल से छूटिये, जब ध्याइये प्रभ नाम।
'मंगत' सत परकाश में, जीव लेवे बिसराम।।215

मिथ्या नाम रूप को धारी। अनेक भोग तिनका विचारी।।
छिन में आवें छिन में जावें। तिनकी प्रीत में दु:ख अधिक लखावें।।
सत विचार बिन आवे जावे। करनी मलीन देवे अधिक सज़ाये।।
सतकरम मन निरमल करे। सत विशवास की सूझत पड़े।।
अनक प्रकार से भई छुटकारी। सतकरम जो हिरदे धारी।।
करम से बंधन जीव बँधाये। करम से मुकत पदारथ पाये।।
ऐसी जुगती नित करो विचार। मुकतकरम को हिरदे धार।।
कामनायुक्त करम जो होई। बन्धन रूप पछानो सो ही।।
तिसके अर्थ में नित बँधाया। ग्रहन त्याग में नित गरसाया।।
छिनकारी ये करम का खेला। तिसमें अनमत फिरे अलबेला।।
छिन रोवे छिन में हरखाये। सकाम करम का ये फल पाये।।
निरबन्ध मारग का सुनो विचार। निषकाम करम हिरदे में धार।।
जो होनी सो निश्चय होवे। मूढ़पने में मूरख रोवे।।
जो बीजा सो निश्चय पाये। करम रेख नहिं मिटने आये।।

पीर पैग़म्बर हो अवतार। कोई ना भावी को मेटनहार।।
जो कुछ किया सो निश्चय फल देवे। भरम को धार क्यों मूढ़ा दुख सेवे।।
भावी सब पर होवे बलवान। मेट ना सके कोई भावी निशान।।
भावी में बांधे विषन महेशा। नारद शारद शुरती शेषा।।
जो देह धर नर जगत में आई। भावी बहुरंग खेल खिलाई।।
चतुर बुद्धी चतुराई धारे। तो भी भावी आगे हारे।।
भावी रावन को खय कीया। भावी राम को बन फिरीया।।
भावी पाँडू पूत नचाये। भावी कौरव नष्ट कराये।।
भावी वरती राज को छोड़े। भये फकीर भरथरी गौतम सूरे।।
भावी उजड़े वास कराई। भावी छिन में बसी उजड़ाई।।

सकल चक्कर संसार का, भावी फेर फिराये।
'मंगत' त्रैगुन रूप जो, भावी सो कहलाये।।216

हिकमत हुनर जाये तदबीर। भावी डाले गहरी तक़सीर।।
भावी ने ईसा सूली चढ़ाया। दूजे मंसूर को लटकाया।।
भावी छिन में राज बिठाये। राज हो तो भीख मँगाये।।
भावी गुनी करे नादाना। मूढ़ा कथे तत्व ज्ञाना।।
भावी खेल अजब मचाई। भये लाचार जीव अधिकाई।।
मनमानी ना किसी की होवे। इक दिन अपनी हिकमत को रोवे।।
दाने बीने घने घनेर। भावी नित फिरावे फेर।।
जनमेजा पर भावी आई। किस दशा का लेख लखाई।।
गिनती गिनत ना आवे मीत। भावी मारे केते रन जीत।।
मानी का मान भावी गिराये। अनहोयाँ नूँ राज बिठाये।।
छिन में धनी दलिद्री होवे। भावी जब सिर आन खलोवे।।
दाना पुरष हो जाए कमीना। भावी ने जब चक्कर फिरीना।।
एक सयानफ़ चले ना मीत। अटल हुकम साचा जगदीश।।
भरम ना भूलो गरब ना धार। भावी केते किये उजाड़।।
ज्ञान ध्यान ना रहे विचार। भावी जब आन होई सवार।।

मालिक से खादिम बनावे। पल पल तिसका चरन चुमावे।।
कथी ना जाई महमा अपार। गरबप्रहारी भावी विचार।।
किसी की बनत बनी ना रही। देखत में संग मिल गई खेही।।
अनमत मूढ़ा नहिं करे विचार। माने हुकम नहीं करतार।।
धार सयानफ़ बहु जनम गँवाये। आस अंदेसा नहिं मन का जाये।।
निरमल चित्त सुन सत संदेश। अचरज माया अपार जगदीश।।
नित ही तिसकी शरन विचार। तिसकी आज्ञा मन में धार।।
जो होनी सो होवत जाये। बेबस खेल माया अगाये।।
तिसकी आज्ञा में सब कुछ देख। जो हूआ सो सुख कर पेख।।

मन की ममता नास होवे, जब सत रहनी चित्त पाये।
'मंगत' पूरन जतन से, करम जाल बिनसाये।।217

जो कुछ किया जीवन के माहीं। तिसका फल नित जीव लखाईं।।
पाछे कीया जो कुछ मीत। करनेहारा फल लेवे नीत।।
अन्ध भरवासे मत कोई रहाये। अपनी करनी नर छुड़ाये।।
जो कुछ किया बेसुद्ध मीत। तिसका फल ना पावे चीत।।
अपनी करनी का मन नित साखी। तिसका फल निश्चय भोगासी।।
करम चक्कर की ये ही रीत। जो करता सो लेवे फल मीत।।
ताँ सो समाँ कर विचार। निर्मल करनी लियो हिरदे धार।।
पूत धिया ना कोई छुड़ावे। अपनी करनी फल दिखलावे।।
जो कुछ कीना जीवत माहीं। तिसका फल निश्चय को पाईं।।
भूल ना पड़यो करो विचार। अपनी करनी दे आधार।।
पूत करे तो पूत फल पाई। जैसा बीजा ऐसा खाई।।
तेरी करनी तुझको ओट। पाप करम का त्यागो खोट।।
ना कोई संग ना होये सुहेला। लेखा देवे जीव अकेला।।
माया मोह में क्यों गरसाया। नाँगा जायें नाँगा जग आया।।
कूढ़ पसारा अधिक पसारी। जो कुछ कीजें सिर बिपता भारी।।
एक साहब की टेक विचार। बन्ध खुलासी होवे गुबार।।

साची करनी कीजो नित नीत। दोहे जहाने सुख की रीत।।
अपना बंध आपे काट। साची करनी लीजो खाट।।
पर-भरवासी अन्त पछताये। केवल लेखा जब सिर पर आये।।
अचरज रचना जादू का खेल। मत भुलाओ सत करनी मेल।।
बड़े चतुर नर गये ठगाये। संशे में गये जनम गँवाये।।
आज कल का धर भरवास। ना कुछ कीना कारज रास।।
बिच भुलेखे सब औध गँवाई। काल पछाड़े तब जीव पछताई।।
घड़ी घड़ी नर करो शुमार। साची कीरत प्रभ चरन विचार।।

समाँ गया जो औध का, सो ही काल गयो खाये।
'मंगत' भरम तियाग के, नित सिमर लीजो प्रभराये।।218

पाप करम में जीव जलाई। सत करम नित शान्त वरताई।।
पाप करम अत बन्धन भारी। भयंकर दु:ख पल पल विचारी।।
सकल कीरती नाश करीजे। पाप करम जो जन वरतीजे।।
अपने आप का शत्रू होई। पाप करम जो चित्त परोई।।
नरक सरूप जीवन सो धारी। आठ पहर जो पाप वचारी।।
जल जल पड़े नहीं शान्त पाये। मोह अगन अधिक तपताये।।
मानुष जनम अमोलक खोई। पाप करें ना पावें ढोई।।
पाप करम जम रूप बिकराला। अन्तकाल देवे दु:ख जम काला।।
मनमानी नर छोड़ चतुराई। कपट के भेख में नित दु:ख पाई।।
अपने जीवन का करो सुधारा। करनी मलीन से पायें छुटकारा।।
पाप करमी की निन्दा अधिकाई। डण्ड नरेश का छिन छिन पाई।।
पाप करमी को नित धृगकार। सब जीव देवें फटकार।।
एह लोक बगाड़ा आगे दु:ख भारी। पाप करमी की तीन लोक ख़वारी।।
अधम जून को धारन कीजे। करनी मलीन कई जन्म दु:ख दीजे।।
बारमबार करें सन्त दुहाई। अपनी करनी सब रंग दिखलाई।।
अचरज माया का वेग अपारी। त्रैगुन जाल पसर पासारी।।
खोल नैन सम्भल पग चालो। जम कंकर सिर पर विकरालो।।

अपने मन की नित करो सम्भाल। पाप करम ना हिरदे भाल।।
सत करमी मारग वचार। सत करम से मिले सुखसार।।

पाप करम नित ताप को देवें, जीवन को करें नाश।
'मंगत' ग़फ़लत त्याग कर, ये गहरी जम की फाँस।।219

सत करम नित हिरदे धारो। पाप कूप से होये छुटकारो।।
सत करम मन धीरज देवे। ताप तपन सकली हर लेवे।।
सत करम सुख सार सरूपा। स्वर्ग सरूप सत करम अनूपा।।
सत करम नित बुद्ध परगासे। अपनी करनी की सार नित भासे।।
छिन छिन मनुआँ बिपता को त्यागे। पाप त्याग सत करम को लागे।।
सत करम मन तृपती देवे। भाओ भगत रस अन्तर लेवे।।
सत करम नित तेज बढ़ाये। तीन लोक का यश सो पाये।।
सत करम से बाज़ी जीते। आवागवन से भयो पुनीते।।
सत करम सम्पत जग सार। सत करमी नित पाये जयकार।।
सो वडभागी पुरख गुनवंता। सत करम की पाये परसन्ता।।
तिसका दरशन अधिक सुखरासी। सत करम जिस हिये निवासी।।
बिन सत करनी ना छूटन पाये। आवागवन में नित भरमाये।।
मानुष जनम की सार को भालो। सत करम में नित मनुआँ गालो।।
बिपता जाये शान्त परगासे। सत करम में नित करो निवासे।।
चोरी यारी जाए कपट विकारा। सत करम में जब निश्चय धारा।।
परनिन्दया पर-हान को छोड़े। साचे करम में प्रीती जब जोड़े।।
आलस निन्द्रा भाओ असुर तियागी। सत करम में जब विरती जागी।।
अपनी करनी की प्रभता जानी। मारग साचा जब धरम पहचानी।।
पाप कुपथ से मिले रिहाई। सत करम का गीत जब गाई।।

सतसंगत के मेल से, पाए करमगत सार।
'मंगत' ममता मद मिटे, जो अधिक पाप बिस्तार।।220

सत करम मन मैल को धोवे। साधन जुगत जो गुनी परोवे।।
सत करम ऊँच गत देवे। मिल सतसंग जो करनी सत सेवे।।
सत करम जीवन की सार। सत करमी पाये नित जयकार।।
सत करम सब बिपता हरे। गुरमुख विरले जिस सोझी पड़े।।
सत करम में प्रीत नित राखो। पाप कराल नहिं हिरदे भाखो।।
सत करम चानन नित देवे। सत करमी सतधाम को लेवे।।
सत करम नित बंधन काटे। ऊँच गती को जीव नित राटे।।
सत करम मारग सुखदाई। मिल सतगुर परापत पाई।।
अती जंजाल करम का जोई। सत करम से लीन समोई।।
अतिअत इच्छया जो नित जलाई। सत करम से शान्त समाई।।
भय भरम जो संकट अत भारी। सत करम का साधन देवे छुटकारी।।
भव दुस्तर जाँ वार नहिं पारा। मिले छुटकार जब सतकरम विचारा।।
वेद ग्रन्थ का ये ही फरमाना। साचा करम मन करो पहचाना।।
सतगुर पूरे की ये ही दीख्या। साचे करम की नित करो परीख्या।।
सतसंग का साधन अधकाई। सत करम मन चित्त वरताई।।
खल बुद्धी दुरमत तब नासी। साचा करम चित्त माहीं उपासी।।
आवागवन जो संकट भारी। निष्काम करम से पाये छुटकारी।।
करमगती को नित नित वचारो। साचा करम अन्तर चित्त धारो।।
साचा करम प्रभ बिरह उपजावे। दीन ग़रीबी रसना को पावे।।

सत करम साधन करो, ये ही धरम सरूप।
'मंगत' करनी निर्मल, हरे पाप का कूप।।221

यज्ञ दान सत और सेवा। साचे करम का सुनो नर भेवा।।
पर-हित चित्त और उपकारा। साचे करम का लियो मरम विचारा।।
सत सिमरन सतसंग परीती। साचे करम की साधो नीती।।
पर-दुख को नित हिये विचारी। निज सुख तजे सत करम आचारी।।
बादमुबाद संकट को त्यागे। खिमा ग़रीबी सत करम में जागे।।

आतम तीरथ सत साधू की सेवा। साचा करम विचारो गुनि देवा।।
सतपुरषों के इतिहास विचारो। साचे करम का निरना धारो।।
सिनेमा थेटर रास तमाशे। तिनको त्याग सत करम निवासे।।
चौपट जुआ शतरंज को त्यागो। साचे करम में तब उठ के जागो।।
मदिरा मांस चंडू और गाँजा। तजे भंग अफ़ीम चरस का वाधा।।
सकल विकार निवारन कीजो। सत करम मारग तब लीजो।।
सतपुरषों संग रखो परीती। सत करम की पाओ तब नीती।।
जीवन मरन का करो विचारा। साचा करम धारो नित धारा।।
सत करम की धार पहचानी। पाप विनास सुख सम्पत जानी।।
सतगुर सेवा सतनाम परीती। जो जन साधे जाये पाप कुरीती।।
पर उपकारी जीवन नित धारो। साचे करम का तब पाये विचारो।।
तन मन धन का त्याग नर पाये। साचा करम जब चित्त समाये।।
ज्यों ज्यों साधे मारग सत करम। त्यों त्यों परसे पद निरमल धरम।।
साचा लाभ पायो सुखरासी। नित सत करम में प्रीत बिलासी।।

सत करम की साधना, मन करे निषकाम।
'मंगत' दुबधा सब मिटे, जीव पाये बिसराम।।222

प्रभ का सिमरन सत करम विचार। प्रभ का हुकम धरम की सार।।
प्रभ का निश्चय परम कल्यान। प्रभ की कीरत परम निधान।।
प्रभ का भाओ परमगत देवे। गुरमुख साजन चित्त में सेवे।।
प्रभ अरदास सब संकट नासे। खेम कुशल आनन्द परगासे।।
प्रभ की शोभा धीरज देवे। भाग वडाई जो जन सेवे।।
प्रभ का नाम सम्पत अपारा। बंधन से देवे छुटकारा।।
प्रभ की गत मित वरनी ना जाई। जो जो सिमरे परम सुख पाई।।
साचा ठाकर पल पल चेत। मंगल देवे हरे विखेप।।
सबमें दरशन प्रभ का देख। सबमें क्रीड़ा तिसकी पेख।।
सब कुछ साहब शकत पछान। वार ना पार अतुल परमान।।
सरब शकत का सो दातारी। सब सम्पत का सो भंडारी।।

सकल धरम की सार प्रभ जान। गुनी ज्ञानी करें बखान।।
परमानन्द शान्त सरूप। जो जो सिमरे तजे भ्रम कूप।।
सब महमा में सो परिपूरा। लिख लिख थाके गुनि ज्ञान हज़ूरा।।
अपरम अपार साहब वडियाई। हरजन विरले सोझी पाई।।
एह बिध पावें परमपद मीता। केवल निश्चय हर चरन पुनीता।।
जो कीजे सो प्रभ के ताईं। जो पावें तिस शरन लखाईं।।
जो देवें सो तिसकी भेंट। दृढ़ निश्चय मन धार सुखरीत।।
जो हूआ सो हुकम पछान। करुनाकर समरथ भगवान।।
सब सम्पत प्रभ की चित पेख। तन मन धन सब तिसका देख।।
निरमल करम में जतना धार। पर सुख देना हुकम करतार।।
दान कीजो सौंपो प्रभ चरना। करम का भक्षक सो कारन करना।।
यज्ञ करो तिस चरन में त्यागो। आज्ञा बूझ सतकरम में जागो।।
तीरथ बरत जो कुछ साधो। प्रभ के हेत सरब आराधो।।

सकली किरया सौंप तूँ, नारायन पद मीत।
'मंगत' मिले सत शान्ती, सुन सतकरम की रीत।।223

प्रभ दाता सब कुछ कर रह्या, हरजन ना होयें अधीर।
जीव उद्धारन कारने, गुरमुख सहवें पीड़।।

जो होनी सो होत है, सरब प्रेरक आप।
भाग उदय तिनके भये, जिन जीवत सेव कमात।।

जैसी जो करनी करी, ति चित्त में रसना पाये।
सत करनी जग सार है, कोई गुनी पुरष उठ धाये।।

बनी बनाई ना रही, गढ़ लंका सा मीत।
चली कहावत जात है, ये भव मारग की रीत।।

स्वारथ और परमारथ, दो मारग परगट भये।
इक भोगे निज सुख को, इक पर को सुख नित दे।।

पर-सुख को जिस सेवया, सो चले जगत को जीत।
निज सुख मोहित जो भये, सो रोवत चले हैं मीत।।

सत-पुरषों की कीरती, नित मारग साच विचार।
'मंगत' करनी सो करो, जो जीव का करे उद्धार।।224

दुरमती को गुनी तियाग। सत मती में उठके जाग।।
जग में करनी है परवान। जो जन करे सो पाये निधान।।
सतपुरषों की पूजा सार। सत करनी आवे विचार।।
सतपुरषों का जीवन जोई। गुन करम मन माहीं परोई।।
उपजे साची करनी चाओ। मारग धरम तब लेख लखाओ।।
मारग धरम में जो प्रीत कमाये। करनी करके देवत हो जाये।।
ऐसा गुनियों करो विचार। करनी बांधा फिरे संसार।।
करनी त्याग कथनी बहु धारी। झूट पूजा देवत की पसारी।।
पाखण्ड धार जनम गँवाये। करनी अपनी देवे सज़ाये।।
ना कोई देव छुड़ावनहारा। ना कोई तेरा होये सहारा।।
अपनी करनी परतख दिखलाये। जो कुछ जीवत करम कमाये।।
मूढ़मती तूँ मन की त्याग। साची करनी में उठ जाग।।
सतपुरषों का साधन पेख। सतपुरषों की नीती देख।।
तिन अनुकूल जीवन को धार। जग आवन पावें जयकार।।
एह बिध निश्चय दृढ़ कर राख। अपनी करनी का नित फल चाख।।
अपनी करनी फेर फराये। ऊँच नीच चक्कर दिखाये।।
करनी से देवत हो जाये। करनी से नर असुर कहलाये।।
करनी से गुर पीर अवतारा। करनी बांधा कुल संसारा।।
जैसी करनी जिस जग करी। तिस अनुकूल शोभा को धरी।।

माया चक्कर आपार है, करनी लेख विचार।
'मंगत' करनी मुकत दे, करनी बन्धन सार।।225

साचा ज्ञान खोजो सुखरास। सत करनी पर आवे विशवास।।
करनी से भयो ब्रह्मा जग करता। करनी से भयो विष्नू जग धरता।।
करनी से शिव करे संघारा। त्रैगुन रूप करनी विसतारा।।

करनी से पवन पानी आकासा। करनी से धरती भई परकासा।।
करनी से चले सब भ्रम खेल। अदभुत रचना जगत कुलेल।।
करनी से कायर राजगत पावे। करनी से मूरख तत्त ज्ञान लखावे।।
करनी रूप मूल है माया। जैसा करे ऐसा फल पाया।।
करनी त्याग जो देवत पूजे। गुन करम नहिं तिन का सूझे।।
भरम गुबार में जनम गंवाई। बिन करनी कछु अर्थ ना पाई।।
जिस देवत की सेव विचारी। उसका गुन करम चित्त धारी।।
सत पुरषारथ से सत करम कमाई। सो पूजा देवे वडयाई।।
देवी देव गुरू आचारी। सिद्ध तपीशर गुनी गुनकारी।।
ज्ञानी पंडत जंगम जोगी। रिखी रिखीशर धरम संजोगी।।
सबका सार ये ही सिद्धान्त। निरमल करनी देवे शान्त।।
ताँ सों अपना जीवन सुधार। साची सीख हिरदे में धार।।
सत पुरषारथ सब बन्धन नासे। निरमल नीती से करो उपासे।।
अपना अन्धकार आप से जाई। पर भरवास नहिं शान्त दिखाई।।
एक साहब का निश्चय राख। साची सिखया सत धरम की चाख।।
अपने आप का करो निरोध। निरमल ज्ञान हिरदे में सोध।।

सत पुरषारथ धार के, अपनी दुरमत त्याग।
'मंगत' साधन सार ये, सब गुनियों की जाग।।226

गुरु-शिष्य विज्ञान

(क) सत्गुरु की आवश्यकता

पूरन सतगुर की सिखया विचार। नित चरनी सत सेव को धार।।
गुर बिन मन भरमन नहिं छोड़े। गुर बिन करे बहु पाप करूरे।।
गुर बिन नहिं सत निश्चय पाई। गुर बिन नहिं सत भेद लखाई।।
गुर बिन जीव बन्धन के माहीं। मुकत रूप का भेद ना पाईं।।
गुर बिन मिटे नहिं मन गुबारा। आवे जावे जूनी बहु धारा।।
गुर बिन सत शान्त ना पाई। कोट जतन कर लेख लखाई।।
गुर बिन नहीं अनुभव परकासे। गुर बिन नहीं सार कोई भासे।।
गुर बिन नहीं मन आवे ठौर। करम जाल नहिं बिनसे घोर।।
गुर बिन मनुआँ नित पियासा। गुर बिन धारी भरम दुःख आसा।।
गुर बिन नहीं प्रभ परगट पाये। कोट विधी जो योग कमाये।।
गुर बिन जतन अकारथ जाई। खप खप मरे सार नहिं पाई।।
गुर बिन मन नित औगन धारी। पाप करम का भयो पुजारी।।
गुर बिन पावे नहीं कभूँ धीर। जनमे मरे धारे तक़सीर।।
गुर बिन मनुआँ अन्ध भरवासी। बहु रंग पूजा करे उपासी।।
गुर बिन ज्ञान की सार ना पाये। पढ़ पढ़ थाके गुनी गुन राये।।
गुर बिन मिटे नहिं गवन का फेरा। काल करम चौरासी गेड़ा।।
गुर बिन मन नित छेद को धारी। अनँक संशे नित विचारी।।
माया अत घना गुबार। बिन गुर पाइये कभूँ नहिं पार।।
साचा गुर जब मेल मिलाई। सार शबद अन्तर लख पाई।।

गुर बिन भेद ना पाइये, मारग अगम का मीत।
'मंगत' शबद पछानिये, सतगुर की परतीत।।227

साचा सतगुर मेल मिलाए। सत मारग की सोझी पाए।।
मोह अगन जीव की नासी। गुर के बचन सत जुगत बिलासी।।
धरम करम का मारग जाना। पाप पुन्न की करी पहचाना।।
बन्धन मुक्त का सुना उपदेशा। मारग मुक्त में जीव परवेशा।।
ज़ोर जुलम गई पाई कुरबानी। साचे मारग की ओट पछानी।।
मरन का समाँ मन माहीं विचारा। जीवनकाल का सुना सत ब्यौहारा।।
नेम धरम मन आयो विशवासा। साची भगत में लियो निवासा।।
गुपत रूप परगट दिखलावे। गुर के चरन नित बलबल जावे।।
तेज परगास भई बुद्ध बलवाना। ज्ञान धरम में नित चित्त परवाना।।
निरमल दिसा पाई अबनाशी। गुर के बचन सुख सम्पत भासी।।
भूत परेत देव की पूजा। सतगुर मिले सब संकट सूझा।।
अपरम अपार पुरख अबनाशी। तिसकी भगत सतगुर परगासी।।
जनम जनम तपन भयो नासा। मिल सतगुर लियो मारग साचा।।
प्रेत बुद्ध से देव बुद्ध भई। रसना राम घर परगट लई।।
नाम निरंजन में पायो विशवासा। गरब त्याग भयो जग का दासा।।
चरंजीव जीवन गुर दीना। एक सरूप में निश्चय लीना।।
भय भरम में जीव दहकाए। सतगुर मिले तब संकट जाए।।
संसा जाए मन लेवे ठिकाना। अगम देस का सुने परमाना।।
झूटा जीवन मन का सब नासे। साचा जीवन चित्त कला परगासे।।
औखद नाम गुर दीनी मीता। प्रेम से खाए जमगढ़ जीता।।
निरमल ध्यान मन रह्या समाई। वडी देखी गुर की प्रभताई।।
तीन लोक में मित्तर इक साचा। सकल सखा संग है मेल जग काचा।।
गुर की रहनी धीर वरतावे। खोटा जीवन सहजे बिनसावे।।
परम आधार उपकारी जीवना। साचा मारग सतगुर प्रीवना।।

सकल सम्पत जगत की, अन्त जाए नर छूट।
'मंगत' संगत गुर साच की, मिलावे हर का रूप।।228

(ख) सत्गुरु प्राप्ति का मार्ग

करम फल इच्छया में जीव भरमाई। धार मनोरथ आवे जाई।।
अपनी कलपना आप बँधाई। फिर फिर गरभ जून को पाई।।
ना बंधन नासे ना पाये खुशहाली। आवागवन धारे करम की जाली।।
जुगजुग भरमे शान्त नहिं पाई। ऊँच नीच जूनी भरमाई।।
पाप पुन्न जो नित विचारी। पल पल कीजे जीव जो कारी।।
तिसका फल बहु रूप धार भोगी। फिरे चौरासी करम संजोगी।।
अधिक बिपता में नित रहाई। छाया प्रीत परम दुखदाई।।
मानुष देही मुकत की धारा। जो चित्त आवे तत्त ज्ञान विचारा।।
सत विचार जब हिरदे पाई। करनी शुद्ध मन आन समाई।।
निर्मल करनी जब नित उठ कीनी। भगती प्रेम तब अन्तर चीनी।।
देह विनाश आतम सत भासी। उपजे बिरह परम सुखरासी।।
साची बिरह जब अनुराग उपजायो। पूरे गुर की शरनी आयो।।
अपने अन्तर का सब ताप मिटाई। साची सीख मन आन समाई।।
सब विनाश जो देखन आवे। कालसरूप सब खेल लखावे।।
सबके अंतर इक शकत समाई। तिसका सिमरन गुर दियो दिखलाई।।
ज्यों ज्यों सिमरे प्रभ अंतरयामी। मिटे गुबार पावे बिसरामी।।
भली कमाई मन को नित धोई। साची जुगत सच नाम परोई।।
अधक प्रीत जब नाम में धारी। अंतरगत सत शबद विचारी।।
शबद में सुरती नित प्रेम से जोड़ी। समता ज्ञान तब सार निचोड़ी।।

एक प्रीत साहब की, दूजी विसरी आस।
'मंगत' समता ज्ञान में, कोई गुरमुख करे निवास।।229

(ग) सत्गुरु महिमा तथा लक्षण

सतगुर ऐसा भेंटिए, जाँ को भरम न कोए।
अन्तरगत में रम रह्या, परम शान्त चित्त होए।।

सतसरूप में नित समाए। सत की महमा नित मुख से गाए।।
झूठ माया का भरम उड़ाए। सत शबद में सुरत लगाए।।
बादमुबाद ऊँच नीच नहिं भेद। समदृष्ट जपे अक्षर वेद।।
इन्द्री भोग से रहे अतीत। आतम भोगे सो गुरू पुनीत।।
भय भरम नहिं जाँ को रोग। नित आनन्द मन रहे संजोग।।
कूड़ा संसा मन से विसराये। साचा शबद मन तन रमाए।।
शरधावान और उपकारी। अखण्ड सरूप का भए पुजारी।।
मज़हब मज़ाहब सबसे दूर। साचा मज़हब राखे हज़ूर।।
सब जीवों से करे पियार। पर दुख हरना कीजे ये कार।।
साचे नाम में मगन समाए। अनहद राता सो गुर अगाहे।।
अपने अन्तर का भरम तियागे। सतसरूप में नित रहे जागे।।
तीन अवस्था का संग त्यागी। चौथे जागे सो गुर वडभागी।।
अधम जीव की कीजे नित सेवा। मान त्याग पावे आलख देवा।।
अपने घर में जिस अमरत चीना। सो सतगुर परम परबीना।।
कलह कलंक दुरमत को छेदे। सतसरूप ठाकर को बेधे।।
खिमावान दृढ़ विशवासी। उलट मारग निरभय निवासी।।
दिन में गुपत रैन उठ जागे। आतम तत्व में रहे लिवलागे।।
जड़ चेतन का निरनय कीजे। मिल चेतन अमीरस पीजे।।
छिन छिन मन का संशा काटे। अबगत नाद निरन्तर राटे।।
मिटे अन्धकार घर चानन होए। ब्याध त्यागी साचा गुर सोए।।

गुर की महमा आपार है, जाने कोई गुर सन्त।
'मंगत' गुर साचा सोही, जाँ को नहीं भरमन्त।।230

सरब जगत के जाननहार। अन्तर में जो रहे नित न्यार।।
करम करे अन्तर निहकरमी। सो गुर साचा भयो वडधरमी।।
सत कला में रहे परबीना। अमरत रूप प्रभ दरशन कीना।।
ज्ञान विज्ञान में नित सँजुगता। निर्मान भाव का मन अन्तर भुगता।।
सादा जीवन मुख प्रेम परगासे। जप तप संजम में करे निवासे।।
ऊँच नीच को देवे उपदेश। तिस गुर को नित आदेस।।
सकल जियाँ का वैर मिटावे। प्रेम की गंगा सब माहीं बहावे।।
एक सरूप का देवे सबको विशवासा। संशे भरम का करे नित नासा।।
सत संतोख खिमा को खोजे। अगन तृषना मन की बूझे।।
एक नाम में रहे लवलीना। अन्तरगत सत ठाकुर चीना।।
सकल भरम की करे नित हाना। प्रेम भगत इक नाम रीजाना।।
उट्ठत बैठत सच निश्चय धारी। सो गुर साचा नित हूँ बलहारी।।
बारमबार करे निर्मल विचारा। एक ओट एको आधारा।।
पाखंड त्यागे इक नाम संभाले। सरब जियाँ देखे दीनदयाले।।
अन्तरगत सत शबद धियावे। भाओ प्रेम अखण्ड रस पावे।।
तजे शरीर इक ओट चित्त राखी। साचा नाम छिन छिन प्रभ चाखी।।
तीन अवस्था विख करम का जाल। चौथे परसे सो गुरू दयाल।।
मारग चौथे सत शबद की धारा। दुरमत त्याग नित करो विचारा।।
सुरत शबद इक धार लखाए। सकल भरमत मन की जाए।।
अखण्ड नाद गगन में बोले। उपरस ध्यान नाम प्रभ तोले।।
पाँच पचीस एक मिल होई। अखण्ड चित्त एक नाम परोई।।
आसा तजे मन होए निरासा। साचे शबद में करे बिलासा।।
सुरत निरत की चौसर खेले। आलख परगास में विरत मन मेले।।
ध्यान धियाता भयो इक रूपा। जो जन परसे सो गुरू अनूपा।।

गमता राखे ज्ञान की, अन्तर शबद कमाये।
'मंगत' भरमन जब मिटे, सतगुर तब कहलाये।।231

पर-उपकार जीवन जो धारी। पर-दुख में निज सुख वरतारी।।
दासाभाव मन माहीं समाई। इक चित्त प्रीत सरब कमाई।।
राजा रंक संग एक परीत। ठाकर सिमरे धर निरमल चीत।।
साचा रंग चित्त लियो रंगाई। लखियो लेखा बेपरवाई।।
वैरी मित्तर में भाओ एका। इक चित्त लेखे सुख दुख लेखा।।
साध-जनाँ की प्रीत कमाये। साची बंदगी जीवन पाये।।
खिमावान पर उपकारी। तिस गुर भेंट सुख मिले अपारी।।
साची कथा मन माहीं परगासी। साचे नाम को नित उपासी।।
अन्तरगत सत शबद लखाई। पल पल कीजे शबद कमाई।।
परले पार शबद बिसरामी। अगम पंथ खोजे सतनामी।।
अलप आहार सूक्षम सोवे। साचा शबद निरंतर जोवे।।
ऐसी रहनी जिस जन पाई। तिसकी सीख तीन लोक तराई।।
अकथ कथा का लेख लखावे। सुरत निरत इक धार कमावे।।
आपा त्याग सत जीवन पाये। तत्त अबनाश हिरदे में ध्याये।।
सुपन समान जग रचना देखे। साची कीरत प्रभ अन्तर पेखे।।
भय भरम गुबार मिटाई। अखण्ड जोत निरन्तर पाई।।
दुरमत मैल से उजला होई। आचार विचार में सुरत परोई।।
नित आनन्द बानी परगासी। तिस गुर भेंट गई काल की फाँसी।।
दिवस रैन निश्चय इक धारी। सो गुर साचा सब जुगत आचारी।।

तत्त ज्ञानी सतपुरष को, बन्दिये बारमबार।
'मंगत' नज़र निहाल तिन, पल में करे उद्धार।।232

सरब सिद्धों ने सिद्ध गत पाई। सत परतीत भये गुर सरनाई।।
अगम निगम का भेद दिखावे। सत करनी का राह समझावे।।
सकली भरमन से जीव छुड़ाये। तत्व ज्ञान दे गुरमुख तृपताये।।
सुखदेव मुनी की भरमन नासी। जनक निर्देही की सीख निवासी।।
नारद मुनी का मान तब नास्यो। झीवर गुर की चरन बिलास्यो।।

रामचन्द्र नित सिखया धारी। गुरू वशिष्ट तत्व विचारी।।
मुनी दुरबासा की सीख सुहाई। कृष्नचन्द्र ने उपमा गाई।।
अष्टावकर जनक मिलाये। सकल व्याधी पर प्रभता पाये।।
जगत को देख ब्रह्मा चित्त डोले। आकाश बानी की सुनी कलोले।।
सत भरवासी हो सत को खोजे। रूप विधाता घट अन्तर सूझे।।
सनकादिक का भरम निशाई। गुपत ज्ञान जब विरंच सुनाई।।
गोरख सीख मछन्दर से लीनी। सिद्धगती अन्तर में चीनी।।
गुरु चौबीस दत्तात्रेय धारी। गुन विचार के भयो निसतारी।।
गुर की महमा व्यास नित गाये। अनक भाँत परमान दिखाये।।
कबीर गुरु रामानन्द पाया। सतसरूप चित्त अन्तर आया।।
पीर पैग़म्बर जो भी कोई होवे। अपने गुर के चरन को धोवे।।
पुरख बिधाता ये चक्कर चलाई। सतगुर भेंट सब भेद लखाई।।
सत मारग का भेदी जोई। तिसकी सीख लियो चित्त परोई।।
तीन लोक की सम्पत सारी। साचे गुर के चरनी वारी।।

जैसी जिसने प्रीत करी, सतगुर चरनी माईं।
'मंगत' ऐसी गत मिली, भेद भरम दुःख जाईं।।233

सत साधू की महमा आपार। गुनी ज्ञानी कथ थाके नित सार।।
वेद ग्रन्थ नित उस्तत कीजे। अनन्त भाओ परमान लखीजे।।
साध की महमा हरि रूप समानी। साध की महमा विचरे चारे खानी।।
साध रूप से कला सत भासे। साध के बचन नहिं काल गरासे।।
साध के वचन मन धीरज आये। पारब्रह्म से मेल मिलाये।।
साध की महमा तत्त सार परगासे। साध की सिखया सब बन्धन नासे।।
साध की सेवा जुग जुग भरपूर। साधू आये प्रभ आप हज़ूर।।
साध का गुन अपरम आपारा। गावें ग्रन्थ कुतेब आचारा।।
साध की सिखया से जीव सरजीवे। बिखा को त्याग नित अमरत को पीवे।।
सकल जियाँ का संकट नासे। प्रेम सरूप तत्त परकासे।।
सकल जियाँ को साध आधार। साध का हुकम माने संसार।।

साध की नीती सब ग्रन्थ कुतेब। सत असत का खोलें भेद।।
साध का हुकम जो उलंघन कीजे। दोहे जहान में संकट सीजे।।
अन्धमत नहीं जाने प्रभताई। साध की सिखया सब माहीं वरताई।।
वेद कुतेब अंजील कुराना। सब ही रसना करी संत बखाना।।
पाखण्ड भरम का खंडन कीजे। सत सरूप अस्थापत लीजे।।
तन मन सतमारग में त्यागे। सतसरूप में नित प्रत जागे।।
इत उत माया की रचना पेखे। सार सरूप परगट कर देखे।।
मिथ्या भरम बकार को छोड़े। **'मंगत'** साधू सतधाम को फोड़े।।234
साध की सिखया ऊँच गुन परगासे। ऊँच गती को जीव करे बासे।।
सचसरूप में साध परबीना। सच ही आहार ब्यौहार नित चीना।।
सच ही माला सच खिनता धारी। सच ही जुगता मन माहीं विचारी।।
सत पुरषारथ छिन छिन कीजे। सत ही परगट सब माहीं लीजे।।
सतसरूप का सबको उपदेशे। मोह माया तम हरे भुलेखे।।
सब जीयों को अधिकार सिखाये। शुद्ध जीवन का राह दिखलाये।।
मन बिकार हरे नित ज्ञानी। नाना मारग परगट दिखलानी।।
गुपत रूप प्रभ परगट कीजे। मन अपने की दुरमत दीजे।।
नित आनन्द घर माहीं परगासे। साधू रमया सत संग्राम बिलासे।।
विचित्तर लीला साध ने धारी। खेम कुशल की सार विचारी।।
सत जीवन में जनम गँवाये। अन्तकाल सत रूप समाये।।
क्या बखानूँ साध वडयाई। साध की महमा प्रभ माहीं समाई।।
साध की सेवा उत्तम गत देवे। होवे रंक छतर सिर लेवे।।
साध की सेवा त्रै लोक वडयाई। साध की सेवा प्रभ कला दिखलाई।।
साध की सेवा से मोह तम नासे। सत सरूप कला परगासे।।
साध की सेव मान तेज बढ़ावे। साध की सेवा ऊँच धाम समावे।।
साध की सेवा सब बाज़ी जीते। साध की सेव चित्त प्रभ परतीते।।
साध को सेवे गुरु पीर अवतारा। साध को सेवे राजा रंक आचारा।।
साध की सेव चौदाँ भवन परगासे। **'मंगत'** साध रूप आप अबनाशे।।235

साध पर संकट जब ही आये। सकल देश की काया पलटाये।।
साध पर बिपत जब आन वियापे। दुर्भिख परगट सब जीव संतापे।।
साध के संकट काँपे चौधां भवन। देश उपद्रव सत्तता सब गवन।।
वैर बदी सब जियाँ घट आये। छतर नरेश का भंग कराये।।
सब कीरती नाश हो जावे। जब संकट साधू पर आवे।।
भूल ना करिये सन्तन सँग बैर। सन्त वैरोधी नहिं वरते खैर।।
चौधां भवन में पावे अपमान। सन्त वैरोधी अन्ध बुद्ध अंजान।।
कभूँ ना पाये मन में धीर। आठ पहर रहे दिलगीर।।
कपट को धार नहिं मारग बूझे। सन्त विरोधी नरक दर सूझे।।
सुकृत सीख सुन लयो मीता। साध की सेव घर मंगल लीता।।
जनम जनम की मैल गँवाई। साध की सिखया से परम गति पाई।।
साध सरूप आपे प्रभ आप। साध का नहीं कथा जाये परताप।।
मठ समाज नहिं साध दा होई। भेख भेखान्तर ना तिस मन कोई।।
कोटाँ मद्धे जन कोई साध। जिन हरया माया परमाद।।
सत सरूप में अचल चित हूआ। आलख पुरख मिल मिटावे भ्रम दूआ।।
अगम अपार घर कथा विचारी। सचखंड का सो भया पुजारी।।
सत आसन जत खिनता ओढ़े। प्रेम प्रीत की जुगता जोड़े।।
ध्यान भभूत मन अंग रमाई। निरभेख भाओ की रसना गाई।।
बिरह विवेक मन अन्तर धारी। **'मंगत'** ऐसे साध तौं बलहारी।।236

(घ) शिष्य के लक्षण

सिख सो ही जो गुर सिखया लेवे। मनमुख भरम सकल हर लेवे।।
बादमुबाद में चित्त नहिं लाए। गुरमुख धरम को सहज कमाए।।
गुर के बचन पर धरे विशवासा। गुर के चरन का होए नित दासा।।
तन मन धन गुरचरन पै वारे। जीवत मरे गुर शबद उचारे।।
गरब गुमान मन का त्यागे। सहज सुभाए गुर चरनी लागे।।
अमरत नाम गुरदेव से लेवे। मन बच करम से उसको सेवे।।

दु:ख सुख सकल रज़ा पै छोड़े। गुरसंगत मिल सब विगन को तोड़े।।
सच्चा मित्तर और स्वामी। नित रखयक गुरु पारगरामी।।
पारब्रह्म का बूझे उपदेश। द्वैत भरम का कटे संदेश।।
लख चौरासी गवन विसारे। पूरे गुर के चरन पधारे।।
अपने अन्तर की बाट लखाए। मन तन प्रेम से सेव कमाए।।
मरन कबूल करे गुर चरनी। अमरत पीवे सो सिख वड्धरमी।।
सत उपदेश गुर का भेख। प्रेम से पीवे सुने सिख का लेख।।
गुर सिखया ले बाद निवारे। आपा त्याग सतरूप चित्त धारे।।
नित ही संगत गुरबचन समाई। पलक ना विसरे सतनाम वडियाई।।
साचा भेख गुर मारग दिखलाए। सच कर माने सो सिख अधिकाए।।
जात जमात सिख की ना कोए। गुर विशवास गुरबचन चित्त जोए।।
अपने मन का शंका तोड़े। गुर उपदेश में प्रीती जोड़े।।
गुर की कहनी मन तन में धारे। दुरमत त्याग सत खण्ड पधारे।।
अटल प्रीत सतगुर के माहीं। सो सिख गुर के चित्त समाईं।।
पखबाद और मान गुमान। तिनको त्याग गुर सरन पहचान।।

अपने मन की भरमना धोए, सुन गुर का उपदेश।
'मंगत' सो सिख पावे सिखया, साच शबद संदेश।।237

सिख भाओ जो चित्त में राखे। सतगुर धाम की रसना चाखे।।
मान तियाग होए निमाना। संग तियाग होए यगाना।।
साचे नाम की राखे ओट। काल की लागे ना कभूँ चोट।।
गुर के हिरदे की बात पहचाने। आज्ञाकारी होए सतरूप को जाने।।
दीन आजज़ी आवे धीर। सिख घर उपजे शबद गँभीर।।
निराकार का भेद लखाए। गुर के बचन की देखे प्रभताए।।
मोह-माया सब भरम विनासी। साचा सिख सच भेख निवासी।।
तन से मन से नित कीजे सेवा। बाद त्याग दरसे ब्रह्मदेवा।।
सुख सरूप पाए नारायन। उल्टे मारग करे सुरत आवाहन।।

जतन जतन कर सिख धरम को साधे। विच ग़रीबी भय भरम को बाढ़े।।
साध-जनाँ की होवे चरन धूड़। सो सिख आपे रूप हज़ूर।।
खट्टे घाले मन गुर शबद विचार। सो सिख पाए सच सरजनहार।।
पर-उपकारी मत सत करमी। धन्न आया सो सिख नेहचल धरमी।।
गुर की कीरत में तन मन त्यागे। तिस सिख घर गुरमुखता जागे।।
मन बानी में धरे सत उपदेश। सतगुर दया सब मिटे कलेश।।
सत मारग में चाले नीत। गुर के बचन धरे अधिक परीत।।
संग जमाती और परिवार। तिनसे राखे अधिक गुरचरन प्यार।।
लोक लज्जया सब भरम वँजाए। गुर का सिख सो सोभा पाए।।
कठन कठोर मन पर पावे जीत। सिख गत पाए कोई गुनी पुनीत।।
सब संसार का छूट जाए संग। केवल गुरचरन दृष्ट से लागे मन रंग।।
सो वडभागी वडदाता होए। गुर के वचन मिल भ्रम सब खोए।।

धन्न सतगुरु धन्न सिख है, धन्न अचरज संबाद।
'मंगत' पावे कीरती, सुन साचा मरम अगाध।।238

बचन गुरू में जीवन जीये। सत परतीत परम पद लीये।।
पल पल गुरु की सीख विचारे। भव दुस्तर से उतरे पारे।।
अपनी हिक्मत सयानफ़ छोड़े। गुर के बचन संग प्रीती जोड़े।।
आचार विचार जो गुर समझाई। तन मन से नित करे कमाई।।
गुर की उस्तत रहनी गुरु देखे। गुर के बचन करे जीवन लेखे।।
इक परमेश्वर की सिफ़त कमाये। सतगुर साचा ज्यों बतलाये।।
बादमुबाद कदूरत त्यागे। साचे करम में उठके जागे।।
अपनी गफ़लत पाप को खोवे। गुर सिखया साबुन ले धोवे।।
पूरे गुर की सेव कमाये। ज्यों ज्यों सेवे त्यों दु:ख जाये।।
साचा बचन जो गुर समझाई। मन बच करम तिस प्रीत कमाई।।
बेमुख जीवन अंतर से छोड़ो। गुरमुख जीवन प्रभ चरनी जोड़ो।।
गुर उपकार सब बन्धन नासे। सो सिख साचा गुरु रूप परगासे।।
सतनाम धन हिरदे में धारी। साची भगत पाई पारमुरारी।।

सत सरूप का लेख लखाई। अपने घट में नित दरशन पाई।।
वस्त अगोचर घर परगट होई। पूरे गुर की सिखया चित्त जोई।।
पाप कपट सब खेद निसाई। पर उपकारी जीवन को पाई।।
वैर विकार से छूटन पाये। मुकन्द सरूप यश हिरदे आये।।
सरब पदारथ का सुख पाई। सतनाम की उस्तत गाई।।
मानुष जनम का लाभ कमायो। सत सिखया सत करनी पायो।।

मारग साचे धरम का, पायो पूरन रीत।
'मंगत' औगन सब गये, रख गुर चरन परीत।।239

गुर कहनी रहनी युगत बतावे। सिख और की और चित्त में लावे।।
गुर दिखलाए सत मारग सत धाम। सिख सेवे विच माया बिसराम।।
मुख से तो सब सिख हो बैठे। मन में नहीं शरधा को राखे।।
माया लोभी और मोह परवारी। गुर की सिखया की मिले ना पारी।।
अन्तर कपट बाहरों बहु भेख। निवनी खिवनी धारे बहु लेख।।
माया कारन गुर को पूजे। सो सिख कैसे सत मारग सूझे।।
गुर कहनी कुछ और बतावे। उलट भांत तिसको वरतावे।।
गुर दिखलावे सतसंग सत ज्ञान। चेला धाए चौपट जुए मैदान।।
गुर दिखलाए सबसे हेता। चेला परसे बाद विखेपा।।
गुर बतावे आतम तत्त ज्ञान। चेला पूजे मढ़ी मसान।।
गुर बतावे अन्तर की बाट। सिख धावे उठ तीरथ घाट।।
गुर सिखलावे मन तन कुरबानी। सिख करे हिंसा चित्त लोभ पछानी।।
गुर जपावे साचा करतार। सिख जापे मनमोहनी नार।।
गुर उपदेसे मन राखो नीचा। सिख होए बैठा सबमें ऊँचा।।
गुर बखाने सत पद अबनासी। चेला जापे माया बिख रासी।।
गुर दिखलाए सुतन्तर रहनी। सिख मठ गादी की रसना लीनी।।
गुर जपावे सबमें एक परमेश्वर। सिख जापे बादमुबाद सब भीतर।।
गुर दिखलावे शबद ध्यान। सिख पूजे पोथी पाखान।।
गुर समझावे मीठा बोल। सिख उठ बोले बिलक्खन बोल।।

एक परमेश्वर गुर सबमें दिखलाए। सिख उठके नया पंथ चलाए।।
गुर दिखलाए नित पर-उपकार। चेला परसे परधन परनार।।

गुर कहनी कुछ और है, सिख माने कुछ और।
'मंगत' लोभ की टाटरी, कह बिध होवे चूर।।240

गुर समझावे जत सत त्याग। सिख भोगे मन विखे की आग।।
गुर ब्रह्मा गुर महेश्वर आए। मनमुख सिख नहिं पार को पाए।।
छिन छिन में गुर सिखलावे ज्ञान। मनमुख सिख नहिं पावे निधान।।
खिमा दया परमेश्वर का ध्यान। साचे सतगुर नित करें बखान।।
भेखाचारी और दम्बी सिख जोए। साची सिखया ना मन तन परोए।।
गुर को दोख क्या लगाए। आप ही चाले उलटे राहे।।
सूर परकासे थल मंडल आकास। उल्लू के मन अन्धकार निवास।।
सूर के चानन में नाहीं बिकार। उल्लू के नैन पड़ा अन्धकार।।
एह बिध मूरख विखयाचारी। साचे गुर की नहिं सार विचारी।।
अपनी हिकमत चलावे दिन रैन। बिन सत कीरत नहिं पावे चैन।।
मूरख जन नहिं जड़ता को छोड़े। चाहे गुर सिर भूमी पै फोड़े।।
मूरख सिख गुर कीरत डुबावे। मूरख पुत्तर कुलनाश करावे।।
बिन अधिकारी जो देवे उपदेश। तिस गुर को नित संकट कलेश।।
बिन अधिकारी जो देवे अन्तरज्ञान। मानक फैंके विच धूल मसान।।
बिन जिज्ञासू गुर चेला जो कीजे। नेहफल जाए नहिं सार को सीजे।।
सिख की रहनी कहनी करे विचार। सिख के आहार ब्यौहार की सीजे सार।।
सिख के मन का देख अनुराग। सिख की बुद्धी का परखे वीभाग।।
सत करम प्रथमे दिखलाए। समाँ गुज़ार सिख लक्ष लखाए।।
बिना प्रेम और दृढ़ बैराग। कभूँ ना खोले सत मारग की जाग।।
सत करम का सबको देवे उपदेश। अधिकारी को देवे सतमारग संदेश।।
गुर सुतन्तर सिख अधिकारी। दोनों मेल से भई सोभा भारी।।

आतम तत्त परबीन गुर, सिख बेचे तन मन तिन पास।
'मंगत' ले सत सिखया, सिख भयो रूप अबनास।।241

(ङ) सत्पुरुषों का जीवन

सतपुरषों की सीख से, मन तन भये अरोग।
'मंगत' महमा नाद की, पाई सार सँजोग।।242

सतपुरषों की कथा विचारो। पावें निरमल ज्ञान सुखकारो।।
ये मन नित ही दुबधाधारी। साची सीख से उतरे पारी।।
एह मन नित ही भरमे भूला। सत सिखया से हरे जम सूला।।
इस मन का नहिं और उपाये। सतपुरषों का जीवन ध्याये।।
जैसी मन परतीत समाई। तिस अनुकूल जतन को धाई।।
सत परतीत अन्तर धारी। सतपुरषों का आदर्श विचारी।।
उपजे चाओ सत मारग पाई। जतन करे सत सार लखाई।।
आदर्श सरूप ही मन का जान। आदर्श अनुकूल जतन करे अनजान।।
बिना आदर्श सदा रहे निरासा। केवल भरम में लीजे वासा।।
जैसी करनी जो भी धारे। तिसका आदर्श प्रथमे विचारे।।
दृढ़ विशवास जभी चित्त पाई। सत पुरषारथ पाये प्रभताई।।
जतन करे तब सार लखाई। पूर मनोरथ मंगल को पाई।।
और आदर्श माया की फाँसी। जीव फरावे नित भरम चौरासी।।
सतपुरषों का आदर्श विचारी। आवे शान्त परम सुखसारी।।
सत साधन हिरदे परगासी। जतन करे तब खेद विनासी।।
ताँ सो ऐसा निश्चय धार। सतपुरषों का लेख विचार।।
सतपुरषों की करनी परवान। सतपुरषों की कहनी सुख जान।।
सतपुरषों की रहनी मूल। भरम चक्कर की काटे भूल।।
ताँ सों नित ही कथा विचार। सतपुरषों की कीरत धार।।

सतपुरषों की कीरती, तन मन करे निहाल।
'मंगत' नित सतसंग से, सत मारग लीना भाल।।243

ये संसार अधिक भयाना। बिना जतन नहिं होवे कल्याना।।
प्रथम जतन ये साधन सार। सतपुरषों का लेख विचार।।
जिस बिध जीवन जग वरताया। साची प्रीत प्रभ चरन ध्याया।।
इस बिध मन में धारो चौंप। तिन आधार जीवन को सौंप।।
कहनी तिनकी अत सुख देवे। दृढ़ निश्चय से जो जन सेवे।।
करनी तिनकी सत मारग दिखलाये। दृढ़ विशवास मिले सुखदाये।।
रहनी तिनकी धीरज सत देवे। निरमल बुद्ध से गुनी जो सेवे।।
ताँ सों निरमल करो विचार। सतपुरषों की सिखया धार।।
जीवन मुकत अभयपद वासी। साची बिरह प्रभ चरन उपासी।।
परहित पर उपकार को धारी। पर दु:ख में निज सुख वरतारी।।
जप तप संजम त्याग पछानी। मारग मुकत दृढ़ सेव कमानी।।
निरमल उद्दम निर्मल विशवासा। निर्मल विवेक जीवन इतहासा।।
निरमल चित से करो विचार। तिन अनुकूल जीवन को धार।।
मन का आदर्श जो ऊँचा होई। निरमल करम का जतन परोई।।
मन का आदर्श जो अती गम्भीरा। सत धरम साधे सुखसीरा।।
मन का आदर्श जो अती तियागी। गृह को त्याग भया बैरागी।।
मन का आदर्श जो अत धनवन्ता। अनंक ब्यौहार की साधे सन्था।।
मन का आदर्श जो होये भूपाल। अनंक जतन कर साधन भाल।।
जैसा चित्त आदर्श समाई। तिस अनुकूल खेल खिलाई।।

मन का जो आदर्श हो, तिस बिध उद्दम धार।
'मंगत' चक्कर ये जगत का, सकल आदर्श आधार।।244

सकल जगत का भेद पहचानी। दुर्लभ साधू की सुनो कहानी।।
मन के भरम में सब जग दिखलावे। नाना रंग धर नित समावे।।
छिन छिन में जो रचना करे अनेके। साध पहचाने धर विरत विवेके।।
इच्छया करम जो नित मन धारी। निहकरम विरत सत साधू विचारी।।
मिथ्या देह संग जीव करे ब्यौहारे। अबनाशी नाद घट साधू विचारे।।

इन्द्री भोग नित जीव भरमाया। उपरस जीवन सन्तन ने पाया।।
करम फल इच्छया धर जीव पियासा। अमरत शबद घट साधू परगासा।।
इच्छया भोगन की जीव लिपटाया। नाम का सिमरन सन्तन घर पाया।।
आठ पहर बिच माया तापे। नित आनन्द घर सन्त चित्त थापे।
आवन जावन की ना सार जग सूझे। साचा साधू सब खेल को बूझे।।
मिथ्या जग में अन्ध राख भरवासा। सतसरूप में हर सन्त निवासा।।
बाहरमुख जीव सुख थाओं विचारे। अन्तरमुख सेव साधू सत धाम लखारे।।
अन्धमत मनुआँ नित आवे जाए। पुरख विवेकी सतरूप समाए।।
नाना सम्पत ले आवे नहिं धीर। एको भगत ले हरजन रमे सरीर।।
दृष्टमान को देख भरमावे। अदृष्ट रूप में हर सन्त समावे।।
लख चौरासी का भय नित धारी। अटल पन्थ का भया साध पुजारी।।
इच्छया भोग में जीव ग़लताने। अगम शबद ले भए सन्त मस्ताने।।
पढ़-पढ़ थाकें नहिं सूझे अन्ध सार। एको अक्षर पढ़ साधू होए निस्तार।।
अन्धमत जीया नित डोलाए। हर का सन्त नित ही तृपताए।।
बहु थां धरे पर अन्त निहथाँवाँ। हर का भगत देवे सबको थाँवाँ।।
मूरख जीया अन्त को चले निरास। सच साधू निरभय घर वास।।
जग को देख हर नाम विसारे। हर का दास इक नाम ब्यौहारे।।
साध की महमा ऊँच से ऊँची। पाथर निस्तारे ले संगत साची।।

चक्कर माया सब छेद के, पावें निरमल धाम।
'मंगत' एको सन्त ही, पावें दृढ़ बिसराम।।245

(च) सत्पुरुषों की समानता

सब सिद्धन की सार सुन, सब गुनियाँ दा ज्ञान।
सतसरूप प्रभ एक ही, सबमें भया परवान।।

जैसे जिसने प्रीत करी, पायो सरजनहार।
बन्धन से मुक्ता भये, जग के भये आधार।।

समाँ देश विचार के, नीती करें बखान।
भेद भाओ कछु नहीं, केवल सार निधान।।

होये मसीह जापता, प्रभ पिता रूप सम प्यार।
अनन भगत घट उपजी, दरसा रूप आपार।।

जान जिसम निरना किया, जिसम से भया अतीत।
जान तत्त पछान के, सदा रहे रमनीक।।

राग द्वेष संशा गया, करम विकार विनास।
सतसरूप से मेला भया, जीव भया निरवास।।

ऐसे जापे नाम को, गुनी मौहम्मद नीत।
मित्तर सम प्रभु जान के, राखे दृढ़ परतीत।।

बीच रज़ाई त्यागया, सकलो करम बकार।
दीन आजज़ी में रमा, नफ़स दा किया शिकार।।

बीच रियाज़त नित रहे, साहब पर विशवास।
अधिक प्रेम परगट हुआ, आये मिला अबनाश।।

परम त्यागी बुद्ध भया, सो तत्त जापे निरवान।
काल करम संशा गया, बुद्ध निश्चल परवान।।

दु:ख सुख प्राकिरत के, व्यापे नाहीं कोए।
सार कला परगट भई, करम बन्ध सब खोए।।

सबसे परे आनन्द रूप, जाना इक परकास।
तिसमें ही विरती लगी, पाया मोख निवास।।

सार तत्त सत जान के, नित रहे परवीन।
ऐसे रूप भगवान का, गुनी बुद्ध लियो चीन।।

परमारथ को सोधता, रिखवदेव इस भाँत।
मन करम और वासना, सकले द्वन्द भरान्त।।

तिससे परे इक वस्त है, नित ही शूनियंगकार।
सकल से न्यारा सो रहे, अखण्ड तत्त निरंकार।।

तिसमें बुद्धी जब गई, तब पावे बिसराम।
जैनमत परगट कियो, दे साचा पैग़ाम।।

ज़रोदश्त विचारया, अगनी रूप भगवान।
काल करम को भसम करे, बुद्धी दे कल्यान।।

तिसमें ही नित मगन रहे, आशा बिघन निवार।
केवल अगनी ब्रह्म को, नित राखे मन धार।।

अगन पुजावे जगत में, कियो ये विचार।
मत पारसी परगट किया, देके ज्ञान आधार।।

सब रिषियन की सार सुन, अध्यातम विचार।
वस्तू एक ही पूजते, नाना जुगत मन धार।।

सबकी सार को सुनके, दृढ़ कीजे विशवास।
'मंगत' विचरे नाम में, कटे करम की फाँस।।246

गुरुमुख-मनमुख मार्ग

गुरमुख मनमुख का सुनो विचार। परम निधान सब जीव आधार।।
मारग दोई जग में दिखलाए। इक मुकत पछाने इक बन्धन पाए।।
नित ही जुगत से करो विचार। सत तत्त बूझे मिटे जीव आज़ार।।
सबसे उत्तम ये ही विवेक। गुरमुख मनमुख का पावे लेख।।
सार आसार का निरनय ध्याये। सार पछाने परम गत पाए।।
गुरमुख बुद्धी सत करम विचार। मनमुख भोगे विख की सार।।
गुरमुख जुगत मुकत विचारी। मनमुख केवल चित्त भोग लखारी।।
गुरमुख सत तत्त बरोले। मनमुख हंग बुद्ध नित तोले।।
गुरमुख सत मारग में जागे। मनमुख का चित्त विखयन में लागे।।
गुरमुख करे जीवन कल्यान। मनमुख कीजे जीवन की हान।।
गुरमुख जग को बन्ध पहचाने। मनमुख जग में बसे ग़लताने।।
गुरमुख खोजे तत्त अबनाशी। मनमुख लोचे मन भोग बिलासी।।
गुरमुख पावे प्रभ पर विशवास। मनमुख धावे करम की फाँस।।
गुरमुख प्रभ का भाना माने। मनमुख अपनी हिकमत पहचाने।।
गुरमुख लेवे सत-पुरषन का रंग। मनमुख धावे छल कपटी के संग।।
गुरमुख अपने आप पर सोचे। मनमुख और के औगुन को लोचे।।
गुरमुख मन में धारी सत जुगती। मनमुख धारे वैर चित्त विरती।।
गुरमुख आप को माने नीचा। मनमुख हो बैठे नित ऊँचा।।
गुरमुख मनसा पर-हितकारी। मनमुख सबकी खाल उतारी।।
गुरमुख राखे विरत निषकामी। मनमुख अन्तर लोभ स्वामी।।
गुरमुख बोले बोल निरमान। मनमुख बोले करे अभिमान।।
गुरमुख दुनियाँ देखे फ़ानी। मनमुख तिसको सत कर जानी।।
गुरमुख अपना खेद निवारे। मनमुख और का खेद चित्त धारे।।

मारग दो संसार में, परगट साहब कीन।
'मंगत' जैसा जो चले, होय तिस ही में लीन।।247

गुरमुख और की सेवा माँगे। मनमुख अपनी सेव कमाँदे।।
गुरमुख उद्दम दूजे सुख देवे। मनमुख दूजे का सुख हर लेवे।।
गुरमुख साहब की परजा को सेवे। मनमुख अपने भोग को लेवे।।
गुरमुख मनुआँ नित विवेकी। मनमुख अन्तर नित बदनीती।।
गुरमुख और के सुख पर राज़ी। मनमुख अपने सुख संग लागी।।
गुरमुख अन्तर सील संतोष। मनमुख तापे मन विषे के दोख।।
गुरमुख परसे परमानन्द। मनमुख धावे विरत दुवन्द।।
गुरमुख जीवन सत सरूप। मनमुख जीवे भरम धर कूप।।
गुरमुख अन्तर एक समाया। मनमुख अनक संशे भरमाया।।
गुरमुख खोजे तत्त निरवान। मनमुख खोजे राज निधान।।
गुरमुख अन्तर सम्पत सत ज्ञान। मनमुख सम्पे द्रभ भूमि अभिमान।।
गुरमुख साहब से रक्खे प्रीत। मनमुख चाले नित विपरीत।।
गुरमुख अन्तर बिरह बैराग। मनमुख अन्तर विषयन का राग।।
गुरमुख जाने इक साहब ज़ात। मनमुख धावे नाना जमात।।
गुरमुख अपनी ग़फ़लत को त्यागे। मनमुख अपनी सतता से भागे।।
गुरमुख पूजे इक साचा नाम। मनमुख पूजे नारी और दाम।।
गुरमुख खाए साचा विचार। मनमुख खाए कुल वस्तु संसार।।
गुरमुख पहने वस्तर सुखदाई। मनमुख पट पटम्बर हँडियाई।।
गुरमुख चाले हंस की चाल। मनमुख चाल बहु रंग की भाल।।
गुरमुख बोले अमरत सम बोल। मनमुख बोले अगन सम तोल।।
गुरमुख रहनी सादा धारी। मनमुख उसारे महल अटारी।।
गुरमुख ऊँच नीच से प्यार। मनमुख बैठे हो ऊँच का यार।।
गुरमुख परनारी परधन बिख जाने। मनमुख तिनका भोग सुख माने।।

साच गती गुरमुख ले, मनमुख भरम विचार।
'मंगत' कहे समझाय के, जग परसो निर्मल सार।।248

गुरमुख मन का करे उद्धार। मनमुख धारे रस भोग विचार।।
गुरमुख मन को दमना कीजे। मनमुख मन के भाओ वरतीजे।।
गुरमुख खोजे तत अबनास। मनमुख खोजे विखे भोग बिलास।।
गुरमुख अन्तर ठाँड घनेरी। मनमुख तापे अगन भ्रम केरी।।
गुरमुख धावे साची समाज। मनमुख धावे संग चोर छलबाज़।।
गुरमुख अपना मरन विचारे। मनमुख अपना जीवन नित धारे।।
गुरमुख देखे जग को मेला। मनमुख फिरता भूल अलबेला।।
गुरमुख अन्त की करे तयारी। मनमुख आस जीवन की धारी।।
गुरमुख देखे करते का खेल। मनमुख अपनी हिकमत संग मेल।।
गुरमुख तन मन साहब पर वारे। मनमुख तन मन अपना कर धारे।।
गुरमुख सेवे नाम प्रभ एक। मनमुख सेवे कुकरम अनेक।।
गुरमुख जप तप संजम कमावे। मनमुख मनमाने भोग भोगावे।।
गुरमुख साहब करनी पर राज़ी। मनमुख अपनी हिकमत बहु साज़ी।।
गुरमुख परसे तत्त गियान। मनमुख धारे देह की शान।।
गुरमुख अन्तर हरे बकार। मनमुख अन्तर सेवे हंकार।।
गुरमुख नित सत कथा विचारे। मनमुख अपनी शोभा नित धारे।।
गुरमुख आहार विहार संजुगता। मनमुख जाल फैलाए नित कुढ़ता।।
गुरमुख जीवन देव समाना। मनमुख जीवन पशु सम जाना।।
गुरमुख माया दुस्तर को काटे। मनमुख माया अमरत तुल चाखे।।
गुरमुख कीजे साध की सेवा। मनमुख पूजे धनवादी देवा।।
गुरमुख नीवे निज आप सुभाए। मनमुख नीवे अत लालच मन पाए।।
गुरमुख माँगे सबकी कल्याण। मनमुख माँगे औरों की हान।।
गुरमुख लक्षन विवेक विचार। मनमुख राखे मद मान बकार।।

प्रभ अपने से माँगयो, गुरमुखता तत्त सार।
चार पदारथ तिसमें, 'मंगत' कहे पुकार।।249

गुरमुख के मन धीरज समाए। मनमुख का मन नित डहकाए।।
गुरमुख सोभा राम की गाए। मनमुख सोभा देह में तृपताए।।
गुरमुख अन्तर अधिक विचार। मनमुख अन्तर अधिक बकार।।
गुरमुख देखे नारायन सत एक। मनमुख देखे सत भरम भुलेख।।
गुरमुख आवागवन से भागे। मनमुख तिसमें रहे नित लागे।।
गुरमुख रोए देख मन की खोटाई। मनमुख रीझे देख मन की चतराई।।
गुरमुख खोजे मारग सत धाम। मनमुख लोचे चौरासी जाम।।
गुरमुख मन पर पावे जीत। मनमुख मन चंचल संग प्रीत।।
गुरमुख देह का तजे अभिमान। मनमुख देह में नित ग़लतान।।
गुरमुख धरम मारग प्रगटावे। मनमुख अधरम विरत कमावे।।
गुरमुख मन में प्रेम अनुराग। मनमुख अन्तर बाद का राग।।
गुरमुख सबकी कलह निवारे। मनमुख सबमें भरम संचारे।।
गुरमुख ऊँच रहनी सिखलावे। मनमुख नीच गती को धावे।।
गुरमुख अन्तर का खोले पाट। मनमुख बाहर के धारे घाट।।
गुरमुख परमेश्वर अन्तर देखे। मनमुख अन्तर करम संदेसे।।
गुरमुख अन्तर ब्रह्म परकासा। मनमुख अन्तर क्रोध निवासा।।
गुरमुख दिशा शान्त विचारी। मनमुख अन्तर अगन अँगारी।।
गुरमुख बाज़ी लीनी जीत। मनमुख चले हार के मीत।।
गुरमुख सत्त धाम को पाया। मनमुख बीच जूनी भरमाया।।
गुरमुख कूड़ कपट को त्यागा। मनमुख भ्रम बकार में नित रहे लागा।।
गुरमुख सत पुरषारथ धारे। मनमुख सोय के औध गुज़ारे।।
गुरमुख मारे सकल ग़नीम। मनमुख सेवे कूड़ मुहीम।।
गुरमुख अन्तर भया परगास। मनमुख अन्तर काम निवास।।

गुरमुखता से गत मिले, ये धरम यथारथ जान।
'मंगत' जो सेवे नित प्रेम से, परमारथ करे पहचान।।250

गुरमुख धाम पाए नित ऊँचा। मनमुख विचरे जूनी धर अनूपा।।
गुरमुख अखण्ड रूप को जापे। मनमुख धारे भोग संतापे।।
गुरमुख आध व्याध निवारी। मनमुख तिनका भया पुजारी।।
गुरमुख खाए साचा योग। मनमुख खाए इन्द्री के भोग।।
गुरमुख लीना अबनासी संग बास। मनमुख मोहे धर जगत पियास।।
गुरमुख वेद कतेब को वाचे। मनमुख संशे भरम को राचे।।
गुरमुख राखे इक साहब की टेक। मनमुख के भरवासे अनेक।।
गुरमुख जग में जीवन पाया। मनमुख अंत चले पछताया।।
गुरमुख सेवे सत ज्ञान का वादी। मनमुख सेवे कपटी परमादी।।
गुरमुख बूझे अन्तरगत बानी। मनमुख धारे तसव्वर फ़ानी।।
गुरमुख मन को अनेक भाँत समझावे। मनमुख मन को अनेक भाँत भरमावे।।
गुरमुख मन निहचल सुख पेखे। मनमुख मन चंचल सुख देखे।।
गुरमुख लज्या शरम पत राखे। मनमुख ढीठ निरलज्या को भाखे।।
गुरमुख सबको लज्या देवे। मनमुख निरलज्जित देख हरखेवे।।
गुरमुख सबसे साँझ वरतावे। मनमुख सबसे न्यारा हो धावे।।
गुरमुख सबका भए अधिकारी। मनमुख अपनी खुदी नित धारी।।
गुरमुख परचे तत्त निरवाना। मनमुख परचे चौरासी खाना।।
गुरमुख अन्तर साचे गुर प्यार। मनमुख अन्तर गुर खोजे बकार।।
गुरमुख गुर की कहनी चित्त धारे। मनमुख गुर में दोष विचारे।।
गुरमुख दीन ग़रीबी भेखा। मनमुख धारे घमण्ड बिशेखा।।
गुरमुख सबके चरनों की धूड़। मनमुख अन्तर अधिक ग़रूर।।
गुरमुख अन्तर हरचरन पियास। मनमुख अन्तर पाखण्ड निवास।।
गुरमुख शत्रू से करे पियार। मनमुख मित्तर से भेद विचार।।

गुरमुख रहनी देव की, मनमुख असुर सम जान।
'मंगत' गुरमुख धरम को, सेवो जब लग प्रान।।251

गुरमुख की अत उज्जल नीती। मनमुख अन्तर अती पलीती।।
गुरमुख भेद जाने कोई संत। मनमुख भ्रम में भरमें सब जन्त।।
गुरमुख मारग कोई सूरा जाए। मनमुख भोग सहज चित्त भोगाए।।
गुरमुख रहनी खाण्डे की धार। मनमुख धारे बिन जतन विकार।।
साची जुगती मारग कल्यान। गुरमुख धरम की करो पहचान।।
गुरमुख होवे परम तत्तवेता। गुरमुख जानो जग माहीं पुनीता।।
गुरमुख साची जुगत कमाए। ज्ञान ध्यान में नित तृपताए।।
गुरमुख खण्डे चौरासी धारा। गुरमुख छेदे काल बकारा।।
गुरमुख बाद-मुबाद को हरे। गुरमुख साच सिमर निसतरे।।
गुरमुख मन बानी इक बोले। गुरमुख रसना तत्त ज्ञान की तोले।।
गुरमुख साचा जग करे ब्यौहार। खिमा दया और सब जीवों उपकार।।
गुरमुख देह के सुख को त्यागे। अखण्ड अबनाशी सुख आतम जागे।।
गुरमुख हरे सकल पाखण्ड। एके देखे पिण्ड ब्रह्मण्ड।।
गुरमुख अन्तर शबद घनघोर। सुरत निरत ले बन्धन तोड़।।
गुरमुख जीवे इक नाम की आसा। निमख-निमख कर जापे नित स्वासा।।
गुरमुख पाँच पचीस को जीते। एके टेक गुर चरन परीते।।
गुरमुख माया भ्रम को हर लेवे। साच जुगत सतगुर को सेवे।।
गुरमुख जग से भयो उद्धार। आपा त्याग गुर शबद विचार।।
गुरमुख अन्तर खुले कपाट। आतम दरसे बीच ललाट।।
गुरमुख करम धरम में पूरा। आप निवार सिमरे हज़ूरा।।
गुरमुख रहनी रूप कल्यान। होवे गुरमुख करे पहचान।।
गुरमुख अपनी हिकमत चुकाए। मन तन करम में धरे रज़ाए।।
सब कुछ देखे साहब परताप। नित ही नित गावे तिस जाप।।

गुरमुख मुकत सरूप है, त्रैगुन खेद निवार।
'मंगत' माँगे दरस को, गुरमुख चरन बलहार।।252

प्रभु स्मरण का महत्व

सत विचार सुनो बुद्धीमाना। दुस्तर जगत का करो पहचाना।।
सब संसार का कारन जोई। अबगत रूप का लेख लखोई।।
साच सयानफ़ सुनो घनेरी। सतपुरषों की सुन बात आख़ीरी।।
सत परमेश्वर झूठ संसारा। जगत प्रीत अधक दु:ख भारा।।
मानुष जनम की ये ही वडियाई। सत परमेश्वर का सिमरन चित्त पाई।।
हर का सिमरन परम सुखरासी। जनम जनम की सब तपन विनासी।।
छल बलकारी जो मन दुखदाई। प्रभ की भगत से शांत समाई।।
काल का भय जो नित डराई। गोबिन्द सेव से सब भ्रम जाई।।
आसा तृष्ना जो अगन अपारी। सत सिमरन शीतल चित्त धारी।।
धन की तृष्ना जो अधक चित्त लागी। राजे राने नित फिरें अभागी।।
लाख करोड़ी संचित कर डारी। पाये ना धीर ये मन दुखकारी।।
सत सिमरन धन संचित करी। अधक व्याध तब विपता टरी।।
मान बड़ाई भरम चित्त लागी। लज्या ग़ैरत को नित साधी।।
अपनी उस्तत हर भाँत से माँगी। वैरी मित्तर की नित दूषना लागी।।
प्रभ के सिमरन से सब तृखा विनासी। दीन ग़रीबी परहेत परगासी।।
असत भोग में जो नित रमाया। भोग भोग नहिं धीर लखाया।।
जोबन नाश काया जरजर होई। भोग अगन दर पकड़ खलोई।।
सत प्रीती हरि चरन धियाओ। उपरस शांत अमरफल पाओ।।
सकल विकार से होवे छुटकारी। दीनदयाल भज पारमुरारी।।

बिपता रूप संसार में, केवल एक उपाए।
'मंगत' दृढ़ विशवास से, लियो हर जस कीरत गाए।।253

साचा नाम मन माहीं ध्याओ। जलन मिटे सब ताप बुझाओ।।
पाँच दोख विकार अत भारी। तीन ताप का दु:ख नित धारी।।
कोट यतन बिन सिमरन करे। मोह माया में खप खप मरे।।

दिवस रैन कर साची कार। आनन्दमूरत प्रभ लियो चितार।।
करता करता कर नाम ध्याइयो। सरब स्वामी के चरन समाइयो।।
जनम मरन तुल ताप ना कोये। नित नवाँ नित पुराना होये।।
नित जनमे नित मरन भय पाये। आस अँदेसा नहिं भरमन जाये।।
अनक सयानफ़ पल पल धारी। बिन हरि सिमरन ना मिटे ख़्वारी।।
साचा साजन परम सुखरासी। नाम सिमर होये बन्ध खुलासी।।
भय भरम सकलो दु:ख नासे। साची प्रीत हरि चरन उपासे।।
आपत सकली पल पल में जाये। सच परतीत प्रभ नाम ध्याये।।
दीरघ रोग लागे इस जीया। बिपत माहीं सब जनम वतीया।।
साचा सुख ना जानत जानी। कूड़ भरोसे परम दु:ख ठानी।।
देह के सुख को नर सत कर मानी। देह विनास सुख कहाँ पछानी।।
भरम त्याग गुरमुख तत चेत। सरजनहार रख चरन परीत।।
साचा करम नित ही नित घाल। आज्ञा मान प्रभ दीनदयाल।।
सुख दुख करम भोग विचार। आज्ञा माहीं नित जीवन धार।।
जिस साजन ने बनत बनाई। सत कर मानो तिसकी प्रभताई।।
साचा जीवन जग माहीं विचार। साची कथा केवल निरंकार।।
उट्ठत बैठत लयो धियाये। मीन नीर ज्यों प्रीत कमाये।।
आवन जावन देख ये मेला। अन्त की बारी तूँ चले अकेला।।
कोई ना रह्या ना रहना पाये। ये जग देख तूँ रूप सराये।।
राजे राने भूप भिखारी। गुनी ज्ञानी और गुरु आचारी।।
आवें जायें प्रभ आज्ञा माहीं। जुग जुग रचना अनूप लखाईं।।

कोटाँ कोट उतपत भये, पीर वली बल शूर।
'मंगत' इस्थिर ना रहे, बिन अबगत रूप हज़ूर।।254

नाम प्रभ का परम सुखदाई। सिमर सिमर सब कलह वँजाई।।
दुस्तर रचना अधिक गुबारा। आवे जावे जीव अंधियारा।।
बिन तत ज्ञान नहिं भरमन जाए। कोट विचार करें उपाए।।
करम की इच्छया जम का रूपा। सभी बन्धावें रंक और भूपा।।

तृखा ना जाए ना मन सुख भासे। आस आस में लियो काल गरासे।।
गुरमुख सिखया सुन बिमल विचारा। जल थल पेख एक करतारा।।
साचा ठाकर जो जगत परगासी। भगत कमाओ होवो सुख वासी।।
सकल पदारथ मन अगन उपजाए। सिमरे नाम सब ताप वँजाए।।
ऐसा नाम साहब का अपारा। जो जो सिमरे पाए निसतारा।।
वेद कतेब ग्रन्थन की सार। गुनियाँ मुनियाँ का यही विचार।।
सतनाम परमेश्वर नित ध्याओ। खेम कुशल आनन्द घर पाओ।।
सिमरन योग सिमरन ज्ञान। सिमरन करे होवे कल्यान।।
झूट सिमरनी मन की वँजाए। साचा सिमरन साहब का पाए।।
ज्यों ज्यों सिमरे होवे तिस रूपा। अपरम अपार घर लखे सरूपा।।
करूँ पुकार सुनयो गुनि मीता। बिन हरि भगत सरब दुःखरीता।।
बादमुबाद छोड़ मुनि ज्ञानी। एक नाम घर करो पछानी।।
छिन छिन गाओ छिन छिन ध्याओ। प्रेम परीत अमरपद पाओ।।
मोल तोल लागे ना कोए। नाम प्रभ का लियो चित्त परोए।।
परमज्ञान ये ही तत्त सार। सत परमेश्वर का मन करो विचार।।
सच परतीत विचारो मन नाओं। डोलन जाए परसे सत ठाओं।।
तुच्छ जीवन जगत में जानो। सार नाम साहब पहचानो।।
उट्ठत बैठत हरि कीरत गाओ। प्रेम परगास आनन्द घर पाओ।।
एक परमेश्वर सरब आधार। सिमर सिमर तिस बारमबार।।
जिस सिमरा सत प्रीत लगाए। तिसके चरन तौं नित हूँ बल जाए।।

सिमरन पूरा ज्ञान है, सिमरन पूरन विवेक।
'मंगत' एह बिध सिमरिए, विसरे घड़ी नहिं एक।।255

एको प्रभ जीवन तत्त जान। एको प्रभ आनन्द की खान।।
एको प्रभ सब हरे सन्ताप। निरमल चित्त से करो नित जाप।।
प्रभ की कथा परमाद विनासे। निरमल ज्ञान तत्त रूप परगासे।।
प्रभ का चिन्तन हरे सब पीड़ा। निर्भय धाम पाए पार गहीरा।।

प्रभ की पूजा मन सुख उपजावे। तीन ताप की तपन बुझावे।।
प्रभ का ध्यान है मूल ठिकाना। निरमल प्रीत तिस चरन समाना।।
प्रभ की उस्तत सब विगन निवारी। त्रैगुन जाल से मिले निसतारी।।
प्रभ की ओट केवल जग सार। पूरन करमी कोई करे विचार।।
प्रभ का सिमरन परमगत देवे। अभयपद निर्मल सतनाम लखीवे।।
प्रभ की शरधा पूरन तप योग। निरमल करमी कोई पाए संजोग।।
प्रभ की भगत सब बन्धन नासी। अखंड कला तत्त जोत परगासी।।
प्रभ का ज्ञान अपरम धन मीत। मिटे तृषना सब भरम पलीत।।
प्रभ सरनी जो रह्या समाई। तिस जन मिले अधिक वडयाई।।
निर्भय होये तत्त नाम पछानी। एक प्रभू की नित कथे कहानी।।
अन्तर सूझे प्रभ पूरन देवा। मिटे अन्धकार पावे सत सेवा।।
सेव सेव के भयो निहाल। सरब शकत प्रभ मिले दयाल।।
अनन प्रीत धारी चित्त माहीं। त्रैगुन जाल मिटे परछाईं।।
भरमन नासे निहसंग पद पाई। अपरम अपार घर शोभा लखाई।।
सब संसार का निरना पायो। एको शकत सरब वरतायो।।

माया भरम तियाग के, इक साहब सरन पछानी।
'मंगत' अत शोभा मिली, नित निर्भय सुख समानी।।256

अपना मूल करो पहचान। झूट भरम में ना हो ग़लतान।।
अपना साचा ठौर विचार। जाँ से आया देखन संसार।।
अपना साचा स्वामी पेख। जिसने रचया ये जगत विशेख।।
अपना निर्मल आधार पछान। तीन काल जो करे सावधान।।
अपना निरभय खोजो धाम। जाँ को परस पावें बिसराम।।
झूट देही में क्यों भरमाया। सरजनहार नहिं अन्तर ध्याया।।
झूट देही के भोग मन माने। कारन करता नहिं कियो पछाने।।
झूट देही के बहु साथ बनाये। जीवनदाता नहिं एक पलक ध्याये।।
अपनी सयानफ बहु बिध विस्तारी। आज्ञा प्रभ नहिं हिये विचारी।।

अपनी चतराई से सुख नित लोचे। प्रभ की प्रभता नहिं पलक चित्त सोचे।।
झूटा जीवन सत कर मानी। तिसमें करें दीरघ अभिमानी।।
इन्द्री भोग में नित गरसाई। सरब का ठाकर नहिं एक ध्याई।।
जो कुछ कीया अनमत धारी। देवे कलेश भ्रम संकट आपारी।।
सतगुर साजन की सरन पछान। निरमल लेख का पावें निधान।।
मनसा रोग का मिले उपाये। एको नाम संग प्रीत लखाए।।
सब विषयों से पाएँ वैराग। निर्भय धाम का मिले अनुराग।।
शोभा करते की नित गायें। सतगुर बचन मन माहीं ध्यायें।।
मन को ठाकें सतनाम लखायें। भव दुस्तर से तब निस्तर पायें।।
प्रभ के रूप संग मेल मिलाई। तिस साजन शोभा अत पाई।।

निरमल तत्त विचार के, मनुआँ शान्त समाई।
'मंगत' शोभा प्रभ रूप की, पलक पलक लख पाई।।257

मन की क्रीड़ा अत दुखदाई। तीन काल में जीव तपताई।।
अनर्थ कलपना पल पल धारी। अती भयानक मन कारगुज़ारी।।
मोह माया में रहे परबीना। अनंक भोग रसना नित चीना।।
नित ही करम विलक्खन कीजे। अपनी भरमन बहुताप को दीजे।।
मनुआँ नित ही नित डोलाई। प्रभ की भगत से शांत समाई।।
मनुआँ नित ही नित तिरखावे। प्रभ सिमरन से तृपत समावे।।
मनुआँ नित अन्धकार विचारे। मिल सतसंग पावे उजयारे।।
मनुआँ नित ही पाप को खोजे। सत विशवास से सत मारग सोधे।।
स्वारथ में रहे नित लागा। इच्छया करम में अत धरे अनुरागा।।
अत दुस्तर इस मन की लीला। कल्प विकल्प देखे अचरज मेला।।
भाँतक भाँत इच्छया प्रगटावे। एक पलक नहिं शांत समावे।।
अती क्रीड़ा करे दिन राती। शुभ अशुभ करम नित खाटी।।
ज्ञान बिना नहिं पावे ठौर। भरम की बाँधी अत अचरज दौड़।।
नाना भाँत जो रचना दिखलावे। तिसके मोह में नित भरमावे।।

मानुष जनम की सार विचार। दुस्तर मन का करो सुधार।।
सत परमेश्वर हिरदे जाप। आज्ञा तिसकी दृढ़ कर थाप।।
अपनी हिकमत सकल तियाग। प्रभ के नाम में रहो लिव लाग।।
अन्तर बाहर प्रभ दृढ़ कर पूजो। मिथ्या कल्पना नहिं मन में सूझो।।
एक विचार एक आधारा। सिमर गोबिन्द पावें निसतारा।।

मूढ़मती को धार के, क्यों माया मोह भरमाए।
'मंगत' रचना स्वपन की, नहिं जीव तृपत को पाए।।258

देह के भोग में जीव गरसाया। सत विसार परम दु:ख पाया।।
सत विचार करो गुनि मीता। कौन करम है सुख की रीता।।
मोह माया की अन्धमत त्यागो। काल चकर से उठके जागो।।
कूड़ परीती जग धरी घनेरी। दु:ख अपार मिले वक़्त आख़ीरी।।
पल पल देह की नाश विचारो। कूड़ कपट का तजो गुबारो।।
अपनी करनी नर आपे पछाने। पाप करम नहिं अन्तर आने।।
जीवन साचा सतनाम ध्याई। सत करम घट सोझी आई।।
आनन्द सरूप इक साहब जाता। अंतरगत तिस चरन समाता।।
नाम प्रभ में आयो विशवासा। दुस्तर जग का बन्धन नासा।।
साची प्रीती प्रभ चरन धियाई। तिस बिन दूजा आवे जाई।।
इस्थिर रूप ज्ञान गम्भीरा। जो जो सिमरे मिटे जम पीड़ा।।
एक परमेश्वर मन नित ध्याओ। साचा मित्तर जग में सुखदाओ।।
तिसकी भावी जब चित धारें। मोह विकार की जड़ उखाड़ें।।
तिसकी भावी में जीवन राखें। महापरशाद मुकत रस चाखें।।
सब कुछ जानें भावी करतार। दृढ़ निश्चय पावें चरन निरंकार।।
सब कुछ रचना प्रभ शकत पछाने। अरूढ़ तपस्या की गमता जाने।।
निमख निमख तिस भावी पेखें। भरम विनास साहब घर देखें।।
दुष्ट विकार सकल मन नासी। प्रभ की आज्ञा मन माहीं उपासी।।
करम अभिमान जाये दु:ख मूल। इच्छया भरम की काटे सूल।।

प्रभ आधार सत मनसा धारी। साचा ठाकर पल पल विचारी।।
जो हुआ सो सत कर मानी। अपनी सयानफ़ तजे गुमानी।।
जनम का दाता और प्रतिपाला। भज विशम्भर सरब दयाला।।
दु:ख सुख देह आज्ञा में धारो। साचा ठाकर मन प्रीत विचारो।।
अनन भगत प्रभ जब बख़शीशे। त्रैगुन जाल के मिटे अन्देशे।।

निरमल तत्त पहचान के, जीव भया परसन्न।
'मंगत' देखा प्रभ आप में, नास्यो द्वैत विगन।।259

साचा सुख केवल प्रभ रूप। करो विचार गुनी मुनि भूप।।
तीन काल जो अछेद अखण्ड। पूरन शकत निज परमानन्द।।
सदा परापत पूरन किरपाल। नित परकाश जप होवें निहाल।।
नित ही नित कर मन में सेव। साखी पुरष निरंजन देव।।
निर्मल थाऊँ सो ही जीव ठिकाना। जीवत में पद परस निरवाना।।
अपना तन मन करो खुशहाल। अबनाशी पुरष जप दीनदयाल।।
करम चक्कर का मारग नासे। सत सरूप जप पुरख अबनासे।।
माया चक्कर को पल पल विचार। कोई ना वस्तु अन्त सुख सार।।
हरख शोक नित जीया जलावे। माया भरम में नित भरमावे।।
सुख प्रापत जो हरखत होई। विनास समय दु:ख रूप लखोई।।
देह इस्थिर नर कभू ना रहाई। कोट जतन दिन रैन कमाई।।
कौन वस्त होवे सुखदाई। करो विचार गुनी गुनराई।।
भरम के भूले मत भरमाओ। काल बली नित खेलत दाओ।।
जीवत में कुछ करो कमाई। अन्तकाल जो होत सहाई।।
कूड़ झंजट जो संचत कीना। माल मुलक परिवार लखीना।।
देह विनास सभी गए छूट। भरम चक्कर में जम दीनी कूट।।
सुफल विचार करो दिन रात। अबनाशी पुरष की सेव कमात।।
जग में कोई ना इस्थिर रहाई। मूढ़पने में औध गँवाई।।
साचा मारग सुख सार चितार। दृढ़ निश्चय भज सरजनहार।।

माया भरम असगाह है, डूबे गुनी गहीर।
'मंगत' तिससे उद्धरे, जो नाम जपें सुखसीर।।260

पततपावन भगवन्त को, निश्चय से चित्त राख।
विघन हरे मंगल करे, सत कीरत मन भाख।।

साची प्रीती राख के, जो सिमरन करे दयाल।
बाल ना बींका कर सके, चक्रवरत भूपाल।।

दीनानाथ दयाल है, निहमानयाँ देवे मान।
जुग जुग सहायक होत है, भगतवत्सल भगवान।।

नित ही राखो टेक तिस, कर सत मारग की खोज।
पावें वड परताप को, मिले जनम की मौज।।

काम क्रोध को त्याग के, शरधा सेवा धार।
अपना सुख सौंपो सदा, मन में धर उपकार।।

तुच्छ जीवन का मान तज, प्रभ चरनी चित्त जोड़।
नित ही पावें जीत, जो शत्रू होवें करोड़।।

सरब शक्ति दातार है, सो साचा करतार।
सिमरो प्रेम परीत से, पाओ नित जयकार।।

बस्ती को जंगल करे, जंगल गाम बसाए।
भूप को करे दलिद्री, रंक को राज बिठाए।।

जीतन वाले हार गए, हारे चले हैं जीत।
गरबप्रहारी सो परमेश्वर, राखो मन परतीत।।

विच ग़रीबी जो रहे, त्यागे मन का मान।
सरनी जाए करतार की, कभी ना पावे हान।।

जिनका मन मग़रूर है, नित चालें टेढ़ी चाल।
जब छूट गई सब सम्पदा, होए तिनके बुरे अहवाल।।

माटी का ये पिंजरा, अनमत कीजे मान।
खाली हथ्थीं चल गए, अन्त को बेनिशान।।

सत सरूप भगवान है, तीन काल निरदोख।
'मंगत' सिमरो प्रेम से, होए जनम मरन से मोख।।261

अत वडयाई नाम भगवन्त। तृपत भये ये जीव तिरखन्त।।
और न मारग कोई दिखाई। जिससे जीव कलपना जाई।।
और पदारथ ना कोई देखा। जिससे दुरमत मिटे भुलेखा।।
और ओट सब दुख की खानी। मूढ़मती में नित भरमानी।।
बिन प्रभ ध्यान और की ओट। सकल मनोरथ काल की चोट।।
सँभलकर अपना जनम सुधार। पूरन पुरख की सरन पधार।।
सतगुर सीख की ये सतसार। हिरदे सिमर सतनाम आपार।।
मिथ्या नाम रूप आकारा। नित ही कल्पे जीव अन्धकारा।।
कलप कलप कर पाए कलेशा। राग द्वेष नहिं मिटे सन्देशा।।
सकल रोग का औखद एक। सतनाम का कथो विवेक।।
मिथ्याकार वासना नासी। सतनाम जो हीये उपासी।।
अच्छर सरूप ब्रह्म परगास। सहज जुगत घर लीना बास।।
शास्त्र सिमरत का सकल सिद्धान्त। मूल विचार सकल मतान्त।।
गुर पीर की सिखया सार। सत उपदेश नबी अवतार।।
केवल नाम सिमर प्रभ एक। दृढ़ निश्चय से राखो टेक।।
करम विकार पाप सब जाई। सत शरधा प्रभ नाम धियाई।।
प्रभ आधार जीवन जिस पाया। करम करूर का खेद मिटाया।।
त्रैगुन इच्छया करम कलेशा। प्रभ का सिमरन सब हरे सन्देशा।।
सत विचार मन माहीं विचारो। ममता त्याग समता चित धारो।।

करम वासना भ्रम जीव को, तीन काल भरमाए।
'मंगत' नाम प्रभ सिमरिये, तब मूल रोग ये जाए।।262

राम नाम का करो नबेड़ा। दुरलभ पायो भव जल फेरा।।
रमता पुरष शबद अखंड। धारे नाना पिण्ड ब्रह्मण्ड।।
अपनी माया परगट करी। बिस्माद रचना सहज रच धरी।।
सबके अन्तर रह्या समाई। रमता राम कोई गुनी ध्याई।।
आपे बाज़ीगर हो खेले। आपे न्यारा आपे मेले।।
आपे दानाँ सरब का स्वामी। घट घट जाने अंतरयामी।।
आपे भुगता आपे त्यागी। आपे ज्ञान सरूप बैरागी।।
आपे खेले आप नियारा। रमता राम का अजब पसारा।।
सरब का साखी निरमल देवा। भाओ प्रीत से कर मन सेवा।।
रोम रोम रमत स्वामी। राम नाम भज अन्तरयामी।।
जनम मरन नहिं तिसको रोग। अजर अमर सरब संजोग।।
ऐसा राम विचारे जोई। आवागवन का संशा खोई।।
रोम रोम में शबद गुंजारे। राम नाम तत्त कियो विचारे।।
साची भगत परापत होई। सत्त सरूप में सुरत समोई।।
मानुष जीवन का करो सुधार। अमरत नाम प्रभ लियो चितार।।
अंतर ध्याओ प्रीत लगाए। अच्छर पुरष शबद सुखदाये।।
शबद की रसना अंतर सूझी। राम भगत यथारथ बूझी।।
बादमुबाद माया बिख त्यागो। सत ठाकर के चरनी लागो।।
आपा त्याग सतनाम चितार। घर विच पावें दरस मुरार।।

दुरमत भरम त्याग के, राम नाम तत्त चेत।
'मंगत' पलक ना विसरे, अखंड शबद अलेप।।263

पारब्रह्म को नित मन माहीं चितारो। मानुष देह का सुन साच वापारो।।
परम सम्पत तीन काल सुखरासी। जपो निरंतर अभयपद अबनासी।।
जिस वस्तू को महेश्वर ध्याये। और गुनि ज्ञानी नित गुन गाए।।
अपरम पुरख सो घट रह्या समाई। तिसका सिमरन सब गवन मिटाई।।
चार वेद जिसकी कथा विचारे। पीर पैग़म्बर नबी रसूल चितारे।।

सिद्ध तपीशर और योगी नाथ। तिस पुरख की नित करें अरदास।।
साचा धन जो मुकत फल देवे। रे मन मूढ़ा क्यों नाहीं सेवे।।
छिनभंगुर जीवन जग पाया। धन जोबन क्यों देख भरमाया।।
एक पलक में सब भसमत होये। पाए पसार अन्धमत रोए।।
कूड़ी घालन अन्त को छोड़े। जीवत में जो जियाँ रक्त निचोड़े।।
अन्तकाल कोई देवे ना धीरा। भयो निमाना छाड चले शरीरा।।
सत तत्त खोज प्रभ अबनाशी। संत वेद जो कथा परगासी।।
बिन प्रभ सिमरे नहिं पावे बाट। भरमत फिरे चौरासी घाट।।
बिन प्रभ सिमरे मन सोग विचारी। नित नित रोए अन्ध अन्धियारी।।
बिन प्रभ सिमरे मन अन्ध विशवासी। संशे धार काल की फाँसी।।
बिन प्रभ सिमरे जन पशू समाना। भोग रोग में औध विहाना।।
मेघ बिना ज्यों दुर्भिख व्यापे। भगत बिना इयों जीव संतापे।।
धर अभिमान नित जाये पियासा। नीवत थाहीं नीर निवासा।।
कपट छल चित्त धरा घनेर। जनमे मरे चौरासी फेर।।
आसा तृष्ना में बहु दु:ख पाए। चले निरासा अन्त को पछताए।।
राजे राने मीर गुलाम। चलो चली का देवे काल पैगाम।।
महल अटारी राज सिंघासन। निकले प्रान कियो भूम निवासन।।
अन्धमत त्याग सतनाम विचार। मानुष जनम की सुन सुकृत कार।।
तृपत समावें प्रभ नाम गुन गाए। मिल सतसंग लियो सार कमाए।।

बिनसनहारे जगत में, उठ के लाभ विचार।
'मंगत' सेवा साध की, और दुरलभ नाम पियार।।264

साचे नाम की अत वडयाई। सतगुर मेल बिन भेद नहिं पाई।।
सकल जगत के जन्त पुकारें। साचे नाम का लेख विचारें।।
पर मन की बिपता नहिं होये नास। आवे जावे भरम धर फाँस।।
जब लग मन में रहे हंकार। नाम दीपक नहिं होय उजियार।।
जब लग इच्छया भोग विचारी। नाम की रसना नहिं मिले सुखकारी।।
जब लग मन विरती आधीना। साचा नाम नहिं भेद लखीना।।

जब लग मन मनोरथ धारी। नाम ध्यान नहिं मिले आपारी।।
जब लग बुद्धी नहीं विशवास। तब लग होय ना नाम परगास।।
जब लग निश्चय नहीं गुर चरना। तब लग नहीं पाये नाम का निरना।।
जब लग शुद्ध आहार नहिं खाए। नाम ध्यान नहिं मनुआँ पाये।।
जब लग शुद्ध नहिं करे ब्यौहारा। साचा नाम नहिं होय उजियारा।।
जब लग संगत खोटी होई। निर्मल नाम नहिं चित्त परोई।।
जब लग जग को सत कर जाता। साचा नाम नहिं होये परगासा।।
जब लग अपना नहिं मरन विचारा। निर्मल नाम नहिं मिले सुखकारा।।
पाप कूप में जब भरमाया। परनिन्दया परहान समाया।।
परनारी परधन को ध्याई। दुष्टपने में नहिं नाम गत पाई।।
कोट मद्धे कोऊ गुरमुख आया। साचा नाम जिस अन्तर ध्याया।।
सब मिथ्या सत एक पछाता। साचा नाम चित्त माहीं ध्याता।।
मन की भरमन तपन निवारी। सत शरधा इक नाम में धारी।।

मन की मैल उतारिये, पाइये सत विचार।
'मंगत' दीपक नाम का, तब होए उजियार।।265

सत्तनाम सिमरन करो, ये साधन की सार।
सिमरन पूरा योग है, सिमरन सत विचार।।

कुटल मन निश्चय भया, जब सत सिमरन को पाए।
नाम रूप जाए कल्पना, तत्त परगास समाए।।

सिमरन मन सरूप है, सिमरन में संसार।
सत सिमरन जब जानया, तब पाई सुख सार।।

जैसी मन की सिमरती, ऐसी कामना होए।
सतनाम सिमरन करे, मैल भरम की धोए।।

जतन यथारथ जगत में, सिमरन नाम प्रभ एक।
पल पल तिसे ध्याइए, विसरे पलक ना एक।।

झूट कलपना सब मिटे, जब सत सिमरन को पाए।
नित ही निश्चल ध्यान में, जीव अमरत को खाए।।

साचा सिमरन कीजियो, सच संग करो निवास।
जाए भरम की दूषना, काल करम की प्यास।।

भरमत भरमे जीव ये, सत सार बिसराए।
घनी सयानफ़ धार के, बाँधा जमपुर जाए।।

वेद ग्रन्थ की सार ये, और सतगुर का विचार।
निश्चय आवे नाम प्रभ, पल पल करें चितार।।

दुरलभ जीवन पाया, उठ के लाभ विचार।
'मंगत' नाम प्रभ सिमरिए, जो तीन काल सुखसार।।266

विषे विकार की अगन में, दुखिया रहे दिन रात।
सतनाम विसार के, भयो मूढ़ कमज़ात।।

सुफल जीवन संसार में, तब ही ये नर होए।
सत सिखया हिरदे बसे, सत करनी चित्त जोए।।

सत साधन प्रभ नाम है, पल पल लियो पराए।
दीरघ पावें शान्ती, पूर मनोरथ होए।।

जाप ताप और साधना, सबका ये ही निधान।
सत करतार धियायो, निस्चल करके ध्यान।।

मीठा सब संग बोलिए, परदु:ख हरिए नीत।
सत सिमरन प्रभ का करे, ले जम दरवाज़ा जीत।।

सतगुन को हिरदे धरो, औगुन दियो तियाग।
मिल सतसंग साधन करो, सत विवेक अनुराग।।

सादगी मन साधन करो, और लीजो सत विचार।
सत संगत में नित रमो, मन धारो सत उपकार।।

सतगुर बचन मन में रखो, और सिमरो सत करतार।
सब जीवों से हेत राखो, लखो धरम की सार।।

पढ़ पढ़ अन्धा ना हो, उठ कुछ करनी धार।
बिन करनी मानुष ये, निसदिन ढोर गँवार।।

सार जीवन की सुन गुनी, मन शान्त पद को पाए।
'मंगत' सत तत्त सिमरना, परम जतन सुखदाए।।267

राम नाम सिमरन करो, सतसंग राखो प्यार।
साचा मारग धरम का, सन्ताँ करी पुकार।।

जीवन को निर्मल करो, सत सेवा चित धार।
सरब जीवों की सेव से, पावें दरस मुरार।।

उट्ठत बैठत सिमर लो, साचा एक करतार।
जाये भरम की दूषना, जीव पाये छुटकार।।

इस सागर संसार में, सब ही दुखिया जन्त।
तिस पाई सुख शान्ती, जिन सिमरा नाम भगवंत।।

औधी निसदिन जात है, पल पल करो विचार।
बिन सिमरे भगवंत के, अंत पायें दु:ख आपार।।

साचा मित्तर साचा स्वामी, साचा सरजनहार।
निमख निमख तिस याद कर, मिट जाई करम बकार।।

एक उपाय जान लो, जो हरे करम का रोग।
सत्तनाम सिमरन करो, जो पावें गुर संजोग।।

सबसे प्रीती राखियो, मीठा बोलें बोल।
हिरदे में इक नाम को, भाओ भगत से तोल।।

झूट विकार इस देह के, मन से करो तियाग।
सत मारग प्रभ नाम में, नित उठ के तूं जाग।।

ये करनी सुख देत है, आवागवन करे नास।
'मंगत' कहे पुकार के, हर चरनी करो निवास।।268

साची भगत प्रभ की कीजे, सकल कलह दु:ख नास।
मन मन परसे शान्ती, परम धाम करे वास।।

साचा नाम प्रभ सिमरिये, मन तन होवे साच।
परम परतीत परगट होवे, बिनस जाये मन नाच।।

ज्ञान ध्यान विवेक में, परम शिरोमनि नाम।
जो जन सिमरे प्रीत से, पावे घर बिसराम।।

सकल पदारथ जगत के, छिन आवें छिन जायें।
इस्थिर प्रभ का नाम है, गुनी वेद बतलायें।।

हीरा मनी ये नाम है, परम आनन्द सरूप।
ज्ञानी जुग जुग गाँवदे, अखण्ड अमीरस कूप।।

सम्पत चौधा लोक की, कीनी जो नित घाल।
नाम बिना ये मनुआँ, तीन काल कंगाल।।

एक कनी जो नाम की, ले हिरदे विशवास।
पाप कूप भसमत करे, तन मन हो परगास।।

नाम जिनाँ चितारया, सो भूखन जग के जान।
ताँकी कीरत सुन के, लाखाँ होय कल्यान।।

गुरमुख जाने नाम, पीवे दिन और रात।
मनमुख को क्या रसना, जो विषय बिख को खात।।

साचा नाम पहचान के, मन में लयो छुपाये।
'मंगत' ये धन सार है, बिना गाहक ना दियो विकाये।।269

तन मन धन अर्पन करो, साचे गुर दरबार।
सच नाम तब पाइये, जिसका मोल आपार।।

अगनी लागी जगत को, आसा मनसा मीत।
सतनाम जल सींचिया, तब उपजे ठाँड पुनीत।।

कूड़ माया के वनज में, भरमे कुल संसार।
सच नाम कमावना, किसे गुनी दी कार।।

झूट भरवासा राख के, अन्त को चला निरास।
नाम भरोसा जिन कियो, तिनकी मिटी पियास।।

सुत दारा और माल धन, घर घर देखा मीत।
कथा साचे नाम की, कोई वाचे परम पुनीत।।

बन्ध छुड़ावनहार है, साचा नाम करतार।
जो जन सिमरे प्रेम से, तिस चरनी बलहार।।

अबगत रूप ये नाम है, गुपत रहे तीन काल।
परगट कर तब जानिया, जब सतगुर मिले दयाल।।

नाम की रत्ती एक जो, पाप के घने अम्बार।
भाओ प्रीत सिमरन किया, सब विख हूआ छार।।

आवागवन के चक्कर में, नित मनुआँ भरमाए।
सत जुगती जपे नाम जो, काल करम बिनसाए।।

वेद कतेब बहु पठना करे, और नैयम धरम बहु भान्त।
'मंगत' बिन हरि सिमरने, नहिं छूटे जीव भरान्त।।270

कोट रवी परकाश करें, और चन्दा कोट हज़ार।
बिना नाम परतीत के, नहिं जाऐ मन अन्धकार।।

सम्पत चौधाँलोक की, जो पद को चूमे मीत।
एको साहब के नाम बिन, तीन काल दु:खरीत।।

लख चौरासी जीव को, चुन चुन खाये काल।
तिनके निकट न आ सके, जो सिमरे नाम दयाल।।

राजा राना होए के, बहु रंग भोगे भोग।
बिना नाम रस चाखने, भयो सभी दु:ख रोग।।

बार बार पुकारया, सुनो गुनी मुनि भूप।
नाम रतन जग सार है, परम आनन्द सरूप।।

नाम अमोलक साहब दा, करो हिरदे माईं पछान।
नित पावे सत शान्ती, सुन सतगुर का विख्यान।।

मन का वेग सब नास होए, मनसा भये लवलीन।
साचा नाम पहचान के, काल जाल भयो छीन।।

नाम सार को पींवदे, जुग जुग हरजन मीत।
भरमन सकली छाड के, घालें दृढ़ परतीत।।

नाम रस जब रसयो, परसा उपरस धाम।
कँवल निरालम ज्यों नीर में, ऐसे चित्त निषकाम।।

भव जल दुस्तर आपार है, सूझ बूझ नहिं पात।
'मंगत' सो निस्तर भए, जो लखें नाम की वाट।।271

नाम रस जब चाखयो, भागे पंज ग़नीम।
राज पाया देह-दीप का, साधी कठिन मुहीम।।

हर का नाम विचारना, किसे सूरे दी कार।
मरने से जो ना डरे, तब पावे तत्त सार।।

संकटमोचन नाम है, मंगलकारी रूप।
गुरमुख जपे प्रीत से, परसे सत सरूप।।

विगन दोख व्यापे नहीं, ना भूत प्रेत की त्रास।
जो सिमरे सतनाम को, लेवे अभय पद बास।।

और जगत सब कलपना, मिथ्या जीव को रोग।
राम नाम तत्त सार है, नित पाओ संजोग।।

मुख सुहावा तिसका, अमरत काढे बोल।
जो परसे सतनाम को, ताँ के चरन बलोल।।

जीवन रूप एक नाम है, बाकी मिरतक सार।
उठ सिमरो भाओ प्रीत से, पाओ नित जयकार।।

खिमा ग़रीबी बन्दगी, साधन सत उपकार।
राम नाम जब जानया, तब पाए परम गुन सार।।

मिरतक से जीवन भया, निरभय परसा धाम।
गवन विनासी जीव की, निज रूप लयो बिसराम।।

जीवन का है लाभ ये, मानुष देह की सार।
'मंगत' पल पल सिमर लो, अबगत नाम मुरार।।272

पाप पुन्न व्यापे नहीं, जो नाम की मनी परोए।
आठ पहर एक रूप में, निरमल सुरत समोए।।

पीर पैग़म्बर औलिया, सबका ये ही विचार।
सिमरो साचे नाम को, अन्त पाऐं छुटकार।।

कपट विकार त्याग के, सतगुर दर पहचान।
पावें परम आनन्द तत्त, साचा नाम निधान।।

जो सिमरे प्रभ नाम को, मन बच करम लगाए।
पूर मनोरथ तिन का, मौज जनम की पाए।।

उट्ठत बैठत ध्याये लो, अखण्ड रूप अबनास।
पावें सत परतीत को, मिट जाई जनम पियास।।

अनेक जनम भरमत फिरे, काल चक्कर को धार।
दुरलभ देह मानुष में, जप लो सरजनहार।।

छिन छिन औसर जात है, ना कर पलक भरवास।
काल सिर पर गाजता, लेख लखे नित स्वास।।

जो दम आया ना पाएँगा, फिर औध के बीच।
दम दम नाम चितार लो, प्रेम भगत जल सींच।।

आसा जग की त्याग कर, रख आसा करतार।
दीरघ पावें शान्ती, अखण्ड आनन्द भण्डार।।

रोगी सोगी नीच बहु, परस गए सतधाम।
'मंगत' जपो परीत से, एक चित्त निषकाम।।273

साधन सब पूरन भई, मन आई परतीत।
सिमरा साचे नाम को, राख के निरमल चीत।।

साचे रंग में रँगया, फिर ना भए कुरंग।
छिन छिन घाले नाम जो, सुने सार परसंग।।

दुर्जन भाओ विनासया, मनुआँ भयो सत मीत।
एक नाम रसना रसी, पायो दिसा पुनीत।।

नाम का कोड़ा हथ लियो, मन पर भयो असवार।
मारा बान प्रेम का, भयो शत्रू सब मुरदार।।

जो मन अति बिकराल था, बाँधन कठन अपार।
नाम सेली से बाँधया, ले जुगती गुर दातार।।

भय भरम संसा गया, खिमा का पीया नीर।
दरशन पाया गोपाल का, पाई जीत जम बीर।।

आध व्याध दूषन गये, तीन ताप गये छूट।
निस दिन रसना नाम की, घट अन्तर लीनी लूट।।

चौसर खेल ज्ञान की, नाम की चोट लगाये।
काल जाल सब हार गए, जीत गुनी घर पाए।।

आलख लेखा लिखया, सत्तनाम निरवान।
जो खाये इस सार को, जुग जुग होए परवान।।

कहता हूँ कह जात हूँ, उठ साजन होश सँभाल।
'मंगत' नाम प्रभ सिमरिये, बन्धी छूट दु:ख जाल।।274

जब लग सतनाम नहिं जाता। तब लग तीन गुनों में भरमाता।।
वारपार नहिं सूझे सार। बिन अबगत रूप सतनाम विचार।।
बिरह वैराग जब अधिक चित्त आए। मिथ्या जग देख चित्त उदासी पाए।।
सतगुर पूरे दीनी पूरी जुगत। सतनाम परकासे पद जीवन मुकत।।
ऐसा नाम अपरम अपारा। जिसका सिमरन करे निसतारा।।
जब लग मन में राखे अहंकार। तब लग परखे नहिं नाम की सार।।
जब लग अन्तर दूजा भाओ। तब लग नहीं नाम तत्त पाओ।।
जब लग अन्तर इच्छया दोख। सतनाम नहीं परसे निरदोख।।
जब मन राखे बाहर की धिरना। सतनाम नहिं बूझे निरना।।
जब मन अन्तर विरत अनेक। अबनाशी नाम का नहिं परसे लेख।।
जब मन धारी इच्छया भोग। साचा नाम नहिं मिले तत्त योग।।
मुख से कथनी जितनी कथनावे। सार तत्त का भेद नहिं पावे।।
तीरथ बरत जन्तर और किरया। बिना ज्ञान नित भरम में फिरया।।
परवत कन्दरा उजाड़ बीबानी। गुरमुख भेद बिन नित उल्ट पहचानी।।
धोती बस्तर तिलक को धारे। अरचन पूजा बहु बिध विचारे।।
नित गायत्री का करे निध्यास। तत्त ज्ञान बिन नहिं कटे जम फाँस।।
बाहरमुख हो नित दुख पावे। करम का बाँधा नित आवे जावे।।
नाना रंग रूप दरसावे। देख देख नित ललचावे।।
आपद माहीं बहु जनम विताए। माया चक्कर में रहे भरमाए।।
इन्द्री भोग इच्छया मन धारी। अनक भाँत संचत संचारी।।
खाना पीना विषे विकार। सोवन जागन सब जग दी कार।।
बाल जवानी जरा देह आवे। काम क्रोध नित अगन जलावे।।
आस में जनमे आस में जाए। आस आस में नित तिरखाए।।

अधक बिपत इस जीव को, बिन तत्त ज्ञान विचार।
'मंगत' भरमे छिन छिने, राख दुरमत विकार।।275

दुर्लभ कारज जगत माहीं पहचान। जो मन परसे तत्त ज्ञान।।
तृखा मिटे शान्त घर वासे। होए निबेड़ा सकल भरवासे।।
जनम जनम का ताप सब जाई। जो ये मन अन्तरमुख आई।।
अमरत कुआँ अन्तर भरपूर। गुरमुख लेवे सार सरूर।।
एक नाम संग धरे परीती। मन को थामन की सुनियो नीती।।
छिनभंगर संसार को देखे। जनम-मरन का खेल परीखे।।
इक दिन अपनी देखे नाश। ऐसा चित्त में राखे भरवास।।
सत सरूप चेतन अगामी। अपने अन्तर सोधे सो स्वामी।।
बाहर की कल्पन सकल मटावे। मन अपने का सोधन पावे।।
छिन छिन एके नाम परोए। विरत त्याग मन इकागर होए।।
खिमा ग़रीबी मन बाना धारी। बिरह विवेक का रहे नित आहारी।।
अपने दोष को आप पछाने। नित ही जतन करे पाप की हाने।।
आठ पहर ये ही ठकराई। मन अपने से करे लड़ाई।।
सतगुर जुगती मारग में धाए। निर्मल ज्ञान ले मन वेग हराए।।
सकले करम प्रभ आज्ञा में छोड़े। करता भाओ सब मन का तोड़े।।
मन पवन की घाले घाल। सत परतीत हर नाम दयाल।।
जीवन में करे मरन क़बूल। तब विनसे इस मन का भूल।।
डोलन त्याग भयो शबद आहारी। साचा जीवन तब ले विचारी।।
काम क्रोध लोभ और मान। सकल को छेदे ले बिरह के बान।।
अजर पुरष की प्रीत कमावे। तब ये मनुआँ ठौर को आवे।।
अपनी ग़फलत का करे उपाए। साची औखद नाम कमाए।।
लोकलज्या पर लावे लात। अपने मरम की खोजे वाट।।
मुकत मैदान में खेले नित सूरा। पलक न विसरे सच नाम हज़ूरा।।

मन राखे इक नाम में, तन देवे गुर की भेंट।
'मंगत' पाए सतधाम को, सो सूरा रन जीत।।276

आनन्द सरूप का लख परताप। जरा मरन नहिं काल वियाप।।
दृष्यमान जो नर दिखलाई। द्वन्द विकार सो सब रचनाई।।
कर कर विचार थाके मुनि दाने। आनन्द सरूप कोई विरला पछाने।।
अत सूक्षम तत्त चेतन परगास। जल थल मईयल करे निवास।।
गुपत रूप देह में बिसरामी। अबगत आपार पुरख अनामी।।
अनँक जतन कर संताँ ध्याया। अपरम आपार पुरख निरमाया।।
आनन्द सरूप कर सिफ्त बखानी। द्वैत विकार जाँ नहिं भरम निशानी।।
सरब जगत का जीवन सोई। नित आनन्द घट घट समोई।।
जिस जाना तिसने सालाहया। तपन तियाग ठाँड समाया।।
कोट मद्धे कोई सार को पाई। अकथ कथा का लेख लखाई।।
करम वासना जब मन की नासी। आनन्दसरूप तब घट परगासी।।
इन्द्री विकार से उपरस होई। आनन्दसरूप तब भेद लखोई।।
जरा मरन जब भय चित्त मानी। आनन्दसरूप तब कथा पछानी।।
देह को मिथ्या कर जब ध्याई। आनन्दसरूप तब सोझी आई।।
करम अभिमान जब चित्त का नास्यो। सत तत्त आतम तब परगास्यो।।
द्वन्द विकार जब करम फल त्यागी। आनन्दसरूप तब पाये वडभागी।।
मुख की कथनी जब सभी तियागे। अकथ कथा में नित रहे जागे।।
इन्द्री विकार से मन करे न्यारा। आनन्द सरूप तब ध्यान विचारा।।
अहार ब्यौहार में नीयम धारी। सत संजम नित हिरदे विचारी।।
खिमा दया ग़रीबी पाये। सतगुर जुगत तब शबद लखाये।।
मरजीवा जो जग में होई। साची बिरह मन माहीं परोई।।
मिल सतगुर सत जुगत पछानी। आनन्द सरूप मन मगन समानी।।
झूट जगत से मन उकताये। सत का सिमरन चित्त में पाये।।
ममता विकार गरब देह नासे। आनन्द सरूप तब घट परगासे।।

अजर अमर परमातमा, घट घट रह्या वियाप।
'मंगत' आपा त्याग के, सिमर साहब परताप।।277

प्रभु शरणागति

तू ही तू सरब सुखरासी। नित आनन्द पुरख अबनासी।।
तेरी सरन सब ताप निवारे। दुख परहरे सुख थाओं विचारे।।
तेरी सरन में शान्त परगासे। अगम सरूप मिले निरवासे।।
तेरी सरन बुद्ध उज्जल कीजे। भाओ भगत रस नाम लखीजे।।
तेरी सरन सत सम्पत देवे। अजर अमर सतरूप को सेवे।।
तेरी सरन अत देवे परताप। इच्छया भरम का नासे संताप।।
तेरी सरन तीन लोक परवानी। संतोख परापत अमरत खानी।।
तेरी सरन जनम मरन निवारे। सत सरूप में जाये पधारे।।
तेरी सरन से अतुल बल पाये। चक्रवरती उठ सीस निवाये।।
तेरी सरन देवे बेपरवाही। निहकरम सरूप का लेख लखाई।।
तेरी सरन जग जीवन लाभ। आनन्द सरूप में जाये समाव।।
तेरी सरन से मन तृपताये। भोग सोग सब रोग वँजाए।।
तेरी सरन में पाये निहचल धाम। निज सरूप में मिले बिसराम।।
तेरी सरन से अंतरगत पाये। घट घट अंतर तेरा रूप दिखाए।।
तेरी सरन से मोह अगन विनासी। केवल प्रेम सतरूप अबनासी।।
तेरी सरन सब भय को हरे। सत परतीत जो सरनी पड़े।।
तेरी सरन अत ठाँड वरताए। दु:ख सुख परे परमपद पाए।।
तेरी सरन तुद रूप मिलाए। जाँ से आया ताँ जाये समाए।।
तेरी सरन वडभागी पाये। जाँ को सतगुर सन्त मिलाये।।

परम धरम संसार में, जो प्रभ सरनागति पाये।
'मंगत' मिटे सब दूषना, निरभय धाम समाये।।278

जीवत में कीजो सत काजा। नाम सिमर प्रभ ग़रीब निवाजा।।
प्रभ दाता नित रहे दयाल। बन्धी तोड़ चित्त करे निहाल।।
रे मन मूढ़े सरन पछान। करम रोग से पायें कल्यान।।

अत सन्ताप जगत की प्रीत। पावें वंजोग ये साची रीत।।
ताँ सों निरमल सिखया धार। जीवत में सत कर ब्यौहार।।
साचा नाम साहब का ध्याओ। पततपावन की सरन समाओ।।
पाप दोख सब बिपत निवारी। प्रभ दाता नित ही दातारी।।
साचा स्वामी निश्चय चित्त राख। भाओ भगत कीरत को भाख।।
सकल मनोरथ पूरन करी। सत परतीत जो सरनी पड़ी।।
आनन्द सरूप मंगल का दाता। नाम सिमर तूँ पुरख बिधाता।।
सरब शकत का मानी सो ही। तिस तुल जग में देखा ना कोई।।
बने बनावे सकली बन्त। कारीगर साचा आप भगवन्त।।
जिसने साजी सारी किरया। जल थल अन्दर जो पसरया।।
तिस चरनी तूँ नेहूँ राख। सुन सतगुर की ये निरमल साख।।
तेरी सकली बिपत निवारी। दीनदयाल परम सुखकारी।।
साची प्रीती चरन चितार। अन्तर तेरी सुने पुकार।।
जो तूँ साची प्रीत कमाई। सत ठाकर बहु आनन्द वरताई।।
कामना रोग जीव का नासी। भाओ भगत अन्तर परगासी।।
ताप तपन सब जीव का जाई। निरमल चित्त से जो भये सरनाई।।

प्रभ की सरनागत हो, तेरी बिपत करे निवार।
'मंगत' दीनदयाल प्रभ, नित ही किरपाधार।।279

चेतावनी वाणी

जीवन में ही खोज लो, अपना निरमल धाम।
बादमुबाद त्याग कर, सतसंग में लो बिसराम।।

दुस्तर माया जाल है, बड़े गुनी गए हार।
जिन जनम सोये कर खोयो, तिन का क्या शुमार।।

सत पुरषारथ राखयो, जब लग प्रान की धार।
जीवन में बहु सुख मिले, आगे सुख आपार।।

नित रमयो सतसंग में, और सतनाम पियार।
अनक विगन सहजें गए, सुन सत ज्ञान विचार।।

जो बीजे सो काटना, एह निश्चय कर मीत।
बिख बीजे बिख पाइये, सुन साहब की रीत।।

ऐसा बीज ना बीजियो, जो काटन में दुख देत।
करम रेख अटल है, सुन साचा विवेक।।

गुनी मुनी नहिं छूटते, जो बीजा सो खाए।
ताँ सों नर वचार के, साचा करो उपाए।।

सुत दारा धन लच्छमी, और बड़ा इक़बाल।
अंतकाल ना सँग कोए, नैनों देख अहवाल।।

पाप पुन्न जो कुछ किए, सो जीव के साथ।
मिले सज़ा अनकूल तिन, राई वाध ना घाट।।

सोना मनों विसार के, उठ जीवन को सँभाल।
जो करना सो कर लियो, गरज रिह्या सिर काल।।

पीर पैग़म्बर औलिया, राजा राना मीर।
काल सभी को खा गया, देखत ना सरीर।।

ये समय की मौज है, उठके नाम चितार।
स्वाँस स्वाँस चल जात है, जाँ का मोल अपार।।

हाड़ माँस का पिंजरा, अन्तकाल होए राख।
'मंगत' समाँ विचार के, नित मारग साचा भाख।।280

आपामती त्याग के, नित मारग ज्ञान विचार।
नित ही प्रभ के नाम की, निरमल कीरत धार।।

जग रचना ये अचरज खेला, इस्थिर रहे ना कोई।
राजे राने गुनी सयाने, नित काल के चक्कर फिरोई।।

देह सुन्दर छिन राख भई, नहिं चली कोई तदबीर।
आस अंदेसा ना गया, नर रोवत जाए आख़ीर।।

होवें निमाने अन्त को, जिन सिर छतर झुलंत।
सब ही बाज़ी हार गये, बिन सिमरे भगवन्त।।

छाया सम प्रीती पाई, इस मिथ्या जग में आये।
संग सखा ना कोई भयो, जब झूला काल झुलाये।।

नौबत है दिन चार की, गुनी जन लियो बजाये।
इक दिन चलना होयगा, साजन नाँगे पाये।।

छाड कपट के भेख को, नारायन धर चीत।
निरमल संगत में रमो, गायो प्रभ के गीत।।

साचा सरजनहार सो, नित आनन्द सरूप।
अंतर चित्त में ध्याइये, छाड कलपना कूप।।

दीन दुखी की सेव में, दृढ़ कर राखो चीत।
आज्ञा माने साहब की, भव जल पावें जीत।।

हिरदे नाम बखानिये, सुनिये सतगुर बोल।
'मंगत' शबद समाइये, मिटे चौरासी ख़ोल।।281

दुस्तर रचना जगत की, कोई पारावार ना पाई।
अनंक जतन कर गुनीजन हारे, नहिं निरना सार लखाई।।

ओढ़क तत्त विचारया, शान्त रूप भगवन्त।
घट घट बासी आनन्दमूरत, नित नित नाम जपन्त।।

नाम बिना ना थाहे कोई, ना कोई पावें ठौर।
मन की भरमन जगत ये, नित राखे अत दौड़।।

जेती मन में कलपना, एता जग बिस्तार।
मूढ़ अर्थ ना पा सके, नित बाज़ी जूए हार।।

मन मनोरथ नित नये, तृषना उठें तुरंग।
भरमे अनमत जीवड़ा, धर दुरमत माया संग।।

क्रोध अगन परचंड होवे, जीव जले दिन रात।
माया मोह के भरम में, नित ही फिरे अनाथ।।

लाख करोड़ी संचत करी, मन नहिं आया धीर।
चार कुण्ट उठ धाँवदा, रहे आठ पहर दिलगीर।।

माया भरम अंधकार में, औध गई सब बीत।
रंचक मिली ना शान्ती, सब झूट भई परतीत।।

ना साजन की सीख सुनी, ना निज मन किया विचार।
जग सुपने में आए के, नहिं परसी सुख सार।।

मिथ्या मान गुमान में, उठ चला निरासा अंध।
'मंगत' प्रभ के नाम बिन, नहिं चूके जम की फन्द।।282

निर्भय कभूँ ना नर होये, बिन आतम राम पहचान।
देह ममता के मद्ध में, फिरे चौरासी खान।।

करम का बन्धन अत पाये, नित भोगे बहु भोग।
बिना तत्त विचार के, नित ग्रसयो दीरघ रोग।।

बिन संगत सतपुरष की, नहीं तत्त सार लखाई।
माया की भरमन माहीं, सब जीवन दियो बिताई।।

अन्त को रोवत क्या बने, नहिं जीवत करी सम्भाल।
ना प्रभ दाता सेवया, ना सत घाली घाल।।

आस संदेसा ले चला, अन्त को जीव अन्जान।
दु:ख सुख करनी का पाए, बहुरंग जून पछान।।

ये रचना संसार की, उठके गुनी विचार।
परमारथ की प्रीत में, तन मन दीजो वार।।

सत मारग पहचान के, नित ही खेलो दाओ।
परसें आनन्द ठौर को, अखण्ड शबद सुखराओ।।

मानुष देह की कीरती, जो चित्त नाम समाये।
सत स्वामी की सेव में, पल पल घड़ी विहाये।।

अपने घट में सोधिये, सरब जगत का ईश।
नित ही निर्मल ध्यान में, पाइये नाम संदेश।।

पूरन सेवा पाये के, हरजन भये निहाल।
'मंगत' मिली सत शान्ती, प्रभ पाया दीनदयाल।।283

सत्तनाम हिरदे जपो, सत सेवा चित्त धार।
पावें दीरघ शान्ती, जो मन से करे विचार।।

सरब रसों में रस भरे, सबमें करे पसार।
अजर पुरख परमातमा, पल पल हिये चितार।।

बिपता तेरी सब मिटे, आनन्द जीवन पाये।
दीनदयाल प्रभ सिमर लो, जो पल पल होत सहाये।।

सब कुछ साहब दात है, धन माल इक़बाल।
सिमरो भाओ प्रीत से, सरब नाथ गोपाल।।

भवजल दुस्तर अपार है, बिन सिमरन दु:ख पाये।
अधक सयानफ़ मन धरी, अंत निरासा जाये।।

सखा संग ना को होये, अंत चलन की बार।
एको जप नारायन को, जो देवे सुखसार।।

अन्तर तेरे वसदा, नित अमरत की खान।
तीन काल सुख देत है, नहिं मूढ़ा करे पछान।।

सत साधू के मेल से, अंतर की गत पायें।
गुपत रूप परमातमा, तीन काल दरसायें।।

पाप करम सब दूर हो, मन आवे उपकार।
केवल प्रीती सतनाम की, मन में करो विचार।।

कलह कलेश सब मिटे, अमरधाम को जाये।
नित प्रीती सतसंग में, गोबिन्द के गुन गाये।।

करता हरता जान के, हर चरनी चित्त धार।
पावें पद निरवान को, 'मंगत' करी पुकार।।284

सोवत समाँ ना खो गुनी, उठके लेख विचार।
विच मुसाफ़त आय के, सत मारग लख सार।।

मिथ्या भरम ये जीव को, तीन काल भरमाये।
बिन सतसंग ना छूटिये, कोटक करें उपाये।।

मानुष जनम को पाया, उठ साचा अर्थ विचार।
छिनभंगुर सब जाल है, क्यों भरमें अंधियार।।

पारब्रह्म प्रभ सिमर लो, पावें इस्थित धाम।
दुरलभ जीवन जगत में, हर भगती बिसराम।।

माया के अभिमान में, नित पियासा जाये।
भरम की लागी दूषना, कोट जनम भरमाये।।

करम भोग की इच्छया, कभूँ ना पूरन होए।
दिवस रैन रुत मास में, परचंड कित गुन होए।।

आसा ले के जनमिया, आसा में औध गँवाए।
जरा जवानी बालपन में, नानाँ खेल खिलाए।।

करम रूप जंजाल ये, पल पल रूप वटाये।
छिन सुखिया छिन दुखिया, नहिं पलक शान्त चित्त आये।।

क्या राजा क्या भिखारी, क्या पंडित गुनवंत।
ऐसे भरम गुबार में, तीन काल भरमंत।।

सुख के जतन बहु करें, कोटक करें तदबीर।
बिन सिमरे प्रभ नाम के, रोवत जायें आख़ीर।।

सत सरूप की खोज कर, जो मन को देवे शान्त।
'मंगत' करम की दूषना, ये दीरघ जीव भरान्त।।285

आलख शबद विचार कर, जो सरब जियाँ आधार।
साचे गुर की सीख से, उतरें भवनिध पार।।

सदा अजन्मा नित परिपूरन, सो ठाकर निरधार।
मनमुखता को छोड़ के, जप लो बारमबार।।

साची सिखया जगत को, सत हुकम करतार।
जो चाहें सत शान्ती, सतनाम चित्त धार।।

औगनकारी मन ये, नित रहे तुम्हारे पास।
संकट से कैसे छुटें, नित धारे बिख की बास।।

छिन धावे आकाश में, छिन सोधे पाताल।
मूरख जीव नहिं सूझता, पल पल प्रीती पाल।।

बिख अगन को भोगता, जल जल होये अंगार।
सत सीतल होवे नहीं, जुग जुग भरमें सार।।

मत भूलो इस दूत से, जो तीन काल भरमाये।
शमशीर पकड़ विचार की, नित तिस घात लगाये।।

मनमानी सब छाड के, भावी प्रभ विचार।
छिन छिन सिमरो सतनाम को, शान्त पायें अपार।।

देव मुनी नित गाँवदे, पततपावन सतनाम।
मन की बिपता सब हरे, जीव देवे बिसराम।।

समाँ अमोलक जान तूँ, मानुष देह जो पाये।
सतनाम प्रभ सिमर लो, घालन ये सुखदाए।।

सत सरूप भगवन्त है, परम आनन्द की खान।
'मंगत' पल पल सिमर लो, जग जीवन लाभ पहचान।।286

सतनाम साहब का गाओ, जग जीवन लाभ विचार।
अन्तरयामी सरब का ठाकर, हिरदे माहीं चितार।।

उट्ठत बैठत सिमर लो, हरजन सेती प्रीत।
दुरमत जाल सकल भ्रम नासे, हर चरनी लागे चीत।।

इन्द्री विखे विखाद से, मनुआँ छूटन पाये।
अन्तरगत हरनाम में, नित ही सेव कमाये।।

मन अपने को ठाक के, पकड़ो धारा नाम।
निस दिन सिमर प्रीत से, पावें दृढ़ बिसराम।।

मोह माया गुबार में, क्यों नर पाये पसार।
बन्धन निस दिन है घना, बिन सिमरन दु:ख सार।।

मान गुमानी बहु गुनी, अन्तकाल पछताये।
छाड चला जब पिंजरा, काल गरासत पाये।।

सहायक कोई ना हुआ, जब जम दीनी पीड़।
देख देख पछतावता, नैनों विगसे नीर।।

धरी धराई छाड के, उठ चलया नाँगे पाये।
संग सखा परिवार ना, होवत कोई सहाये।।

कूड़ कपट की पोटली, भारी सिर असगाह।
मारग दुस्तर चलया, कौन दिखावे थाह।।

जैसी करनी कर लई, होत सहाई अन्त।
मूरख छूट ना पाइये, बिन सिमरे भगवन्त।।

पल घड़ी प्रभ याद कर, जो तीन काल सहाये।
'मंगत' तिसे विसार के, निहथावाँ जग से जाये।।287

अजर अमर अबनाशी गोबिन्द, सिमरो मन में नीत।
झूट जगत की कामना, और झूट जगत की प्रीत।।

निरमल सुरती राख के, सत्तनाम लयो गाये।
यहाँ सुखेला नर वसें, आगे सुख अधिकाये।।

नाम का सिमरन जगत में, सकल मिटावे ताप।
पारब्रह्म परगट होवे, जो अन्तर कीजे जाप।।

सत करम विचार करे, सरब जियाँ संग हेत।
पाप करम की मैल को, धोवे नित्यानीत।।

चार दिनाँ दा जीवनाँ, देखे इस संसार।
सबसे प्रीती नित कर, नहीं दुरबचन विचार।।

परभाती सन्ध्या काल में, सिमरे नाम अखण्ड।
दु:ख सुख भावी राम की, परस पावें आनन्द।।

छाया रूप इस जगत से, मन को बाँधे नीत।
अन्तरगत नित सिमरिये, साचा नाम पुनीत।।

संकट सकले नाश होवें, प्रभ भगत चित्त आये।
ज्ञान विज्ञान की रसना, नित मन को तृपताये।।

सत करम को साध के, बाजी लीनी जीत।
पाप कूप मन का तजे, हरजन सेती प्रीत।।

अपना सुख त्यागिया, पर को नित सुख देत।
सतनाम हिरदे जपें, ले सतगुर परतीत।।

मारग धरम पहचान के, जीवन भयो सुख रूप।
'मंगत' धरम विचार से, मिले अबगत शबद अनूप।।288

निर्भय रूप नारायन का, संताँ किया विचार।
जो जो सिमरे प्रीत से, पावे मोख द्वार।।

मिथ्या माया की रचना, तीन काल भय माईं।
उतपत परलय नित होवे, जीव को धीरज नाईं।।

बिनसनहारी वस्त जो, तीन काल दु:ख रूप।
बिन सिमरन भगवन्त के, सब ही भय सरूप।।

आवन जावन चकर ये, काल रूप संसार।
निर्भय एक भगवंत है, जो जनम मरन से न्यार।।

जिन्हाँ सच पहचानया, निरभय पायो धाम।
मिटी जीव की भरमना, नित आनन्द बिसराम।।

साची सीख विचार के, सतगुर चरन पधार।
सतनाम की गत लखें, उद्धरें भवनिध पार।।

मनमानी सब छाड के, मारग पायें विवेक।
पल पल नाम विचारिये, राखिये प्रभ की टेक।।

जीव पाये सत शांती, मिटे गवन संसार।
'मंगत' साचे नाम को, पल पल हिये विचार।।289

ज्ञान ध्यान की सार है, सतपुरख अलेख।
नित ही तिसके चरन की, राखो मन में टेक।।

मानुष देह का धरम ये, मन में आवे राम।
तजे आठ पहर का भटकना, जीव पाए बिसराम।।

सुत दारा धन जोबन, और बड़ा इक़बाल।
समाँ पाए छाड चले, सकली सम्पत माल।।

जिनाँ हर जस गाया, साचे मन पियार।
दुर्लभ ते जन जगत में, अन्त भये निस्तार।।

दिवस रैन नर जात है, औध घटे नित नीत।
इक दिन देखें नैन से, जब गिरे ये बालू की भीत।।

इक दिन साजन चलना, ये छाड बागीचा संसार।
आगे धाम की ख़बर कर, जाँ निस्चे जायें पधार।।

आदी सत अंत भी सत, एको सो प्रभ जान।
रूढ़ा शबद अगम का, परदे माहीं पछान।।

शबद सार जिस गाई, मिल सतगुर विख्यान।
सो ही नर निरमल हुआ, पाए शबद की तान।।

हिल मिल अंतर खेलयो, साचा शबद आगाध।
'मंगत' एको ध्यान में, लागी प्रेम समाध।।290

सिमरन साचे नाम का, पूरन निरमल योग।
अंतर का पट तब खुले, जब सतगुर होये संजोग।।

फिरे चौरासी धाम में, बहुत दुखिया ये जंत।
करम की फाँसी तब गई, जब सिमरा नाम भगवन्त।।

उटठ्त बैठत सिमर लो, साचा नाम अगाध।
सिमरन ही के ज्ञान से, मिट गये सकल उपाध।।

मनुआँ कठिन कराल था, सहजे पाई जीत।
एको नाम की सिमरनी, धारी अंतर नीत।।

इस सागर संसार में, जो आया दु:ख पाये।
बिना शबद परतीत के, नित निरासा जाये।।

सत रूप भगवान का, एको ही नित जान।
बाकी झूट पसार है, माया गुन निधान।।

सो ही निरमल होया, सो ही भये परसन्न।
एको साचे नाम का, जिसने पाया धन्न।।

बारमबार विचारया, अन्त सखा ना कोये।
ताँ सो समाँ विचार के, नित नाम की मनी परोये।।

पूरन सिमरन नाम से, पूरन मनुआँ होए।
'मंगत' पूरन गुर मिले, तब सतनाम परोए।।291

जतन करत से रतन मिले, भव दु:ख होवे नास।
काल करम संसा जाये, निस्चल बुद्ध परगास।।

मन बानी दमना करे, पीवे शबद अमोल।
सहज भाए मन वश भया, मिटा करम दा खोल।।

ग्रन्थ कतेब नर बहु पढ़े, मिटा नहिं मन दा वेग।
ज्यों आये त्यों चले, आस निरासे खेद।।

उठ कर जनम सुधार नर, सुन संतन दा बोल।
कूड़ माया सत आतमा, कर हिरदे विच तोल।।

सम्पत माया पाये के, नित रोये अनजान।
अमर पुरष विसराय के, भरमे वाँग स्वान।।

दुरलभ देह मानुष दी, मिले आतम ज्ञान परगास।
ताँ सो सिमरो सत पद, जो करे भरम का नास।।

जीतो मन अपने को, सिमरो साचा नाम।
'मंगत' खेल कठिन है, कोई सूरा परसे धाम।।292

सूरे सब ही बने, इस धरम खेत में आये।
पर गुरमुख उभरे विरला, जो कौड़ी मोल विकाये।।

मान मद और मसखरी, सबको गई है खाये।
दीन ग़रीबी बन्दगी, कोई जन विरला पाये।।

वस्तू तो सब घर माहीं, नित रही परकास।
बिन भेदी ना पाइये, निर्मल तत्त अवनास।।

जाँ कूड़ कपट वापार है, ताँ कैसे पाइये भेद।
जब शरधा होये अधक मन, प्रभ आप हरे आये खेद।।

छाड विगन पाखण्ड को, लख लो साचा लेख।
मानुष देह दुरलभ है, हरनाम को लीजो पेख।।

विषे भोग की अगनी में, जले चराचर भूत।
क्या गुनी क्या मुनी, क्या राओ क्या भूप।।

बिना सत विचार के, मन नहिं आवे धीर।
सम्पत पाये ब्रह्मलोक की, तो भी मन दिलगीर।।

रंग तमाशा जगत का, छिन में और का और।
सकले भरम तुरंग हैं, मन ने बाँधी डोर।।

माया चक्कर को देख के, सुखदेव का मन भरमाया।
और जीव की गत क्या, जो नित भरम लिपटाया।।

छूटन का उपाय सुन, मारग सहज सुखाल।
तन मन साखी एक प्रभ, नित लीजो चित्त भाल।।

तिसकी शक्त बिन मुरदार हैं, क्या बली बलधार।
सरजनहार सो सरज रहे, चराचर संसार।।

अन्तर तेरे वसदा, नित करे परकास।
करन करावनहार है, अबगत तत्त अबनास।।

सकले करम प्राकिरत के, प्रभ आज्ञा में त्याग।
आपामत नित खीन कर, इक नाम में रख अनुराग।।

खुले ग्रन्थी भरम की, घट में उमगे नाद।
डोलन से निश्चल भया, घर पाया बिसमाद।।

छिन छिन सिमरो नाम को, आलख पुरख आपार।
सब कुछ तिसका जान के, नित आज्ञा विचार।।

मिटे अगन संसार की, मन आवे संतोख।
वस्तू पाए अगोचरी, अबगत पुरख अनूप।।

मिल कर संगत गाइयो, परम तत्त निरवान।
'मंगत' हिरदे खोल के, कर लीजो पहचान।।293

सोना मनों विसार के, मारग धरम में जाग।
साहब दा फ़रमान सुन, ये लिख लेखा वडभाग।।

घर फूँका जिन अपना, तिन संग करे परीत।
आसा राखे जीवन की, तिन बुद्धी विपरीत।।

जैसा मित्तर खोजिये, ऐसा निहों निभाइये।
मारग प्रेम का कठिन है, सिर दीजे रसना पाइये।।

कथनी से कछु ना सरे, तन मन दीजो वार।
'मंगत' जीवन जगत में, केवल दिन है चार।।294

पूरन पुरख परमेश्वर चित्त गाओ। सुफल कारज जग में अधिकाओ।।
तिसका सिमरन देवे परतीत। परसन्न चित्त पाये निरमल रीत।।
मत भूलो जग देख के मेला। अन्त को चलना केवल अकेला।।
मत भूलो बहु सम्पत पाये। अन्त को खाली हाथ ले जाए।।
मत भूलो देह सुन्दर धारी। अन्तकाल होवे सब छारी।।
मत भूलो बहु धार चतुराई। काल बीर सिर ख़ाक मिलाई।।

मत भूलो बहु पाये परिवारी। अन्त सखा ना भयो सुखकारी।।
मत भूलो जोबन तन देखे। पलक पलक करे काल परीखे।।
मत भूलो बहु विद्या पाए। चले अनजाना अंत समाए।।
मत भूलो बहु देख तमाशे। ओड़क रहना पलक की रासे।।
सिमर गोपाल ये लाभ घनेरा। अजर अमर पद परसें सीरा।।
नित नित प्रीती चरने राखो। सतपुरषों की सिखया चाखो।।
प्रभ का सिमरन करे कल्याना। आध व्याध नासे दु:ख नाना।।
परम्परा से कथा चली आई। प्रभ की भगत जीवन सुखदाई।।
दृढ़ निश्चय से भज करतारा। भवसिन्धू से उतरें पारा।।
सतपुरषों संग प्रीत कमाओ। तिनकी सिखया सुखरूप लखाओ।।
बन्दीख़ाना ये जगत झमेला। भज गोबिन्द पायें थाओं सुखेला।।
अन्तर तेरे सो रह्या समाई। सकली शकत तिसकी प्रभताई।।
घट घट की प्रभ जाननहारा। पल पल सिमर ठाकर सुखकारा।।

राम चरन हिरदे रखो, पल पल करो उपकार।
'मंगत' मिले सत शान्ती, जो वनज अनूप ये धार।।295

सरजनहार सो देवन देवा। भाओ प्रीत से कर मन सेवा।।
तिसका सिमरन सुखसार विचार। भवनिध दुस्तर से पावें पार।।
जुग जुग हरजन करें दुहाई। साचा नाम सिमर सुखदाई।।
क्यों नर मन को नित भटकाये। रुच रुच दुरजन करम कमाये।।
दु:ख परापत क्यों नर रोयें। अपना बीजा आपे पायें।।
क्यों नर जीवों से वैर कमाई। दुष्ट करम ये परम दुखदाई।।
क्यों नर मोह मन्दिर में सोया। जनम अमोलक भरम में खोया।।
क्यों नर और के दोख विचारे। अपने पाप का नहिं भेद लखारे।।
क्यों नर धारें अधिक चतुराई। समाँ गँवाये अन्त पछताई।।
क्यों नर अपना नहिं जीवन विचारा। किस कारन आयो संसारा।।
क्यों नर सत सिखया नहिं मानी। पावें ना धीरज करें अभिमानी।।
क्यों नर स्वारथ में नित लागा। अगनी भोग में जले अभागा।।

क्यों नर अपनी नहिं तजी कुटलाई। अपने आप में गयो ठगाई।।
क्यों नर अब तक सोता नहिं जागा। जम का मुदगर आये सिर पर बाजा।।
क्यों नर अन्त की नहिं दिशा विचारी। कौन सहायक संग सखा परिवारी।।
क्यों नर जीवन में नहिं धरम कमाया। चलती बार बहुता पछताया।।
क्यों नर अपनी नहिं सोच विचारी। और जियाँ संग बाद बधारी।।
क्यों नर मन का नहिं संसा जाता। पाप भोग में नित पछताता।।
क्यों नर अपना जीवन काढ़ी। अगनी भोग में होवें अँगारी।।
क्यों नर अपने संग वैर कमाई। दुष्ट करम धार संकट पाई।।
क्यों नर मारग नहिं मुकत पछाता। सतगुर मेल नहिं कियो मदमाता।।
क्यों नर पलक नहिं सार पछानी। असार भरम में औध गँवानी।।
क्यों नर रोवें अन्त की बार। अपना किया नर आप विचार।।
संग सुहेला दे सके ना धीर। अब रोवत क्या बने आख़ीर।।

मनमानी अपनी करी, ना गुर सीख सुहाई।
'मंगत' सखा ना को बने, जब सिर पर बिपता आई।।296

ऐ मन मेरे तू कर विचार। पल पल सिमर लो सरजनहार।।
ऐ मन मेरे तू मान तियाग। दीन ग़रीबी सेवा लाग।।
ऐ मन मेरे नित जाग सवेरा। राम विसार पायें दु:ख घनेरा।।
ऐ मन मेरे तूँ क्यों भरमाया। इस्थिर रहे ना जो जग आया।।
ऐ मन मेरे करनी सत धार। एक दिन चलना छोड़ संसार।।
ऐ मन मेरे तूँ कहर तियाग। खिमा दया चित्त धर अनुराग।।
ऐ मन मेरे सत साजन जान। कारीगर जो तीन जहान।।
ऐ मन मेरे तेरा कोई नाहे। क्यों भूला जग देख सराये।।
ऐ मन मेरे तूँ क्यों हरखाया। साचा ठाकर नहिं पतियाया।।
ऐ मन मेरे तेरी रचना झूट। काल बली लेवे छिन लूट।।
ऐ मन मेरे तूँ क्यों नित मानी। निहथावाँ उठ चले अनजानी।।
ऐ मन मेरे क्यों भोग फँसाया। देह त्याग तू कहाँ समाया।।

झूट देही संग किया बसेरा। जग में भयो ना मेरा तेरा।।
सुपन समान सब खेल को पाई। अन्त की बारी सुपन हो जाई।।
अचरज लीला धारी करतार। अचरज माया कीनी विस्तार।।
साची ओट साहब की पेख। भरम ना भूलो रचना जग देख।।
सरब आधारी आप जगदीश। तिसकी सेव सब हरे कलेश।।
जुग जुग शोभा अपरम आपार। गावें पीर वली अवतार।।
तिसकी टेक नेहों तिस राख। तिसकी सेव रसना तिस चाख।।
तिसकी शकत में निश्चय धार। तिसका नाम जप बारमबार।।
होवे खुलासी प्रभ रूप धियाये। जाँ से उतपत ताँ लीन समाये।।
सुरत इकागर चेता प्रभ राख। झूट माया की रसना नहिं चाख।।
अगम अगोचर अपार बड़ाई। भज परमेश्वर आनन्द समाई।।
कीरत ध्याओ कीरत परगास। साची प्रीत प्रभ चरन निवास।।

औगन पल में बिनस गये, जब प्रीत पाई भगवन्त।
'मंगत' मिली सत शान्ती, अचरज शकत अनन्त।।297

जग जीवन का करो विचार। सतपुरषों की सुनो पुकार।।
भोग विकार चित्त अगन बढ़ाये। भोगे भोग नहीं शान्त आये।।
चित्त की अगन ताप ये भारी। जरा मरन नित पाये ख़वारी।।
आवे जावे चंचल जीया। भरम ग़ुबार में नित लपटीया।।
करम विलक्खन करे दिन राती। अपने जीवन का बनियो घाती।।
उस घड़ी का नर करो विचार। जिस घड़ी होवे ये देह अँगार।।
उस घड़ी का नर लेख लखायो। बसे बीबान घर बाहर बिसरायो।।
उस घड़ी को ना मन से भुलाओ। जोबनवन्त जब देह तज जाओ।।
उस घड़ी का नर लेख विचारो। लोक सखा जब सकल तज डारो।।
उस पलक को क्यों नर भूले। जब उलट शरीर गरभ में झूले।।
मूढ़मती नित मन से त्याग। साचे ठाकर के चरनी लाग।।
तिसकी सेव करो दिन राती। मात गरभ में जो बनिया साथी।।

तिसका सिमरन अत प्रीत से कीजो। जिसकी शकत से सब जग सीजो।।
अनाशक्त को जो शक्ती देवे। मूढ़मती को सत ज्ञान लखीजे।।
निहथावाँ जीव की रखया जो कीजे। सकली बिपता पल माहीं हरीजे।।
एक से रूप अनेक जो धारी। सरब शकत भज पद बनवारी।।
साचा ठाकर साचा स्वामी। सरब आधार सरब गत गामी।।
नित ही तिसका नाम धियाओ। सुफल जीवन जग आवन पाओ।।
नाम रतन प्रभ केवल सार। आदी अन्त सुख देवे दातार।।
नित सिमरो नित रूप समाओ। आनन्द सरूप करतार गुन गाओ।।
बन्धान टूटे घर चानन होई। सत अस्थान में जाये बसोई।।
जाँ में गये नहिं गवन विचारी। परमानन्द सो धाम निरधारी।।
जनम जनम की तृखा चित्त नासी। अजर अडोल पद परस अबनासी।।
गुन औगन दोऊ लीन समाये। निरगुन धार परापत पाये।।

करम गाँठी खुल गई, जब सत सिमरन चित्त पाये।
'मंगत' जीव अभय भयो, निज रूप में लीन समाये।।298

मिथ्या देह को सत कर मानी। डूब गये सकले जग प्रानी।।
खोल नैन खोज विवेक। मिथ्या देह का कीजो लेख।।
अधिक गुबार की देही खान। काम क्रोध विच बसें सवान।।
इच्छया मोह अन्धकार परगासे। लज्या भय कीरत नित भाखे।।
उपजे बढ़े पसरे पासार। सुकड़े नाशे ये देही विकार।।
पल में और की और हो जाये। मूरख जीव बिरथा दु:ख पाये।।
ना देह थिर इक पलक रहाई। तिसके मोह में परम दु:ख पाई।।
लोक कटुम्ब सकल परिवारा। सकल परपंच ये देह पसारा।।
देह आधार जगत को देखा। रंग रंग कौतक माया का पेखा।।
देह विनासे कछु दृष्ट नहिं आई। करो विचार गुनी गुनराई।।
देह ही संसा रूप संसार। मिथ्या भरम जीव अंधियार।।
द्वन्द विकार देही की फाँस। भरमें जीव नित काल गरास।।

काल सरूप ये देही जान। अनमत जीव को करे हैरान।।
अनंत विकार का देही सागर। मूढ़ा जीव नित करे उजागर।।
मिथ्या देह सत आतम देवा। विरले गुरमुख पाई सेवा।।
आतम तत्त का कीजो विचारा। दुस्तर देह से शान्त पधारा।।
दृढ़ निश्चय आतम में पाई। लीन भई सब भरम की काई।।
सत सरूप केवल परकास। करे पछान मिटे भ्रम फाँस।।
मन के औगन तब ही जायें। झूट देही का जब मोह मिटायें।।

देह दुरमत विकार में, नित जीव फँसाई।
'मंगत' तिसकी वासना, जनम मरन दिखलाई।।299

छाड़ भरम तूँ क्यों भरमाया। मारग मुक्त नहिं हिरदे ध्याया।।
पततपावन जप शबद अनामी। चारखानी में जो बिसरामी।।
अपने घट में खोज विचार। पावें जग का भेद आपार।।
अखण्ड अछेद पुरख निरवानी। अनहद नाद प्रेम की खानी।।
ताँ में अपनी सुरता धार। जग आवन की सुन ये कार।।
अपना साचा खोज ठिकाना। जाँ में जाये अन्त समाना।।
माया चक्कर में ना भरमायें। यहाँ तो इस्थिर रहना नाहें।।
आवत जावत खेल रचाया। प्रभ दाते की अचरज माया।।
छोड़ भरम तूँ सार सम्भाल। नित सरनागत हो दीनदयाल।।
अन्तर गरजे सत ठाकर देवा। मूढ़मना कर तिसकी सेवा।।
किरपासिन्ध सत किरपाधारी। सकल विपत इस जीव निवारी।।
चरन कँवल की सेव कमाओ। रुच रुच तिसका ध्यान लखाओ।।
जग को देख ना पल भरमाई। मिथ्याकार ये काल दुहाई।।
नित ही मन में मगन समाओ। काल त्याग अकाल गत पाओ।।
शबद पुरख सो सरब स्वामी। सरब ज्ञाता अन्तरयामी।।
पल पल तिसकी प्रीत विचार। जग आवन की साची कार।।
माया देख क्यों भरमाया। नित रोवे जिस राम नहिं ध्याया।।

बड़े बड़े सम्पत के वाली। रोवत चले अन्त को खाली।।
अपनी निरमल रास विचार। एक पलक होवे देह छार।।

सरजनहार ध्याइये, निमख निमख कर मीत।
'मंगत' साधन सार ये, हिरदे करे पुनीत।।300

इस सागर संसार में, मारग साचा खोज।
बिना जतन ना पायेंगा, जग जीवन की मौज।।

वैसे तो सब जीवते, स्वारथ धरम के माहीं।
धार मनोरथ बहु बिध, पलक धीर ना पाईं।।

सम्पत बहु संचित करी, अधिक किये नित भोग।
मरना मूल विसार के, अधिक पाये चित्त रोग।।

शान्त परापत कारने, आया जीव संसार।
दुरमत माया धार के, नित नित होये ख़वार।।

काल की नौबत बाजती, उठ मन मूरख जाग।
साचा वक्खर खाट लो, पर-सेवा अनुराग।।

अपना मनोरथ त्याग कर, पर-का हेत विचार।
सतगुर की ये सिखया, खाट रतन जग सार।।

मान गुमान त्याग कर, खिमा ग़रीबी धार।
जायें प्यासे अन्त को, जो बहु मानी संसार।।

साचा ठाकर सिमरियो, जिसकी सब जग रास।
आपा भाओ त्याग के, निरभय लीजो वास।।

माया मोह विकार ये, नित संकट को देत।
बिन सिमरे भगवन्त के, नहीं मिटे भरम विखेप।।

आवत जावत खेल ये, मन में करो विचार।
सत्त मुशक्कत घालिये, जो अन्त देवे जयकार।।

पाप करम को त्यागिये, पाइये सत विशवास।
मारग पर-उपकार में, रुच रुच करें निवास।।

मन ये अत कठोर है, सत जतन से बांधो नीत।
सत सरूप भगवन्त में, निरमल राखो प्रीत।।

झूट पसारा देख सब, साचा नाम विचार।
जीवत की आसा तजें, जीत लेवें संसार।।

बाज़ी कठन कराल है, सम्भल के खेलो मीत।
बिन परतीत ना पा सकें, दुस्तर जग से जीत।।

संभल संभल के खेलो गुनिया, नित ही दाओ विचार।
शत्रु बड़े गम्भीर हैं, मोह मद लोभ हंकार।।

सत्त सील सन्तोख की, पल पल मारो बाड़।
रसना प्रेम की खायके, नित रहो हुशियार।।

नित ही शत्रू मारिये, एक एक पर चोट।
मुकत मैदान को जीतिये, राख शबद की ओट।।

ममता बुरज उड़ाइये, सम्मत गोला मार।
खिमा ग़रीबी बन्दगी का, नित कीजो आहार।।

सुरंग लगाई ग़ैब में, शबद निशाना राख।
कंटक काल को मारया, सतगुर की सुन साख।।

विजय पाई संग्राम से, सब शत्रू कीने छार।
'मंगत' सो सत सूरमा, निरभय धाम पधार।।301

वैराग्य वाणी

प्रभ का सिमरन सार है, संताँ करी पुकार।
एक घड़ी ना विसरे, सो आनन्द भण्डार।।

छाया बादल की जियों, ऐसे जग का खेल।
दुरलभ नाम कमायो, कर साचे गुर संग मेल।।

एह जग भरम गुबार है, केवल मन तुरंग।
सिमरो साचे नाम को, सब मनसा होवे भंग।।

लख चौरासी जन्त में, मानुष देह परवान।
सिमरन साचे नाम का, इसमें मिले निधान।।

पलक पलक औधी गई, ज्यों नदी का नीर।
बिन सिमरे हरि नाम के, आठ पहर दिलगीर।।

साचे सुख को खोजते, बीत गये वरख हज़ार।
मिली न पलक की शान्ती, जो भोगे भोग आपार।।

खाली हथ्थीं आया, अंत जाये खाली हाथ।
जो सम्पत सो छाडनी, रंचक चले ना साथ।।

जैसे नीर तुरंग का, छिन में रूप वटाये।
ऐसे जीवन जगत में, जान लियो गुनि राये।।

नदी किनारे तरवर, कब लग बाँधे धीर।
एक लहर की धार से, जाये बिखर शरीर।।

काठ अगनी में पड़ा, पल पल होये अंगार।
'मंगत' जीवन जगत का, एह बिध कियो विचार।।302

जगत रूपी ये खेत है, काल रूपी किसान।
एक छिन में मेट दे, सूखा हरा निशान।।

आवन जावन पवन का, ज्यों बहता नदी का नीर।
ऐसे रचना जगत की, जान लयो मतधीर।।

पल पल जात विहाये, ज्यों रैन दिन पख मास।
आस अंदेसा ना गया, बीत गए सब सांस।।

सम्बल फूल का रंग ज्यों, सबका चित्त हरखाये।
ऐसे रचना जगत की, देखत में सुखदाये।।

मूल बिना ज्यों रुख, केला करे बिसतार।
ये ही लीला जगत की, राखे ना कुछ सार।।

ये जग मन की भरमना, जैसा मन तया रूप।
जैसी धारे कामना, देखे सोई सरूप।।

कूड़ी बाज़ी देखके, बड़े गुनी भरमाये।
बाज़ीगर जिस देखया, तिसका चित्त ठहराये।।

काल का बांधा आया, अन्त को पेखे काल।
बंदीखाना जगत ये, झूट माया जंजाल।।

झूट जगत में आयके, धरे झूट भरवास।
काल बेलनी बेलया, जैसे रूई कपास।।

विषे भोग संसार के, ज्यों विष बासक नाग।
एक पलक के मेल से, लियो नरक निवास।।

आसा रूपी अगन ये, छिन छिन करे अंगार।
'मंगत' मन पछताया, जब जलन देखी संसार।।303

ना लेना ना देना, ना सुख मूल बियाज।
झूठी लागी कलपना, देवे कलेजे दाग़।।

सुखिया कोई ना देखया, जो आया इस संसार।
जो देखा सो दुखिया, नित दु:ख का करे विचार।।

क्या धनी क्या दलिद्री, क्या भूप राज राजान।
जो देहधारी आया, सो परसे दु:ख की खान।।

छाया सेती प्रीत नर, कब लग देवे साथ।
उलट दिसा गयो चाँदना, भयो वंजोग अनाथ।।

राख अमानत बावरा, ले अपना हक़ जमाए।
छूटन की तदबीर ना, पावे घनी सज़ाए।।

अपना तो कुछ ना थिया, पर मन में लेवे बनाये।
फेर बिगाना हो गया, जब जम कियो नियाये।।

बंदीखाना जगत ये, बाँध्यो हिरस ज़ंजीर।
चार कुंट उठ धाया, सूझत ना तदबीर।।

मरने का भय राखके, करे हिकमत आपार।
वोह भी काल से ना बचे, जिनकी फौज जरार।।

रोगी सोगी सूरमें, सबको कीजे घात।
जो जन आया जगत में, होये काल का भात।।

वैद धनन्तर मर गया, और लुकमान हकीम।
हाजी ग़ाज़ी ना बचे, खा गया काल ग़नीम।।

ये संसार सराये, जीव मुसाफिर नीत।
'मंगत' खोज सत शान्ती, औध जात है बीत।।304

पत्ता गिरे बरिच्छ से, घट से विगसे नीर।
ऐसे समाँ को पायके, जीव ये तजे शरीर।।

नाओ जैसे नीर में, नित नित डाँवाँडोल।
ऐसे भरम गुबार में, जीव धरे चित्त खोल।।

जैसे रुत बसन्त की, सब बृच्छों पर आए।
डाली डाली झड़ पड़े, जब अजल ख़िज़ाँ उठ खाए।।

ऐसे जोबन जीव को, एक पलक में आए।
तिसको देख ना भूलयो, ये रंग नहिं रहना पाए।।

हाड मास का पिंजरा, प्रान भरा विच तेल।
एक पलक की आन में, करे भसम संग मेल।।

छिन छिन औसर जात है, जैसे बहता नीर।
समाँ गया ना आएगा, करो विचार मतधीर।।

जो आया तिस जावना, ये खरा खराना खेल।
रहना किसे नहिं पावना, जो जुग चारे मेल।।

धरती गई नीर में, नीर को पावक खाये।
पवन गिरासे पावक, आकास में पवन समाये।।

तत्वों में सब तत्त मिले, रूप रंग मिट जाए।
ये ही कला सरीर की, छिन छिन रूप वटाये।।

बालापन को जोबन खाये, गई जरा जोबन को खा।
काल जरा को खा गया, 'मंगत' जीव पछता।।305

काल करीड़ा नित करे, उठके गुनी विचार।
सूरवीर बलवान हो, सबका करे शिकार।।

भयकारी ये काल है, चराचर भूत कम्पाये।
तिसकी गरजत देखके, आसन विरंच डोलाये।।

पीर पैग़म्बर औलिया, सिद्ध तपी अवतार।
काल संदेसा सबको, लागा बड़ा आपार।।

ऐसे दु:ख संताप में, क्यों सोया मूढ़ गँवार।
काल चौसर नित खेलता, पल पल पासा डार।।

काचे कुम्भ में नीर ज्यों, कब लग रहत समाये।
ओह फूटा ओह बह गया, सरब खेल मिट जाये।।

काल रूपी बरिच्छ पर, आये बसेरा लीन।
छिन छिन पल वोह खा रहा, उठ मूढ़े तत्त को चीन।।

धन जोबन के मद में, मत होवो ग़लतान।
काल शिकारी ताकता, मारे खिचके बान।।

ना किसी की बनी रही, ना बनेगी मीत।
जो बनी सो बिगड़ी, मत राखो परतीत।।

ज्ञानी गुनी चतुरबुद्ध, एह तत्त करो विचार।
कहाँ से आया कहाँ जावना, कहाँ में पाये पसार।।

रंचक मात्तर सुख नहीं, इस कूड़ जगत भरवास।
'मंगत' रचना स्वपन की, खेले काल तमाश।।306

काया रूपी आयरन, काल रूपी लुहार।
प्रान का हथौड़ा नित चले, गुनियों करो विचार।।

पूंजी जाँकी स्वास है, छिन छिन जात विहाये।
कूड़ा वनज कमाय के, गाँठी मूल गंवाये।।

छिन आवे छिन जात है, ज्यों अंजली का नीर।
जीवन जग दिन चार है, कोट करें तदबीर।।

एह तन विख की खान है, हीरा मनी गोपाल।
तन दीजे तब पाइए, नदरी नदर निहाल।।

बालू की ये भीत है, धूएँ का अम्बार।
छीजन में ना पलक लगे, कित गुन करें विचार।।

महल अटारी कोट गढ़, हिकमत हुकम कमाल।
खाली रहे सिंघासन, नहिं आये नज़र भूपाल।।

खोटा जीवन छाड कर, मारग खरा पहचान।
जाँसे मिले सुख शान्ती, मिट जाए झूट गुमान।।

जावन जावना सब कहें, पर पंध ना ठौर की जाँच।
कूड़े इस भरवास में, पायो किसे ना साँच।।

काँच वापारी जगत सब, करे मानक दा गुमान।
जब नज़र सराफ़ी में चढ़ा, तब लज्जित भयो अनजान।।

विख बीजे निसदिन गुनी, माँगे अमरत सार।
'मंगत' सो ही पाइए, जो घालें करें विचार।।307

माटी का कलबूत ये, अंत माटी समात।
सरजनहार ना जानया, क्या बने पछतात।।

काया रूप है हाँडिया, विषय भोग का भात।
आठ पहर जलती रहे, अगन तृषना साथ।।

जैसे खाल लुहार की, फूंके बिना परान।
करनी बिन मानुष जो, विचरे पशू समान।।

हीरा नाम विसारया, काँच के सम्पे ढेर।
अंतकाल ये अन्धमती, फिरे चौरासी फेर।।

आसा जीवन की करे, देखे काल सरूप।
अमरत इच्छया मन करे, बीजे बिख का कूप।।

चार दिना दा जीवना, उठके मूढ़ विचार।
राज सिंघासन छाडके, करें भूमी पाये पसार।।

नील मनी ढलाइयो, कंचन गढ़ औसार।
खाली हथ्थीं चल गये, जिनके घने अम्बार।।

पोशाक पहने पीताम्बरी, अंग सुगन्ध लगाए।
काल शिकारी मारया, तब भसवी गयो समाये।।

सिर पर छतर सुहावना, चमके चूनी आपार।
सो सिर खाकू संग मिले, उठके दृष्ट निहार।।

पानी का ये बुदबुदा, छिन में बिनसे जात।
'मंगत' बिन हरि सिमरने, सब ही कूड़ लखात।।308

वडे वडे भूमी के मालिक, और जिनके वड परिवार।
चले निहथावें जगत से, खाली हाथ पसार।।

रोता आया जगत में, अन्धमत जीव अनजान।
अन्त को रोता जात है, ना कोई पूछ पछान।।

पर-हक को नित खावना, ज़ोर ज़ुलम कमाये।
राजे राने जगत के, बाँधे जमपुर जाये।।

झूट देही के भोग में, क्यों गुनियाँ ललचाये।
ना थिरता इस भोग की, ना देह थिरी रहाये।।

देह रूपी बीबान है, करम का तिसमें झाड़।
फल की आसा राख के, मोह्या जीव गँवार।।

जतन करे बहु भाँत के, तो भी शान्त ना होये।
जो घालें भूमी कोट गढ़, विजय की मनी परोये।।

कूड़े इस संग्राम में, सबने पाई घात।
काल दगा दे मारसी, कोई ना छूटन पात।।

जब लग सच परतीत नहीं, मन नहिं परसे ठौर।
घालन सभी दुःख सार है, फिरे चौरासी घोर।।

चार दिनाँ दा जीवना, अंत मिले विच छार।
लाख करोड़ी सम्पत तजे, और राज दरबार।।

सुपना जैसे रात का, ऐसे जग दा खेल।
'मंगत' घाले नाम जो, पाये परम सुख मेल।।309

उत्तम कीरत प्रभ की, तीन लोक परवान।
जो सिमरे मन प्रेम से, ताँ का हो कल्यान।।

नित्त अजन्मा अबनाशी, अखण्ड आनन्द भगवान।
एक पलक करे ध्यान जो, काल ना कीजे हान।।

सतगुर की परतीत रख, सिमरो शबद अगाध।
मन मन आवे शान्ती, मिट जाएँ सकल वियाध।।

जनम जनम का भरमता, पाई मानुष देह।
सिमरो दीनदयाल को, दुरलभ उद्दम एह।।

सकल करम धरम पर, पावे नित जीत।
आलख पुरख के ध्यान में, लागी जाँ की प्रीत।।

निरमल समाँ पहचान के, नित कीजो प्रभ की याद।
ऋद्ध-सिद्ध चूमें चरन को, मिट जाएँ सकल उपाध।।

सिमरन ही तत्त सार है, प्रेम प्रीत की डोर।
नित सो सरजनहार है, पदपंकज चित्त जोड़।।

लोक कुटुम्ब न संग चले, ओढ़क मरती बार।
बिना भगत ना छूटिए, जाएँ बाँधे जम के द्वार।।

बाल जोबन का मान तज, काल दग़ा दे खाए।
पलक ना विसरो सतधाम को, सुनियो सच उपाए।।

नित रोए विच दुरमत, करम का जाल कराल।
सम्पत में ही मर मिटे, नित घाले जम का जाल।।

जो सम्पे सो छाडना, एह निश्चय कर जान।
तीन लोक की सम्पदा, सब ही काल की खान।।

अपना तेरा कुछ नहीं, खोल नैन कवाड़।
जोबनवन्ता तन जले, अन्त को अगन मँझार।।

महल अटारी छाड के, भसवी लीना बास।
क्या राजा क्या राना, सब ही काल तमाश।।

जो जनमे सो थिर नहीं, छिन आवे छिन जाए।
इस्थिर भगत भगवान की, जोती जोत मिलाए।।

देखन आया जगत को, देख भया हैरान।
मेरो मेरी बहु घनी, सबका चलत निशान।।

अगन सरीखा जगत है, सब ही तापें जन्त।
गुरमुख विरले रस पिया, अमरत नाम भगवन्त।।

अमरत वेला जान के, सतनाम विचार।
दुरलभ जीवन पाय के, अपना करो उद्धार।।

जग में साचा कुछ नहीं, केवल भरम बकार।
उठ सिमरो नाम आगाध को, सन्ताँ करी पुकार।।

जिन सिमरा सो तृपत भए, इस लूने खेत के बीच।
उट्ठत बैठत घालियो, ले अमरत शबद मन सींच।।

सत संगत मिलके गाइयो, अजर पुरष निरवान।
'मंगत' पलक ध्यान से, मिट गई चौरासी खान।।310

रल मिल संगत गाइयो, साचा नाम करतार।
ख़बर नहीं किस पलक में, ये तन होवे छार।।

सुन्दर जग को देखके, चित्त को मत ललचाए।
सिम्बल फूल समान है, भोगन से पछताए।।

चार दिन की चाँदनी, ओढ़क होए अन्धकार।
ख़िज़ाँ तो सिर पर है खड़ी, मत भूलो देख बहार।।

दीरघ ऊँचा होया, जैसे पेड़ ख़जूर।
करो पहचान उस वक़्त की, जब काल करे सिर चूर।।

धन जोबन को पाएके, गहरा करें अभिमान।
छिन में भई विनास सब, उड़ गई धूड़ समान।।

जिस दर बैठ बैजन्तरी, नित गाएँ छतीसों राग।
सो दर सूने हैं पड़े, बोलें वहाँ पर काग।।

अपनी अपनी ग़रज़ से, बहुते बन गए साथ।
चला अकेला अन्त को, खाली लेके हाथ।।

झूटा देह का पिंजरा, बहुता करें सँवार।
एक पलक की आन में, भूमी पाए पसार।।

साचा साहब विसारिया, जग का हूआ ढोर।
करे मज़दूरी निस दिन, बिना दाम के मूढ़।।

रोता आया जगत में, अन्त को रोता जाए।
मूरख समाँ गँवाया, कूड़े लालच पाए।।

पलक पलक दम जा रहा, तीन लोक जाँ मूल।
साच ना चित्त में पाया, औध गँवाई भूल।।

लोक कुटम्ब ना सँग चले, माल धन इक़बाल।
चले निमाना जगत से, जब आन पछाड़े काल।।

जीवन में कुछ कर लयो, होएँ मुसाफ़र अन्त।
दुरलभ सेवा जगत की, और याद भगवन्त।।

बिख बीजे बिख खावना, सच बीजे सच हो।
खरा नयां दरगाहे में, तिल घाट वाध ना को।।

सुपना जैसे रात का, ऐसे जगत पहचान।
मेरी मेरी बहु धरी, अपना चलत निशान।।

इस सागर संसार में, दुरलभ ये विचार।
नीवा होके चालना, सबसे रखें पियार।।

जात जमाती बन्ध में, मत होवो मग़रूर।
आगे नबेड़ा अमल का, विच दरगाह मंज़ूर।।

निकले प्रान जब अन्त को, देह गई कुमलाए।
इक जलावें अगन में, इक भूमी दें दबाए।।

काचे घट में नीर जों, ठहरन कभू ना पाए।
ऐसे जीवन जगत में, पल छिन खेड खड़ाए।।

सत सरूप पहचान कर, करम विलक्खन त्याग।
ऐसा समाँ ना पाएँगा, उठ भरम की नींद से जाग।।

झूट भरम को छेद के, सत की राखो ओट।
'मंगत' कहे समझाय के, ना पाएँ काल की चोट।।311

सत के कारन ज़हर पियाला, पिये गुनी सुकरात।
मीराँ साचा जीवन पाके, बिख अमरत सम खात।।

सत का जीवन ईसा लीना, सूली चढ़ सुख पाया।
और चढ़े मनसूर गियानी, जिन साचा जीवन ध्याया।।

इब्राहीम अगन में बैठा, सत तत्त का भरवासी।
सत की खोज चढ़े कोह तूर, सुने शबद अबनासी।।

सत प्रतीत से पाया सत जीवन, मरन भय सब नासा।
एको देखा तीन जहानी, जिसका सकल तमाशा।।

जती सती त्यागी बैरागी, और गुरू सिख भेखा।
सत कथा सबही विचारें, पावें सत का लेखा।।

जिनाँ सत परापत होया, मरन किया क़बूल।
मर के जीवन जग को दीया, मिटाई भरम की भूल।।

दीन ग़रीबी सेवा साधन, अनन भगत चित्त धारी।
पीर वली कुतब और ग़ौस, सब सत के भए पुजारी।।

मानुष देह दुर्लभ जग माहीं, जो सत सरूप मिलाए।
बिना सत परतीत के, नित जीया दुख पाए।।

सत का भेद अपरम अपारा, पावे कोई ज्ञानी।
झूट विकार सकल चित्त त्यागे, एके सार पहचानी।।

बादमुबाद सकल बिख त्यागे, एक नाम चित्त गाए।
मन अपने का साधन कीजे, दुरमत मैल हटाए।।

तन झूटा मन झूटा, ये माया का विकार।
सरजनहार सत रूप है, हिरदे करो विचार।।

हाड-माँस का पिंजरा, मल-मूत्तर की खान।
पवन करे परकास नित, छीजे आन की आन।।

नौ द्वारे का रस भोगी, नित दुखिया ये जन्त।
प्रान छीजे काया कुमलाए, पलक होवे भसमन्त।।

नैन नासका जिभ्या कान, नाक की धारी सुद्ध।
पलक पलक बल जात है, अन्त होए बेबुद्ध।।

माटी केरा पिंजरा, अन्त को माटी होए।
सरजनहार पहचान कर, जनम ना जूए खोए।।

ज़ोर जुलम कमा गए, अन्त भए मुरदार।
कारूँ और सिकन्दर, कहाँ फ़रऔन सरकार।।

राज तेज की आस में, जीवन दियो गँवाए।
माटी का कलबूत ये, गयो माटी समाए।।

धरती के मालक बने, अन्त धरती गई खा।
महल अटारी कोट गढ़, छाड के धूड़ समा।।

चार दिनाँ का जीवना, आसा वरख हज़ार।
एक पलक नहिं शान्ती, नित भोगे भोग आपार।।

ना राजा ना राना, ना रहे मीर गुलाम।
ख़िलजी ग़ौर और मुगल दा, देवे कौन पैग़ाम।।

झूटे इस भरवास में, उठके होश सँभाल।
करनी साची कर लियो, सिर पर गूँजे काल।।

साचा रब पहचान कर, पावें अजब सुराज।
जाए विखेपत जीव की, मिले राज अधिराज।।

शाहों का जो शाह है, सरब कला जिस हाथ।
सिमरें भाओ प्रेम से, सेवें नाथों का नाथ।।

ठाकर साचा जान कर, नित ही ध्याओ मीत।
'मंगत' सिमरन सार है, बाकी कूड़ परीत।।312

अधक तिसकी कान्ती, जिस मन धरम विचार।
सो ही ज्ञानी सो ही गुनी, सो ही जान अवतार।।

साचा धरम विचार से, चित्त आवे विशवास।
कर्म अकर्म की सोझी मिले, निरभय लेवे वास।।

इस सागर संसार में, सुनयो सार उपाए।
हिरदे धारो नाम को, और जीव दया कमाए।।

दुखी दीन की सेव कर, प्रभ का हुकम पहचान।
जिसने सब कुछ दीया, तिसकी सिफ़्त बखान।।

माटी केरा पिंजरा, जो नित सरजनहार।
राखो तिसका प्रेम चित्त, पावें नित जयकार।।

पर-उपकारी जीवना, हर की राखें टेक।
तन मन होवे उज्जला, सुन साचा ये विवेक।।

पुन्न पाप दोनो तजो, हर की आज्ञा माहीं।
निज ठाकर साचा जानके, प्रेम प्रीत चित लाईं।।

जब लग सार ना ध्याइए, बिनसे नाईं विकार।
बाँधा करम की जेबड़ी, फिरे चौरासी धार।।

साचा नाम गोबिन्द का, नित ही धरो ध्यान।
समाँ फेर ना आएगा, काल करे नित हान।।

ना सखा ना संग कोए, अन्त को मरती बार।
साचे इक भगवान को, हिरदे माहीं विचार।।

बारमबार विचारया, जग रहना नाईं मीत।
वैर बदी को त्याग के, सबसे रक्खो परीत।।

प्रेम साहब का रूप है, सकल मिटावे ताप।
मन मन आवे शान्ती, बढ़े अधक परताप।।

एको प्रेम की धारना, सभी गुनियों का ज्ञान।
जिसके मन प्रेम नहीं, सो नर पशू समान।।

यज्ञ दान तपस्या, सबका एह फल जान।
मन में आवे दीनता, हरे भरम गुमान।।

जिसके मन में भय भया, सो ही पावे भाओ।
भाओ से भगती मिली, दुस्तर जग तर जाओ।।

सो ही पण्डत वेद का वक्ता, जिसका मन निरमान।
राखे हिरदे प्रेम इक, सेवे सच भगवान।।

शत्रू को सुख देवना, मन का हरे विकार।
साचा प्रेम ताँ जानिए, जिसका ये विचार।।

मन वैरी को ठाकना, सत मारग धरम पहचान।
जीत पावें संसार से, लें साचा मोक्ष निरवान।।

जतन जतन कर राखियो, साचा एक पियार।
'मंगत' मिटे सब दूषना, जब संगत साच विचार।।313

महाँ बलकारी महा तेजस्वी, सो ही जग में होए।
साची भगती प्रेम को, जो नित हिये परोए।।

कुल जाती का मान तज, साचा करम पहचान।
दुरलभ जनम संसार में, मानुष का ये जान।।

सत सील और सादगी, हिरदे धर उपकार।
खाटो लाभ इस देह का, जो अन्त होवेगी छार।।

साचा सुख संसार में, सब जीवों की सेव।
तपन मिटे सब जीव की, हरखत भए गुरदेव।।

जप तप संजम साधना, तब ही पूरन होए।
दृष्टी आवे एक जब, मैल दुई की खोए।।

अखण्ड रूप नारायन, जल थल रिह्या व्याप।
तब ही पावें भेद को, जब तजें भरम का ताप।।

काची देह का पिंजरा, होवे इक दिन राख।
करना है सो कर लयो, अन्त होवें अनाथ।।

धन जोबन के मान में, क्यों नर अन्धा होए।
तेरा कुछ ना जगत में, जाए खाली हाथ बसोए।।

पुत्तर धीया ना साक संग, ना नाती ना परिवार।
चले अकेला अन्त को, जब जमराज पुकार।।

रोता आया जगत में, अन्त को रोता जाए।
जो जन्मे सो थिर नहीं, सब काल चक्कर में आए।।

करनी साची कीजियो, जो अन्त होवे सुखरीत।
ऐसा बीज ना बीजियो, जो काटन में दुख देत।।

रंग तमाशे छाड के, मन में हो हुशियार।
साचा पन्थ अगम का, नित ही खोज विचार।।

बाल जवानी और जरा, गई सभी को खाए।
कूड़ा धर भरवास नर, अन्तकाल पछताए।।

छाड बखीली मन से, करता राम विचार।
तेज बल ना रहेगा, अन्त को मरती बार।।

जावन जावन सब करें, पर भेद नहीं कछु ठौर।
कहाँ से आया कहाँ जाए, संशा बड़ा अघोर।।

आद की कछु सुध नहीं, ना अन्त का किया विचार।
संशे में औधी गई, पाई ना कछु सार।।

मरना तो निश्चय होए, जो जीवे वरख हज़ार।
मरने से पहले मरे, ले तत्त ज्ञान विचार।।

साचे गुर का मेल कर, पावें सार विचार।
प्रीती उपजे नाम से, और भाओ भगत चित्त धार।।

सतधाम पद आनन्द को, नित ही जापो मीत।
सुफल जनम संसार में, जो बूझे ऐसी रीत।।

सत करनी सत रहनी, सत में जीवन त्याग।
'मंगत' सूरा जगत में, कोई आया ले वडभाग।।314

साची भगत मुकत की दाती, हिरदे माई विचार।
बिना भगत ना छूटिए, भवजल दुस्तर अपार।।

करम का संसा नित घना, करे जीवन को घात।
कोट जनम भरमत फिरे, पावत ना नर वाट।।

जतन करे बहु भाँत के, मन नहिं पावत शान्त।
संशे में ही चल बसे, बड़े गुनी गुनान्त।।

राजा दुखिया परजा दुखिया, दुखिया साध दरवेश।
देहधारी जो आया, तिनको घना कलेश।।

जनम मरन और इच्छया दोख, ये ही बड़ा सन्ताप।
सकल जगत जलता फिरे, अदभुत माया ताप।।

क्या धनी क्या दलिद्दरी, क्या राजा क्या रंक।
चारखानी के जीव को, लागा भय कलंक।।

सुख को खोजत खोजते, सकल औध वँजाए।
नाना सम्पत पाये के, तो भी तृखा अधिकाए।।

परवारी भी दुखिया, निरपरवारी दु:ख के माईं।
गुनी ज्ञानी चतरबुद्ध धारी, तीन काल दु:ख पाईं।।

जाँ से पूछूँ सुख की, पहले देवे रोए।
अचरज माया भगवान की, सभी जीव दु:ख जोए।।

क्या गृहस्ती क्या विरक्ती, सब घट लागी आग।
काल करम के जाल में, नित बाँधा अभाग।।

चौधाँ भवन की सम्पत, जो घर आवे मीत।
तृषना मिटे ना बावरी, जो नित दु:ख की रीत।।

भोगता भोग की आस में, रहे जीव दिन रात।
भोग भोग नहिं धीर है, उठ चला भरमात।।

अदभुत माया चक्कर में, मोहे दानव देव।
रचना ये विसमाद है, पारावार नहिं भेद।।

आसा माईं जनमिया, आसा में मर जाए।
बाँधा आस की जेवड़ी, कोट जून भुगताए।।

पण्डत ज्ञानी क़ाज़ी आलम, जो देखन में आए।
मोह माया के चक्कर में, रैन दिन भरमाए।।

खट-रस व्यंजन नित करे, जीभा नहिं तृपताए।
छिनभंगुर ये भोग है, कैसे शान्त समाए।।

पाँच पचीस प्राकिरत का, अजब पसारा जाल।
जीवन की आसा माईं, दरशन पावे काल।।

इन्द्री विषय विकार में, नित पियासा होए।
छिन छिन रंग वटाया, तृपत ना पाए कोए।।

बालक दुखिया अन्धबुद्ध धारी, और दुखिया जोबनवन्त।
जरा परापत दु:ख की खानी, काल गरासे अन्त।।

दृष्यमान संसार ये, सब ही रूप वटाए।
छिनभंगुर जो रूप है, कैसे सुख दिखलाए।।

करो विचार सुख सार की, मत भूलो मन के भाए।
'मंगत' नौबत चलन की, पल पल बाज बजाए।।315

जो सुख इस्थिर ना रहे, सो तो दु:ख का रूप।
ऐसे घने कलेश में, कैसे पावें छूट।।

मन बैरी विकराल है, लागा झूट के संग।
देख देख अन्धा हुआ, होवे अन्त असंग।।

काम क्रोध की अगन में, जलें चराचर भूत।
छूट ना पावे जीव ये, लाख वटावे रूप।।

जो वस्तू थिर ना रहे, कैसे देवे धीर।
मिथ्या भरम भरवास में, बाँधा अन्ध अन्धीर।।

साची भगत पहचान कर, जो नित सुख की खान।
सकल मिटावे भरम जो, मिलावे एक भगवान।।

सत वस्तू के संग से, नित ही सुख को पाए।
झूट वकार ये भरम जो, तीन काल दुखदाए।।

सत सरूप भगवान का, केवल एके जान।
माया झूट पसार है, जो नित दु:ख की खान।।

असत वस्तु के प्रेम से, उपजे तृषना रोग।
तीन गुन माया परगट कीजे, मिथ्या करम संजोग।।

करमफल इच्छया धार के, परसे दु:ख द्वन्द।
छिन ठाँडा छिन ताता, ज्यों लोहार की साँड।।

ऐसे इच्छया करम की, अनेक रूप दिखलाए।
ये ही जरा और मरण है, चारखानी परवाहे।।

करम गती को भोगता, राजा राना रंक।
पुन करमी सुख पावता, पापी दु:ख असंख।।

ये रचना संसार की, मन में लयो विचार।
करम का संसा ना मिटे, अनक जनम को धार।।

मानुष देह दुरलभ है, जो देवे मोख निधान।
साचे गुर के मेल से, होए जीव कल्यान।।

मिथ्या जग को देखिया, सत एक भगवान।
मन आया विशवास में, परसी सुख की खान।।

छिन छिन सिमरो नाम प्रभ, परमानन्द सरूप।
मन में आवे चाँदना, जाए भरम का कूप।।

करमफल इच्छया त्याग कर, करम करो निरधार।
ऐसी करनी जो करे, सो पावे निसतार।।

कारन करता पेख के, दृढ़ कीजो विशवास।
साची भगत पहचान के, पाओ सुख निरवास।।

तीन काल समरूप है, घाट वाध नहिं पाए।
करम संदेसा ना धरे, ना जनम में आए।।

सरब जियाँ आधार है, आप रहे निरलेप।
वाँग आकाश के पसरिया, सुनयो सार विवेक।।

बादल छाया जगत ये, नाना रूप वटाए।
समाँ पाए सब मिट गए, केवल आकाश दिखाए।।

चिदाकाश परमातमा, नित आनन्द सरूप।
'मंगत' सिमरन तिसका, तीन काल सुखरूप।।316

भवजल दुस्तर आपार है, वारापार ना कोए।
बिना सत परतीत के, निसदिन दुखिया होए।।

पाँच तत्त का पिंजरा, पंछी करे बिलास।
सार किसे ना जानया, मन भरमे अन्ध भरवास।।

देह की आसा धार के, उपद्रव करे अपार।
ख़बर करो उस पलक की, जब ये होवे छार।।

देह के सुख के कारने, नित जियाँ उतारे खाल।
ये भी तो सँग ना चली, जब मारे काल कराल।।

अंग सुगन्ध लगाई, अकड़ अकड़ पग धार।
निकले प्रान जब देह से, मिल गई धूड़ी नाल।।

अन्धा हूआ जीव ये, सत सरूप विसराए।
करम करे बेलक्खने, पावे अन्त सज़ाए।।

जैसी करनी जो करे, फल देवे करतार।
छिन छिन देवें हिसाब तूँ, उस ऊँची सरकार।।

आया मानुष देह धर, विचरें पशू समान।
खान पान और सोवना, ये ही कार पहचान।।

देह तो भई मानुष की, करे करनी ढोर गँवार।
मूरख समाँ गँवाया, भरवासे कूड़े धार।।

आसा रूपी रोग है, सतगुर खोजो वैद।
औखद खाओ सतनाम की, जाए करम की कैद।।

काची देह मिथना करो, ले साची जुगत विचार।
अन्दर होवे चानना, जाए भरम अन्धकार।।

अबनाशी साहब आ मिले, जाए जीव की प्यास।
अखण्ड पावे शान्ती, निरभय लीजे वास।।

देह रूपी मकान में, पावें लामकान।
मिट्टी अन्दर देखया, मालिक तीन जहान।।

मरने से पहले मरे, साचे प्रेम के रंग।
जुग जुग पावें जीवना, रहें साहब के संग।।

झूटी देह की कामना, दिल से करे तियाग।
सोता जनम अनेक का, उठ मन मूरख जाग।।

देह पिण्ड जिसने दिया, कर तिसकी पहचान।
साचा मारग घाल लो, सुन सतगुर विख्यान।।

अपना सुख त्याग कर, और जियाँ को सुख दे।
पर-उपकारी जीवना, जीवन चित्त में ले।।

एक साहब की टेक रख, मन में हुकम पहचान।
आज्ञा तिसकी मान के, अबगत पावें थान।।

पूँजी देह की स्वास है, छिन छिन रहो वँजाए।
सिमरो साचे नाम को, फिर समां ना पाए।।

जब लग सत ना सोधिए, पावे ना मन धीर।
जतन अकारथ सब जाए, अन्त होवे दिलगीर।।

साचा एको साहब है, हिरदे कर पहचान।
तिसकी शक्ती में चलें, लोकालोक जहान।।

सो अन्दर तेरे वस रिह्या, खोज करो नित नीत।
दृढ़ निश्चय से सोधयो, तब होवे परतीत।।

जिस पाया सो घट माईं, मानक अपरम अपार।
सुपना हूआ जगत ये, जब पाया दीदार।।

पूरन करम को पाया, मनसा पूरन होए।
'मंगत' जिन रब जानिया, चरन तिनाँ दे धोए।।317

खोज खोज के पाया, प्रभ तेरा नाम आपार।
जो सिमरे छिन एक पल, तिस चरनी बलहार।।

तुम बिन दूजा ना कोए, राखाँ किसकी टेक।
सरब कला समरथ तूँ, धारें रूप अनेक।।

सब जग तुमरा खेल है, तूँ वाज़ीगर अपार।
खेलें खेल बहु भाँत की, मोह्या कुल संसार।।

काल करम के जाल में, जकड़ा मन गँवार।
एक पलक की धीर ना, नाना करूँ विचार।।

आसा तृषना वेग में, नित रहे परबीन।
अनक जतन समझाया, सूझत ना बेदीन।।

अंधा गरब गुबार में, भूल गया सतधाम।
देख चक्कर संसार का, भरम का भया गुलाम।।

नित नमाना नित परदेसी, पल आवे पल जावे।
सत सरूप विसार के, नित मूढ़ा कूड़ कमावे।।

जगत बसन्त फूली फुलवाड़ी, दो दिन का समाचार।
मन ना सूझे अन्धला, बैठा पाओं पसार।।

झूठ काया मान धर, भोगे भोग अनन्त।
रनक मातर ना शान्ती, बिन सिमरे भगवन्त।।

जीवन का उपाय करे, मरना मूल विसार।
सकल अकारथ जात है, जब काल ने करी पुकार।।

नाती संगी बहु बने, अन्त छुड़ावन ताईं।
काया तजे प्रान जब, भयो सखा कोई नाईं।।

इन्द्री भोग की लालसा में, दीनो जनम बिताए।
अरब खरब धन संचया, अन्त निरासा जाए।।

जो देखा सो दुखिया, किससे करूँ विचार।
तृषना लागी अगनी, रोए कुल संसार।।

पछताए राम भाई मूरछाये, रोए सीता संग राम वँजाए।
रोए रावन अन्त की बारी, जब उजड़ी लंका दृष्टी आए।।

दशरथ रोए दे पुत्र बनवास, रोए बाली कुकर्म विचार।
रोवन पाण्डो जब राज वँजाया, नगन द्रोपदी होई दरबार।।

छत्रपती दरयोधन रोए, जब लश्कर भया विनाश।
रोए करन महा बलकारी, जब भूमि कीनो रथ ग्रास।।

रोए सिकन्दर और कारूँ, रोए बली महमूद।
छाड़ चले जब गंज दफीने, और रोए नमरूद।।

रोए जोगी समाध को छोड़े, प्रभ का हुकम विसार।
रोए पण्डत वेद का वक्ता, पावत ना तत्त सार।।

बड़े बड़े अभिमानी रोएँ, अन्त भए निरमान।
गरब प्रहारी एक प्रभ, नित जो सुख की खान।।

जिनाँ हर जस गाया, तिन का रोवन दूर।
दु:ख सुख एक समान भयो, जल थल परस हज़ूर।।

माया कूड़ पसार है, जो सेवे सो रोए।
'मंगत' हरखत साधजन, जो निर्भय धाम बसोए।।318

मुख से सिमरो नाम को, श्रवन करो तत्त ज्ञान।
हिरदे में माला फिरे, सतगुर शबद पहचान।।

बिनसनहारे जगत में, देख ना भूलयो मीत।
सब कुछ त्याग हरिचरन में, सुनयो सतगुर सीख।।

सखा संग ना को भयो, सुन ले मूढ़े चीत।
सतनाम जप उतरो, भवजल गहरी भीत।।

क्या जोबन क्या माल धन, क्या बड़ा परिवार।
क्या हकूमत देस की, सिर झूले छतर अपार।।

मटक मटक कर चालता, जोबनवन्त सरीर।
भया दीवाना बावरा, रोवत फिरे आख़ीर।।

सब कुछ सम्पत छाड के, चला अकेला अन्त।
मोहे बताओ मूरखा, कहाँ रही बनाई बन्त।।

इस सागर संसार में, कथन आया हरनाम।
वनज ये ही अनूप है, घालत हो बिसराम।।

स्वास स्वास हर सिमरिए, ये ही तेरी रास।
बिन सिमरे दम जो गया, सो दम जम घर वास।।

एह कथा विचार के, प्रभ नाम में रहो लवलीन।
काल करीड़ा करत है, एह तन कीजे छीन।।

तन धन सकला त्याग के, अन्त भयो नर राख।
उठ मूरख समाँ विचार के, हीरा हर को चाख।।

महल मंडप छाड के, ओढ़क जंगल बास।
चाम चरन्ते गीध नित, राख में उमगे घास।।

माटी से माटी मिला, ये तो असली बात।
माटी देख जो भूलया, सो बड़ा कमज़ात।।

तरवर रूपी जगत है, गन्ध रूप हैं साध।
जो परसे हरनाम को, ताँ का मत अगाध।।

भवसागर के तरन को, करम करे निषकाम।
आज्ञा प्रभ की में रमे, जापे निज प्रभ धाम।।

जीवन है दिन चार का, उठ सत सरूप विचार।
'मंगत' बिन हरि भगत के, सब ही कूड़ पसार।।319

क्या भरवासा देह का, पल में होए वँजोग।
घड़ी सुलखनी जानिए, जो सत शबद संजोग।।

देख ये रचना जगत की, क्यों मूढ़ मन भरमाए।
ना थिरता इस जगत की, ना देह थिरी रहाए।।

जिस दर बाजत नौबताँ, गज झूलें बहु शान।
उज्जड़ खेड़े हो गए, सब चल गए बेनिशान।।

छिनभंगर ये पिंजरा, छिन में गरद समाए।
ताँ सों समाँ विचार के, करो भगत मन लाए।।

ज़ोर जुलम दोनों तजो, आजिज़ हो दरवार।
सिमर नाम गोपाल का, सत सम्पत अपार।।

कहाँ सिकन्दर बिक्रमा, दुरयोधन मद मान।
कहाँ राम कहाँ रावना, नहिं देखत आए निशान।।

गुनी गए मुनी गए, साध तपोबल धारी।
सतसरूप केवल प्रभ एके, अगम शबद निरंकारी।।

वस्त अमोलक गुर दिखलाई, अगम धार अबनाशी।
मानुष जनम कदारथ होया, भरमन मिटी चौरासी।।

नित ही नित माँगो, सत्तनाम सत सेवा।
भाव भगत धर सिमर लो, पारगरामी देवा।।

इस मन को शान्त मिले, सतपद ले बिसराम।
अपने आप में आप समावे, लखे शबद का धाम।।

खेम कुशल पद जपो निरंजन, करें सन्त वेद पुकार।
'मंगत' ये ही सत सम्पता, जग जीवन धन सार।।320

स्वास स्वास हरनाम जप, जीवन सुफला होए।
काम क्रोध मल सब हरो, नाम साबुन ले धोए।।

सब साधन की साधना, सब गुनियाँ दा ज्ञान।
प्रेम भाओ अन्तर जपे, जीव पाये बिसराम।।

स्वास सुरत से पीविए, साचो नाम अगाध।
उलट कँवल परगासया, मिटी तृषना व्याध।।

सतनाम जग में सार है, और सकल असार।
प्रेम भगत अन्तर जपे, परसे पद निरधार।।

लाख करोड़ी सम्पत, छिन आवे छिन जाए।
इस्थिर नाम गोबिन्द दा, जो सिमरे सुख पाए।।

चार वेद खट शास्त्र पढ़े, निध्यासन बिन भरमाए।
मिटी ना मन की कामना, बाद बदे दु:ख पाए।।

तीरथ नहावे ब्रत को साधे, ज्ञान बिना अन्धकार।
मन की कलपन तब मिटी, जब गुर शबद विचार।।

मानुष देह दुर्लभ भई, सतनाम को खाए।
तृखा मिटी संसार की, पारब्रह्म रस पाए।।

बारमबार विचारयो, साचो नाम अनमोल।
मिरतक से जीवन मिले, पूरे गुर के बोल।।

इस सागर संसार में, सभी जीव दु:ख पाए।
क्या राना क्या रंक, क्या धनी अधिकाए।।

सम्पत जेती कीजिए, अन्त चले सब छाड।
आस अँदेसे में गए, अनक जीव परमाद।।

परसो नित सतसंग को, सुनयो हर का नाम।
दुर्लभ समाँ विचार के, कर लीजो हथ दान।।

पिंजर भूम समावसी, सुन्दरवन्ता रूप।
राजसिंघासन छाड के, मिले गरद में भूप।।

ऐसो ही एह चक्कर है, आवे जावे नीत।
'मंगत' सुफला जीवना, जब हरभगत परीत।।321

काया छीजत जात है, ज्यूँ बालू की भीत।
हर का नाम चितार मन, दुरलभ जग में रीत।।

धन जोबन ना थिर रहे, ना थिर रहे परिवार।
ना थिर रहेगा तन ये, काचा चाम मंजार।।

धरतर जाए पवन जाए, जाए पावक और नीर।
राजा जाए राना जाए, जाए गुनी गहीर।।

इस्थिर साचा नाम है, एह नित करो विचार।
पलक पलक कर सिमरिए, दुरलभ ऐसी कार।।

जो जनमे सो ही पछताए, राजा राना मीर।
वेद पढ़ता पण्डत रोवे, नहीं चित्त आवे धीर।।

अरब खरब का धनी रोए, और रोए बड़ा परवारी।
एक भगत बिन सब दु:ख पावें, देखो ज्ञान विचारी।।

बाल गया जोबन गया, जरा आई सिर धाए।
ओढ़क सभे छूट गए, तनुआँ ख़ाक समाए।।

क्या गत होई तेरी, जो बड़ा गुनी कहलाया।
'मंगत' साचे नाम बिन, जीव अन्त पछताया।।322

सागर ये संसार है, रूप सराये मीत।
कोट जीव नित आवते, कोट जायें नित नीत।।

माया मोह अन्धकार में, सभी पसारें पाए।
सम्पत सकली जगत की, अन्त छाड सभी जाये।।

जुगा जुगंतर खेल है, मारग ये संसार।
इस्थिर कोई ना रहे, बिना रूप करतार।।

आसा माहीं जग आये, चले निरासे अन्त।
प्रभ माया अपार है, नित दुखिये सब जन्त।।

और का मरना देखके, कर साजन सत विचार।
इक दिन ऐसे जायँगे, छोड़ कूड़ संसार।।

गुनी ज्ञानी औलिया, इस्थिर रहे नहिं कोए।
करनी जिनकी सुफल है, जग नाम तिनां दा होये।।

पूरो पूर नित आवते, जायें पूरो पूर।
सत करनी बिन जो गये, सो जग आये कूड़।।

मान मध को त्याग के, सुन साहब फ़रमान।
विच मुसाफ़त आयके, मत होइयो ग़लतान।।

चलन की नौबत बाज रही, नित रहो हुशियार।
ऐसी सम्पत खाट लो, जो अन्तकाल होवे सुखकार।।

सत करनी की खोज कर, जो अन्तकाल सुखदाये।
बिन करनी ये जीवड़ा, पावे घनी सज़ाये।।

सरजनहार दयाल को, नित राखो हिरदे माईं।
सुन पूरे गुर की सिखया, तीन काल सुख पाईं।।

सब जीवों पर मेहर कर, कहर जुलम को त्याग।
सरजनहार सो देखता, पल पल लेवे हिसाब।।

दुखियों का दुःख दूर कर, सतनाम चित्त धार।
सुफल होवे जग आवना, नीती ये विचार।।

रल मिल संगत रूप में, सत का करो विचार।
पावें सब कल्यान को, पाप कूप होये छार।।

मारग भगती सहज ये, भय करे सब दूर।
आज्ञा माने साहब की, पावे आनन्द सरूर।।

सब साजन मिल गाइयो, सत करतार भगवन्त।
'मंगत' करनी सार ये, परम शान्त देवे अन्त।।323

जग बेला फुली फुलवाड़ी, रंग रंग भौंरे आये।
फिरी रुत ख़ज़ाँ की मीता, कोई नैन देखत नहिं पाये।।

ऐसा जीवन जगत का जानो, ज्यों नदी नाओ संजोग।
जिस बिध करनी जो करी, तिसका दु:ख सुख भोग।।

उठ जाग मुसाफर साँझ भई, नित अपने पन्ध को काट।
दिन वतीत तो हो रह्या, फिर सिर आई रात।।

सत-साजन संग मेल करो, नित साची रास कमाओ।
दुर्लभ फेरा जग में पाया, नित लाभ जीवन का पाओ।।

जिस साजन ने बनत बनाई, नित तिस हुकम पछानी।
'मंगत' सो ही सुघड़ सयाना, सार जीवन तिस जानी।।324

कोट जीव नित आवें जावें, बिना भगत ना पावें ठौर।
तृष्ना अगन में नित ही जलें, नहिं सिमरें नाम हज़ूर।।

अपना भरम नित आप बन्धाई, अनमत जीव दु:ख पावे।
सत करतार ना हिरदे सिमरे, नित आवे नित जावे।।

साध-जनाँ की सीख नहिं लीनी, ना कुछ किया विचारा।
झूट वक्खर को संचत करके, उठ चलया वन्जारा।।

अपनी करनी भई दुखदाई, अब रोवत क्या होई।
जो कुछ किया सो निस्चे भोगें, पावें कभूँ ना ढोई।।

ऐसे सबने उठके चलना, साजन नाँगे पाये।
'मंगत' नाम सिमर प्रभ दाता, जो तीन काल सहाये।।325

जग सुहाना देखके, बड़े गुनी जन भूले।
झूट देही की आसा धारी, नित मन मूरख फूले।।

छिन छिन तंदी स्वास की टूटे, नहिं जन भेद विचारे।
मिथ्या भोग की राख परीती, अपनी करे उजाड़े।।

अन्दर तो शत्रू घने, बाहर करे रखवारी।
कोट खज़ाने लश्कर धारे, नहिं अनमत सूझ विचारी।।

मीत बनाके घात लगावें, नहिं चले कोई चतराई।
ओड़क जब देखी उजाड़ी, तब बहुता पछताई।।

कोई जन गुनियाँ बाज़ी खेले, सब शत्रु करे रन घाता।
'मंगत' निज सरूप समावे, जुग जुग रहे रँगराता।।326

अकथ कथा पावे सार। अदभुत का पावे विचार।।
निराकार का दरशन पाए। डोलन त्याग गुर चरन समाए।।
वडी वडियाई नहिं पारावार। अबनासी पाए गुर के दरबार।।
पूरी हिकमत पूरा हकीम। गुर उपदेस काटे भरम मुहीम।।
अमरत रूप आतम विचार। पावे शान्त मिटे वकार।।
रोते आए रोते जाएँ। राजे राने होए बे-थाएँ।।
कूड़ी दुनिया सम्बल का फूल। गुनी ज्ञानी गए सब भूल।।
अन्तर विख बाहरों रोशनाई। देख देख सब अचरज हो जाई।।
नित मिथ्या सत कर भासे। नित बिख अमरत सम चाखे।।
नित अंधकार अत घनेर। फिरें जन्त चौरासी फेर।।
सम्पत सकली अन्त को छोड़े। नज़री देख फिर विख को जोड़े।।
बाल जोबन जरा तन खाए। मूरख देख जोबन ललचाए।।
महल अटारी हाथी घोड़। चले अकेला अन्त सब छोड़।।
नित बिकार में रहे परबीन। भोग विकार में विरती लीन।।
भोगे भोग नित अशान्त। माया जाल अचरज भरान्त।।
लाख करोड़ी मन नहिं धीर। दर दर माँगें रंक मिटे नहिं तकसीर।।
बहु परवारी नित ही नित रोए। निर परवारी जीवन दुख में खोए।।
बैठ सिंघासन राजा हैरान। कठन कराल है काल का बान।।
सब ही रोएँ दिन और रात। धनी दलिद्री क्या गुनी गुनात।।
अचरज लीला धारी करतार। चारखानी में रहे आप भरतार।।
जिसको सतगुर मेला होए। शरधा प्रेम से चरन को धोए।।
सतसरूप का लेवे ज्ञान। पूरे गुर ज्यों करें बखान।।

नित ही निज साधन करे, गुर का शबद अगाध।
'मंगत' पावे परमगत, सुन गुर का सम्बाद।।327

रे मन जाग जप नाम सवेरा। दुरलभ पाया जग में फेरा।।
ये ही घड़ी सुकृत कर जानो। दीनदयाल की सेव पहचानो।।
झूटा संसा है संसार। मिथ्या कल्पत लागा विकार।।
छिनभंगर सब भोग की किरया। भोग-भोग नहिं मन सुख धरया।।
जीवन में तो बहुत मौज करीनी। अन्त समे की नहीं ख़बर लीनी।।
नाना सम्पत जो अपनी कर जानी। एक पलक में हो जाए बेगानी।।
किसका साक संग पुत्त धीया। किसका माल धन मुलखीया।।
किसकी जोरू किसके भाई। किसका राज तेज वडियाई।।
सुन्दर रूप तन तेरो नाहीं। अन्त त्याग करे तिस ताईं।।
मिरतक देही चली शमशाने। सब ही आवें अन्त इस ठकाने।।
कोई अगन लगाके फूँके काया। कोई भूमी अन्दर देह गड़ाया।।
हिन्दू जलावे तुरकू गाड़े। देख लीला नर हो हुशयारे।।
सब पर खेल खेले सो ग़ाज़ी। छूट सके ना पंडत क़ाज़ी।।
पीर पैग़म्बर नबी दरवेशा। काल सभी का लेवे लेखा।।
राजा छोड़ सिंघासन चाले। रानी गई छोड़ सेज बछाले।।
परवारी चला छोड़ परवार। धनी चला छोड़ गंज अपार।।
सब ही चले सब ही जाएँ। इस्थिर रहें न दुनिया माएँ।।
आवे जावे ज्यों रहट की घड़या। खाली जावे आवे नर भरया।।
कूच कूच की नौबत बाजे। काल कराल नित सिर पर गाजे।।

मुट्ठी बाँधे जगत में आए, खाली चले आख़ीर।
तृन मात्तर ना संग चले, सभी भए दिलगीर।।

हर का सिमरन जिस रास मन लेई। चले ठकाने छाडके देही।।
झूटी दुनिया तज सिमरे प्रभ नाम। पूरन करम भयो जीव पायो बिसराम।।

सिमरन साचे नाम का, दुरलभ कारज जान।
अन्तकाल पछताए सब, जब छाडे कूड़ जहान।।

मन तूँ साचा हो रहो, सिमर के साचा नाम।
'मंगत' विपता जग घनी, राम देवे बिसराम।।328

लोक कटुम्ब छाड के, आयो तुम्हारे द्वार।
सरन पड़े की लाज रख, तू साहब सरजनहार।।

बिपत घनी संसार में देखी। जनम मरन दुख अधिक वशेखी।।
सभे जीव रहें भयभीत। मेरो मेरी सब कूड़ परीत।।
बाला बूढ़ा और जोबनवन्त। सब ही देखे अधिक तिरखन्त।।
पण्डित ज्ञानी क़ाज़ी शेख़। काल पछाड़े सभी का भेख।।
नाचन कूदन खेल खिलाड़। समाँ गँवायो विच कूड़ विचार।।
हीरा जनम साहब ने दीना। बिना बन्दगी बन रह्यो कमीना।।
बन्दा होके ना बन्दगी कीनी। कूड़ी मौज में औध बतीनी।।
अन्तकाल होवे दुख भारी। काल मुगधर जब सिर पर मारी।।
यहाँ तो बैठे हो बन सरकार। आगे दरगाह में होवे धृगकार।।
यहाँ तो भोगे भोग मनमाने। आगे अगनी नर नरक पछाने।।
यहाँ तो बैठा हो वड परवारी। आगे लेखा केवल सिर भारी।।
यहाँ तो हूआ अरब खरब का वाली। अन्त को चला हाथ ले खाली।।
यहां तो हुकम सब पर फ़रमावे। अन्त को बाँधा विच दरगाहे जावे।।
यहां तो देखे ना कोई आप समान। अन्त को देखे जम अति बलवान।।
यहां तो हो बैठे जोबनवन्त। अन्त काल जम सहवे डन्त।।
मान गुमान छाडो गुनि मीत। सकली सोभा अन्त होवे बिपरीत।।
साधजनाँ का सुनयो फ़रमान। जिन्हाँ जीते तीन जहान।।
सबके ऊपर तिन का तेज। सबसे ऊँची लीनी तिन सेज।।
गवन विनास पायो सत ठौर। अमरत पीवें नित आनन्द अघोर।।
मन का संसा है संसार। सब ही मिथ्या बिना करतार।।
केवल राखो मन में तिस टेक। करो पछान तिसका सच लेख।।
हर की भगत कीरत मन राखो। दीन ग़रीबी का अमरत चाखो।।

बड़े बड़े मानी और, बड़े साहब तदबीर।
'मंगत' चाला ना चले, जब काल गरास शरीर।।329

अपने मन को नित समझाई। सत ठाकर की प्रीत ध्याई।।
भवजल दुस्तर से उतरे पार। साचा नाम जिस कियो विचार।।
मूढ़पना छोड़ अभिमान। साची भगत हिरदे पहचान।।
असगाह सागर ये जगत पसार। कारन करता भज करतार।।
तेरा जीवन तब ही सुखदाई। सत परतीत प्रभ एक ध्याई।।
साची सीख सुनो चित लाये। बिन हरि सिमरन नित दुःख पाये।।
उस घड़ी की करो पहचान। जब ये काया जले अगन मचान।।
उस घड़ी का करो विचार। जब त्यागें देही घरबार।।
उस पलक का करो ध्यान। जब निवास करें शमशान।।
वकत आखीर मन माहीं विचार। जब नर छोड़े भरे अम्बार।।
अन्तकाल की करो तैयारी। कोई ना संगी उस घड़ी विचारी।।
जब देह छूटी क्या गत होई। करो विचार जीवन ना खोई।।
काल कराल जब आन पुकारे। कौन सहायक होवे सुखकारे।।
जमकाल जब शासना देवे। कौन छुड़ाये मुग़दर जब सहवे।।
अती भयानक गरभ की जूनी। उलटा लटके करम भगूनी।।
कोई ना साथी उस रोज़ का होई। जब जमराज सिर आन खलोई।।
सकली वस्त होई बेगानी। चला निरासा जग से प्रानी।।
नाती सुत दारा परिवार। महल मण्डप द्रब्य अपार।।
हुकम हुकाम तजी जागीर। विच मुसाफ़त भयो दिलग़ीर।।

सब जग माया चक्कर में, तीन काल भरमाये।
'मंगत' उभरे सो गुनी, जो प्रभ चरन धियाये।।330

मिथ्या जग से पाया छुटकारा। अन्तरगत सतनाम विचारा।।
साची ओट मन लीन समाई। सरब सनातन सतनाम धियाई।।
जो देखा सो काल गरासी। करम विकार से फिरे चौरासी।।

चार दिनाँ जग जीना पाया। तिसको देख मन बहु पछताया।।
राजा राना गुनी गुनवंता। सब ही मोहे माया भगवंता।।
झूट वस्तु संग हेत लगाई। सरब तियाग अंत को जाई।।
सुख की रीत पाई नहिं सार। नाना भोग दु:ख लीने धार।।
झूट को देख नर फिर भरमाई। वाह वाह रचना माया रचनाई।।
मरन को देखे पर फिर भुलाया। मिथ्या भोग में नित गरसाया।।
कोटाँ कोट नित आवत जायें। पल पल घड़ी ये लेख लखायें।।
अपना मरन नहिं कियो पछाना। वाह भरमाया माया भगवाना।।
आवत जावत नित देखे अकेला। भरम का बाँधा फिर रचया मेला।।
कोई सखा ना होवत अंत सहाई। नौबत चलने की जब काल बजाई।।
कूड़ भरवास में जनम गँवाया। चलन की बारी नर बहु पछताया।।
तृन ना चलियो संग अंत की बारी। झूटे कोट और महल उसारी।।
दरब खज़ाना सब भयो बेग़ाना। चला मुसाफ़िर जग से हो नमाना।।
कूड़े भरम में गया भरमाई। माया मोह्या नहिं सार को पाई।।
रंग तमाशे सब कूड़ रचाए। अंत की बारी देह छार समाये।।
भरम बकार जो नित धारी। सोही करे नित जीव ख़्वारी।।
ना मोह नासा ना मारग सूझा। सार विसार भाया चित्त दूजा।।
खल बुद्धी नित भरम भरमाई। झूट भरवास में जनम गँवाई।।
अपनी करनी पर नर पछतावें। जम दरबार जब बाँधा जावें।।
जीवन में लियो होश सँभाल। पल पल लेखा लेवे दलाल।।
साची कीरत सतनाम को चेत। दुर्लभ करनी हरे भरम विखेप।।

माया भरम विकार में, नित ही जीव भरमाये।
'मंगत' भरमन तब मिटे, जब सतनाम चित्त गाये।।331

साची भगत आराध मन मेरे। हर के चरन में सुख घनेरे।।
जगत की आस तज हर ओट सँभाल। सरजनहार सो नित रछपाल।।
परम आनन्द नित परगासा। सिमर सिमर तूँ सो अबनाशा।।
कूड़ जीवन संसार में पाया। अंतकाल नर राख समाया।।
महल अटारी दरभ ख़ज़ाना। सबको छाडके चले अन्त निमाना।।
पुत्तर धीया नाती परवार। चले ना कोऊ संग मरती बार।।
बाती तेल ज्यों जोती परगासे। तेल निखुटा जोती विनासे।।
छीजे प्रान काया कुमलाए। भयो निमाना जाए भसम समाए।।
सोना रूपा बहु संचित कीना। भयो बिगाना जब काल ग्रस लीना।।
रे मन खोल तू अपने नैन। इस जग में कौन सखा कौन सैन।।
नदी नाओ ज्यों जीव पधारे। छिन में अपने अपने पंध सिधारे।।
चार दिनाँ जग जीवन मेला। अदभुत रचया प्रभ ने खेला।।
उठ रे मन होश सँभाल। बिन हरि सिमरन कूड़ जंजाल।।
झूटे लालच क्यों लिपटाया। सतसरूप को क्यों विसराया।।
जम काल लेवे देह गिरासे। छाड जगत चले अन्त उदासे।।
कहाँ से नर आया कहाँ तू जाये। विच मुसाफ़त क्यों भरमाये।।
एह जग रचना साहब फुलवाड़ी। देख ना भूलयो सुन बचन गुनकारी।।
क्या गुनी क्या ज्ञानी बल सूरा। काल करे सबका सिर चूरा।।

सत सागर का घूँट करे, पर्वत तली उठाए।
एक पलक की आन में, काल गयो तिन खाए।।

नाचन कूदन छाड मन मूढ़े। भगत पछान मिटें करम करूरे।।
अनक पाप करें दिन राती। अपने आप का बनें क्यों घाती।।
निद्रा त्याग उठ जागन जाग। साचा लेखा नित लिख वडभाग।।
साचा प्रीतम दियो विसार। छिन छिन जलें अगन अंगयार।।
धन जोबन का करें गुमान। एक पलक में उड़ें धूड़ समान।।

मूरख मन विचार कर, नित आनन्द सरूप।
'मंगत' बिन हरि भगत के, सब जग बिख का रूप।।332

बिख बीजे नर बिख ही खाए। बिख की आस में जनम गँवाए।।
अमरत नाम बिन रोए दिन राती। एक पलक नहिं चित्त शान्त समाती।।
कूड़ झंजट में नित गरसीना। काल का बाँधा नित भरमीना।।
अनँक विकार चित्त माहीं चितारे। खावे बिख पावे दु:ख अपारे।।
जितनी सम्पत उतना दु:ख भारी। नित ही दु:ख में फिरें परवारी।।
बड़े बड़े धन माल के वाली। अन्त चले नर ले हथ खाली।।
अपना सब कुछ नित बनावे। होवे बिगाना जब जम गरसावे।।
कौड़ी कौड़ी जोड़े धनवादी। छाड ख़ज़ाना चले अपराधी।।
दुष्ट करम कमाए दिन राती। बिना भगत मन पाप ही थापी।।
विषे भोग भोगे मनमाने। मरन विसार भयो ग़लताने।।
कूड़ देही का बहु साँग बनाए। निकले प्रान छिन राख समाए।।
तुच्छ जीवन का क्यों करे गुमाना। रहन ना पावे कोउ राजा राना।।
कहाँ दुर्योधन छतर सिर धारी। सोलह जोजन जाँकी झलक झलकारी।।
कहाँ शिशपाल भीम बलवान। कहाँ अर्जुन कहाँ तिसके बान।।
कहाँ रावन जिस काल बँधायो। कहाँ राम जिस अवतार कहलायो।।
कहाँ धनंतर कहाँ अश्वनी कुमारा। कहाँ कंस कहाँ जरासिंध दुलारा।।
कहाँ भीषम कहाँ द्रोन आचारी। कहाँ करन अती बलकारी।।
कहाँ विक्रम सिकन्दर दारा। कहाँ मुगल कहाँ गौर बलधारा।।
कहाँ ज्ञानी ज्ञान तत्तवादी। कहाँ योगी जो लाएँ योग समाधी।।
जो आए सो गए समाए। चक्कर काल का अगम अथाए।।
समय पाए विरंच विनासे। समय पाए शिव को काल गिरासे।।
समय पाए विषनू देह त्यागे। छूट सके ना कोई काल के आगे।।
धरती जाए जाए पवन और नीरा। जाए अम्बर पावक खीरा।।
समय आए सब लीन समाए। साचा रूप रह्यो राम अगाये।।

सब जग काल सरूप है, छिन छिन रूप वटाए।
'मंगत' साचा सो प्रभ मेरा, जो वाधा घाट नहिं पाए।।333

अमरत अन्तर बाहर बिख खाई। मोह वस होके आवे जाई।।
कह कारन तूँ जीवन जीवे। सार असार का निरनय लीवे।।
कहाँ से आया कहाँ समाई। कौन मारग कौन लेख लखाई।।
देह पिण्ड तेरा किसने साजा। खोज करो जो तुद माहीं बिराजा।।
बोलनहार का करो विचार। दुर्मत माया का मिटे अन्धकार।।
साखी पुरख का लेख लखाओ। भरम गुबार का होवे अभाओ।।
निरमल तत्त नित करो विचार। बन्धी छूट पावें सुख सार।।
देह के सुख में क्यों गरसाया। देह विनास सुख कहाँ समाया।।
देह की ममता क्यों नर धारी। छार समावे अन्त की बारी।।
अकड़ अकड़ पग भूमी धारें। मल मूत्तर की नहिं खान विचारें।।
जैसा आया तैसा जायें। संग सखा तेरा कोई जग नायें।।
अपनी देही तेरी ना होई। और मितर संग कौन चलोई।।
अन्धमत त्याग खोज विवेक। सरजनहार का नित लख लेख।।
अन्त की बारी नर पछताना। छाड जायें जब बाग़ सुहाना।।
साचा पुरख जीवत में पेख। सतपुरषों का सुन ये लेख।।
आतम शकत खोज विचार। परसे नाद परमसुख सार।।
सो ही तेरा जीवावनहारा। साखी पुरष सो ही भरतारा।।
नित ही तिसमें निश्चय राख। साधजनाँ की रसना चाख।।
झूट देही का मोह तियाग। आतम खोज पुरख वडभाग।।

देह की ममता ना मिटे, जो जुग चारे भोग।
'मंगत' मिथ्या भरम में, लागे दीरघ रोग।।334

कूड़ भरम में क्यों नर भूला। काल झुलावे सबको झूला।।
झूट देही ले जग में आया। सत आतम का भेद नहिं पाया।।
झूट देही सो झूट हो गई। मूढ़मती बिरथा दु:ख सही।।
झूट देही संग जो करी परीती। अन्त की बार भई दु:ख रीती।।

किस वस्तू का मान तूँ राखें। सरजनहार जो नहीं चित्त भाखें।।
हाड माँस नाड़ी का पिंजर। पाँच तत्त का धारा मन्दर।।
किस वस्तू का मान तूँ राखें। मिथ्या भोग में दुख को भाखें।।
समाँ पाये देह नष्ट हो जाये। तेरी हिकमत चले कछु नाये।।
रोता आया जाये पछताये। राजे राने गुनी गुनराये।।
अपना जीवन करो विचार। झूटी देह रहे दिन चार।।
सत तत्त आतम खोज आनन्द। काल करम से छूटे जिन्द।।
मन की तृखा सकल विनासी। जो चित्त ध्यावें शबद अबनाशी।।
अमोलक समाँ नहिं पलक गँवाओ। आतम खोज परमसुख पाओ।।
मान गुमान जो इच्छया धारी। अन्तकाल होवे देह छारी।।
कोई वस्तू इस्थिर नाहीं। किस वस्तू का मान लखाईं।।
धन परिवार ना इस्थिर रहाई। सुन्दर देह छिन राख समाई।।
तृष्ना रोग नहिं मिटने पाये। एह बिध कोट जनम भुगताये।।
बिना ज्ञान ना शान्त पायें। पूरो पूर नित आवें जायें।।
सतसरूप जिस सही पछाता। गवन तियाग शबद रँगराता।।

सत शबद जिस जानया, पल पल प्रीत कमाये।
'मंगत' सो निस्तर भये, भरम जाल असगाहे।।335

अनन प्रीती से प्रभ ध्याओ। दुरलभ सार जगत में पाओ।।
प्रभ का सिमरन प्रभ की सेवा। सदा दयाल होयें देवन देवा।।
नित ही नित तूँ सरन पछान। मिथ्या मोह में क्यों ग़लतान।।
तेरा जग में कोई ना होई। अपने सुख में सभी फरोई।।
बारी बारी चलें अकेले। मूढ़ मनाँ तूँ आया मेले।।
मेला देख ना प्रभ बिसराई। साध सीख सुनो चतराई।।

सरजनहार ठाकर नित चेत। गरस सके ना मोह वखेप।।
अपना साहब जो दिया विसार। पलक व्यापे अत मोह विकार।।
ताँ सो मन में धार चतराई। पलक ना विसरे ठाकर सुखदाई।।
अती भयंकर बाज़ी जग मीता। त्रास त्रास में गुनी गुनीता।।
शान्त सरूप पायें नहिं सार। नित आवें धर मोह अन्धकार।।
कूड़ी सम्पत करें सम्भाल। अन्त चलें सब छाड जंजाल।।
मूरख जीव नहीं तृपताई। अदभुत देखे जग रचनाई।।
इक आवे इक जावन जाई। झूट धीरज ये मन बन्धाई।।
अपने चलन की करो तैयारी। साची रास प्रभ नाम विचारी।।
बरामबार सिमर सुख देवा। पारगरामी की धारो सेवा।।
प्रभ विसार माया लिपटाया। साखी छोड़ भरमे बिच छाया।।
नैन खोल के होश सम्भाल। साचा मारग धरम का भाल।।
करनी निर्मल कीजो नित नीत। साध-जनाँ की सुन सत सीख।।

जगत सराये में आया, तूँ मुसाफिर मीत।
'मंगत' निर्मल ध्यान से, साची पालो प्रीत।।336

कौन तेरा तूँ किसका होई। आज्ञा प्रभ में चक्कर चलोई।।
आये अकेला जायें निहसंग। रचयो मेला झूट परसंग।।
साची शकती खोज निधान। अन्त ना पावें दु:ख नादान।।
निश्चय चलना इक दिन मीत। सत ठाकर के गाओ गीत।।
निश्चय त्यागें सब परिवार। महल अटारी घने अम्बार।।
ओढ़क देही छार समाई। मूरख जीव क्यों लिपटाई।।
साचा नाम खोजो सुखरासी। जो जग में होई बन्ध खुलासी।।
मूढ़मती तूँ मन की छोड़। झूट सयानफ़ चित की तोड़।।
अपना अगला राह सँवार। अन्त की बारी होये सुखसार।।
सरब मिथ्या जगत पसारा। त्रैगुन माया का चक्कर अपारा।।
भरम में बान्धा जीव भरमाई। कूड़ भरोसे परम दु:ख पाई।।
अनक सयानफ़ धारी नीत। कूड़ की पाली निरमल प्रीत।।

रोवत आयें रोवत जायें। कूड़ जगत में नहीं सुख पायें।।
साची सीख सुनो बुद्धिमाना। बिन प्रभ सेव नहिं पायें ठिकाना।।
और की छोड़ तूँ अपनी विचार। साची करनी हिरदे धार।।
सत्तसरूप नारायन चेत। अन्तरगत लख तूँ सत लेख।।
भरम ग़ुबार की आँधी जाई। इस्थित पावें जप नाम अगाई।।
नाम रतन नित हिरदे जाप। संकट मिटे पावें परताप।।
ऊँच गियाई नाम भगवन्त। पल पल माहीं हिरदे जपन्त।।

झूट भरोसा त्याग कर, सत मारग को भाल।
'मंगत' पल पल सिमर लो, प्रभ साचा दीनदयाल।।337

अगन सरूप ये जग का खेला। जल जल पड़े ये जीव दुखेला।।
वारापार ना भेद लखाई। माया भरम में खप खप जाई।।
बिना जतन नहिं मिले छुटकारी। राजे राने पावे ख़्वारी।।
काल सरूप ये जग की रचना। छिन छिन नासे केवल ये सुपना।।
अपना साखी रूप विचार। मृग तृषना मिटे अन्धकार।।
सत ठाकर की प्रीत विचार। सतपुरषों की ये सिखया सार।।
जगत का खेल ये भरम फुलवाड़ी। सिमरो गोबिन्द उतरें भव पारी।।
ना कोई साक सुहेला नाती। अन्तकाल ना भयो कोई साथी।।
अत परिवार सम्पत धारी। महल कोट औसारे भारी।।
सब कुछ छाड चले निरासा। मूढ़मनाँ क्यों धरें भरवासा।।
अन्तरमुख होकर विचार। खाली आया जावें खाली सार।।
रंचक साथ ना जाई मीत। जुगाजुगन्तर ये जग की रीत।।
दाने बीने बड़े सयाने। माया चक्कर में भये हैराने।।
जीवत में मरने को पाई। वाह वाह खेल ये जग रचाई।।
भोगे भोग नहिं तृप्ती पाये। सदा अधीर ये मनुआँ समाये।।
वस्त परापत हिरखत पाई। भई वंजोग दुःख पाई अधिकाई।।
भाई मित्तर बहु संग बनाये। ओड़क चलया नाँगे पाये।।
माया मोह में जनम गँवाई। बाज़ी जूए में गयो ठगाई।।

ओड़क देही भूम समाये। मूरख जीया क्यों भरमाये।।

सरब जतन संसार में, मन को करें अधीर।
'मंगत' प्रभ की भगत से, मिटे सकल तकसीर।।338

अत संकट संसार का खेला। प्रभ माया का अचरज मेला।।
इक आवे इक जावे नीत। रूप सराये जग की रीत।।
इक जाये रोता इक मान लखाई। अन्धमत मूढ़ नहिं सार धियाई।।
कहाँ से आया कहाँ अन्त को जाना। इस मारग का कौन ठिकाना।।
देह के मद में रहे ग़लतान। करनी साच नहिं करी पछान।।
झूट भरवासे धीर बंधाया। ओड़क जग से निरासा जाया।।
अपनी देही नहिं साथ निभाई। कौन सखा होवे सुखदाई।।
जैसी करनी सो पाई रास। बहु पछताये कूड़े भरवास।।
अब कुछ बनत बने ना मीत। कियो विचार सब दु:ख की रीत।।
जीवत में कुछ सार नहिं ध्याई। अब रोवत कछु हाथ न आई।।
जो कुछ किया सो करो सम्भाल। आगे लेखा लेवे दलाल।।
सब पर खेल खेलेगा काल। नैनाँ खोल तू देख अहवाल।।
अपना जीवन करो विचार। ओड़क रास जो हो सुख सार।।
मानुष जीवन दुरलभ मीत। साचा सुख तूँ खोज पुनीत।।
माया भरम में ना भरमाओ। सतपुरषों की सीख लखाओ।।
दुरमत रोग लागा वड भारी। सतगुर वैद खोजो सुखकारी।।
दुरमत रोग का उपाये दिखलाये। साची औखद पान कराये।।
रोग विनास बुद्ध निरमल होवे। साचे सुख की तब सार परोवे।।
जनम मरन का भय विनासी। दुरमत नास पायो अबनाशी।।

साचा धाम विचारयो, जाँ जनम मरन नहिं लेश।
'मंगत' सुख आपार सो, कोई गुनी करे परवेश।।339

वाणी का महत्व तथा सार

समता तत्त बानी परगट भई, सब सिद्ध मुनी तृपताये।
सुन रसना निर्मल ज्ञान की, चित्त प्रेम समाध लखाये।।

सत सरूप की अचरज महमा, तत्त बानी भेद विचारी।
निर्मल चित्त से श्रवन करे जो, सत मारग ज्ञान पधारी।।

भरम भय का नास करे, तत्त आतम पाये विशवासा।
बुद्धी निर्मल सत धर्म विचारे, घट शबद होए परकासा।।

भरम का खण्डन सत का मंडन, तत्त बानी ज्ञान समझाई।
पढ़े सुने कीजे निध्यासन, सो जीव परमपद पाई।।

जीवन सार परापत होवे, नित निरमल मारग बोधे।
सकल विकार विखेपत नासे, जो बानी रसना सोधे।।

निर्भय ज्ञान अन्तर परकासे, सब मोह माया भ्रम दूरे।
सत्त सील संतोख चित आवे, जप उस्तत पुरख हज़ूरे।।

आलख सरूप अजर अबनासी, चेतन परकाश बिसमादी।
अनन प्रीत से भगत कमावे, सब मन की मिटे वियाधी।।

मारग सहज बानी समझावे, सब धरम करम की नीती।
दृढ़ निश्चय जो सार विचारे, नहिं परसे भरम कुरीती।।

बन्ध मुकत का भेद पछाने, नित समता रसना खाई।
सकल मनोरथ तिसके पूरे, जो अर्थ सार लख पाई।।

देह ममता का त्याग करे, तत्त आतम प्रीत लखाये।
जीवन मुकत आनन्द को पावे, सब मन की तपन बुझाये।।

एक आतम का होवे विशवासी, चित्त परसेवा नित धारी।
पोथी पाखान मढ़ी नहिं पूजे, सो समता ज्ञान विचारी।।

अन्तर चित्त सतनाम निध्यासे, नित शबद की रसना खाये।
पर-उपकार में तन मन अरपे, नहिं बौहढ़ गरभ को पाये।।

मानुष जनम की कीरत निर्मल, जो सतसंग का मिले पियार।
रलमिल संगत प्रभ उस्तत गाइये, सब कलह कलेश होयें छार।।

एक आतम सब माहीं परकाशे, इत उत जो रचनाई।
सरब जियाँ संग हेत लखाये, सत धरम पाए वडयाई।।

जीवत में सत करम कमाये, पर सुख नित चित्त धारे।
स्वारथ भरम का होए विनासा, परमारथ निर्मल सार विचारे।।

नित ही बुद्धी होवे सुतन्तर, सत तत्त प्रेम लखाई।
अन्तर बाहर नाम तत्त सूझे, इक लखे साहब प्रभताई।।

अगोचर ज्ञान पुरख अनादी, तत्त बानी लेख विचारी।
गुरमुख जीवन जग में परसे, पाए जनम मरन छुटकारी।।

अबगत पुरख की महमा सूझे, नित मन पावे परसन्ता।
जग जीवन की सार पछाने, इक सिमरे पुरख बेअन्ता।।

प्रभ की आज्ञा दृढ़ कर ध्याये, ज्यों साहब वरतावे।
सत साधू की प्रीत पछाने, दु:ख सुख में धीर लखावे।।

समता धरम का जीवन पाये, सब बादमुबाद होए नासा।
मन अपने को निर्मल कीजे, तत्त ज्ञान पाये परकासा।।

अन्तरगत में चानन होए, हरजन निर्भय धाम समाये।
'मंगत' नित आनन्द प्रभ, घट सिमर सिमर सुख पाये।।340

आरती एवं समता मंगल

आरती

तूँ पारब्रह्म परमेश्वर, तीनकाल रछपाल।
नित पाऊँ शरनागती, सत चरन कँवल दयाल।।

तूँ नित पतत उद्धार है, पूरन प्रभ जगदीश।
मोह माया संकट हरो, दीजो ज्ञान सन्देश।।

नित ही तेरे चरन की, मन में रहे परीत।
तूँ दाता दातार है, पुरखोत्तम सुखरीत।।

पवन पानी बैसन्तर, धरती और आकाश।
सबको सरजनहार तूँ, आद पुरख अबनाश।।

घट घट व्यापक तूँ परमेश्वर, सरब जियाँ आधार।
अनमत कूकर को राख लें, किरपानिद्ध करतार।।

काल करम जाये दूषना, खल बुद्धी हरो अज्ञान।
सत शरधा पाऊँ चरन की, अखण्ड प्रेम चित्त ध्यान।।

दीनानाथ दयाल तूँ, पल पल होत सहाये।
कीरत साचे नाम की, मन तन आये समाये।।

अन्तर का सब खेद हरो, दीजो सत विशवास।
शरनागत हूँ मन्दमती, घट अन्तर करो परकाश।।

अन्तरगत सिमरन करूँ, निरन्तर धरूँ धियान।
घट घट में दर्शन करूँ, आद पुरख भगवान।।

तूँ साचा साहब सरब परकाशी, शबद रूप अखण्ड।
गुनी मुनी उस्तत करें, तन मन पायें आनन्द।।

होवें दयाल तूँ सत परमेश्वर, देवें धीर आपार।
निमख निमख सिमरन करूँ, चित्त चरन रहे आधार।।

काया अन्तर परतख होवे, नाद रूप बिसमाद।
पल पल कीजूँ आरती, तन मन तजूँ वियाध।।
जग आवन सुफला होवे, तेरी आज्ञा मन में ध्याऊँ।
अन्तरगत करुँ आरती, भव दुस्तर तर जाऊँ।।
अन्धमत मूढ़ा नितप्रती, तेरे चरनी करे पुकार।
'मंगत' माँगे दीनता, सत धरम सुख सार।।341

समता मंगल

समता धरम हिरदे रसे, बिख ममता होवे नाश।
सत सरूप परमातमा, जल थल पाऊँ परकाश।।
सब जीवों से प्रेम हो, तन मन सेवा धार।
समता साधन पाये के, नित परसाँ जै जैकार।।
सत करम सत निश्चय, निरमल पाऊँ विचार।
'मंगत' समता धार के, जीत चलो संसार।।342

शब्दार्थ

अ

अबगत - गति रहित
अनूप - अनोखा, बे मिसाल
अतुल - जिसकी तुलना न हो सके, अप्रमाण
अरदास - प्रार्थना
अकथ - अवर्णनीय
अकरम - निष्काम कर्म
अज - अजर, बिना परिवर्तन वाला
अखेवा - अविनाशी, अवर्णनीय
अलोप - अदृश्य, छिपा हुआ
अलेप - जो लिप्त न हो
अगाध - असीम
अपरम - जिसका पारावार नहीं
अभेद - जिसका भेद न पाया जा सके
अनामी - जो नाम के बन्धन में न आए
अजर - एक रस रहने वाला, जिसको जरा अवस्था प्राप्त नहीं होती
अबनास - जिसका नाश न हो
अछेद - जिसको कोई जीत न सके
अगोचर - इन्द्रियों के अनुभव में न आने वाला
अमीरस - जिस रस को पीकर अमर हो जाए
अगाहे - अथाह
अलबेला - मनमौजी (अनोखा), मूर्ख जैसा
अनहद - सीमा रहित
अचिन्त - जो चिन्तन में न आ सके
अद्वैत - द्वैत रहित, केवल वही, एक के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं
अच-पच - अकल्पनीय
अहवाल - हालत
अनाद - पाँच तत्व तथा पच्चीस
अनील गुणों के बन्धन से दूर अर्थात ईश्वर
अनाद - आदि अंत रहित
अधम - नीच
अरश - अर्श, आकाश
अबदी - सदा रहने वाली
अजूनी - योनि रहित, अजन्मा
अगनहोत्तर - हवन
अमोलक - बहुमूल्य
अभेवा - अभय
अकलीम - मुल्क
अनीता - अधर्मी
अच्छर - अक्षर, अविनाशी
अनन - अनन्य, जिसमें अन्य न हो
अबनाश - अविनाशी
अखय - अक्षय, जिसका नाश न हो
अत - अति
अम्बर - आकाश
अनमत - अंधमति, मूढ़
अगन - आग
अनक - अनेक
अचरज - आश्चर्य
अलपना - अलेप
अगम-निगम - शास्त्र, वेद
अजलाश - समूह
अस्थावर - वनस्पति, अचल
असरार - भेद
अनखुट - बहुत अधिक, न समाप्त होने वाला
अनवर्चित - अवर्णनीय
अन्देसा - डर, भय

अनासुरत - असोच
अथाई - अथाह
अलूम - विद्याएं
अफयून - अफीम
अस्तर - औजार, हथियार
अशनाई - मित्र
अरूप - जिसका रूप नहीं
अक्रह - अकर्ता
अकानत - एकान्त
आपारी - जिसका पारावार नहीं, जिसकी सीमा नहीं
आदेश - प्रणाम
आध-ब्याधी - रोग-सोग
आलख - अदृष्य
आन - अभिमान
आराध - पूज
आपामत - अहंकार
आखिए - कहिए
आपा - अहंकार
आजजी - दीनता
आध - रोग
आब - पानी
आतिश - आग
आफताब - सूर्य
आद - आरम्भ, युगों से पहले
आजार - दु:ख
आपद - आपत्ति
आठ अट्ठारा- आठ-पाँच भूत,मन बुद्ध‍ि, अहंकार। अट्ठारा-पाँच कर्म इन्द्रियाँ, पाँच ज्ञान इन्द्रियाँ, पाँच तन्मात्राएं, मन, बुद्धि, अहंकार।
आंकुश - अंकुश, हाथी के सिर पर मारने पाला शस्त्र
आरजा - प्रार्थना
आपत - आपत्ति
आबेहयात - अमृत
आखूआँ - अखण्ड
आपाध - दु:ख
आगाज - प्रारंभ
ओट - सहारा, आश्रय
ओढ़क - अंत, आखिर
औसारा - बनाया
औखद - औषधि
औघट - कठिन
औखी - मुश्किल
औगन - अवगुण
औसर - आयु
अंजन - प्रकृति, माया
अंगूरी - अंकुरित
अंडज - अंडों से पैदा होने वाला जीव
अंजली - चुल्ली (हाथ में जितना पानी आता है)

इ

इकबाल - प्रधानता, बड़ाई
इलहाम - आकाश वाणी, ईश्वरीय वाणी
इकान्त - एकान्त, सुनसान जगह
इलाही - भगवान, परमात्मा
इजराईल - यमराज के दूत यमदूत
इलम - इल्म, विद्या
इरध-उरध - नीचे-ऊपर
इत-उत - इधर-उधर
इसरार - भेद
इक - एक
21600 मनियाँ- 24 घंटो में स्वासों की गिनती

उ

उपमा - उदाहरण, प्रमाण
उजागर - जाहिर, प्रगट
उद्यम - मेहनत, हिम्मत

उपरस - इन्द्रियों के रस से बेलगाव
उषण - गर्म
उम्मत - सम्प्रदाय, इस्लामी समाज
उपाध - प्रकृति का कोप
उनमुन - संकल्प विकल्प रहित अवस्था
उमगे - उठे, उगना
उसारे - बनाए
उघ्यान - उद्यान, बगीचा
उपरामी - अशान्त
उलहासे - प्रकाशवान है
उगाड़ी - ताला खोलना
अदभुज - पेड़ पौधे (जमीन से पैदा होने वाले)
उस्तत - स्तुति

क

कराल - भयकारी
कन्द - मीठी
कथना - कहानी, कहना
करूर - कराल, पाप कर्म
करतार - ईश्वर
कला - हुनर
कलपत - कल्पना
कजा - मौत
कलमा - वचन
कफार - प्रायश्चित
कलपना - मन का फुरना
कलबिख - विषैली कल्पना
कमजात - नीच
कदारथ - कृतार्थ, निहाल
कल्लर - जो लाभकारी न हो, जो भूमि उपजाऊ न हो
कलबूत - पुतला
कन्त - पति
कतेब - धार्मिक पुस्तकें
काल-कलौ - काल-चक्र
करड़ा - मलीनता, कठिन
करारी - अशान्ति
कलोल - खेलना, खिलाना
कारज - कार्य
काची - कच्ची
कादिर - ईश्वर, प्रकृति का मालिक
कार - कार्य, करनी
काढ़े - उतारें
काफर - काफिर, नास्तिक
कासा - प्याला
कामन सयानी - बुद्धिमान पत्नी
किरपाल - कृपा
किरया - कर्म, क्रिया
किलारा - कमल का विकसित होना
कित - किधर, कहीं
किंगरी - बीन, सितार, नाद की ध्वनि
कीरत - कीर्तन
कुटलाई - कठोरता
कुलेल - चलना (रुचि के साथ)
कुपथ - बदपरहेजी, कुमार्ग
कुतेब - धार्मिक किताबें
कुलवन्त - कुलीन
कुफर - झूट, कमीना
कुसत्त - असत, पाप
कुठाला - मुश्किल, कठिन
कुंट - दिशाएं
कुच - स्तन (दूध पिलाने का)
कुलीन - बाहरी पवित्रता, शिष्ट
कुफल - ताला
कूप - कुआं, ढेर
कूड़ - झूट
कूकड़ी - मुर्गी
कोह - पहाड़
कौतक - खेल

केरा - का
केते - कितने, बहुत
केहर - जुल्म

ख

खल बुद्धि - दुष्ट बुद्धि, मलीन बुद्धि
खप-खप - पच-पच, भटक-भटक कर
खलकत - संसारी जीव
ख्वाहिश - इच्छा
खट्टे - कमाई करे
खट-दर्शन - छै शास्त्र
खडाए - खेल खिलाना
खण्डा - तलवार
खसलत - आदत, स्वभाव
खुमर - खुमारी
खलकामी - बुरी कामना वाला
खवार - परेशान होना, भटकना
खबर गुजारी - खबर लेना, खोजना
खलोई - खड़ी हो गयी
खट - छै
खय - क्षय, नाश
खलक - खलकत, जीव-जन्तु
खालक - ईश्वर
खारी - कर्मों की दूषना या मैल
खादिम - सेवक
खाट - कमाई कर लो
खाण्डे - तलवार
खामी - कमी
खातून - औरत, नारी
खिवनी - क्षमा भाव
खिमा - क्षमा
खिजाँ - पतझड़
खुलासी - छुटकारा
खुवारी - परेशानी
खुदिया - भूख
खुँब - वस्त्र साफ करने की विधि, सफेद
खेद - दु:ख
खेड़, खेड़े - खेल, खेलना
खेही - राख
खेवट - नाव चलाने वाला
खोडस - षोडस, सोलह (16)

ग

गत - गति, हालात
गरसावे - ग्रसित, फंसा हुआ
गम - गमता, पता, पहुँच, दु:ख
गफलत - लापरवाही
गवन - जन्म-मरण
गनीम - दुष्मन, शत्रु
गहीरा - अधिक गुणों वाला
गजब - गुस्सा, क्रोध, अजीव
गण्डे - जोड़ना
गरामी - जो सृष्टि से परे है
गरूर - घमण्ड
गमता - पहुँच
गरब - अभिमान
गरभ - अहंकार, गर्भ
गरद - धूल
गत मित - मितभेद
गलतान - निमग्न
गदा - भिखारी
गादी - गला देना (सत्कर्म में लीन करो)
गाम - ठिकाना
गादीपत - गद्दी का मालिक
गाधी - गद्दी
गाफिल - भूला हुआ
गुमान - घमंड, अहंकार
गुबार - गर्द, धूल
गुरबत - निर्मानता
गूड़ा - घना, गाढ़ा

गेड़ - चक्र
गैब - जो देखा न जाए
गोहर - मोती (सच्चा)
गंज - खजाना

घ

घनेरी - गाढ़ी, घनी
(पुरख) घनैया- परमात्मा
घड़ीने - घड़ दिया, बनाए
घाती - मारने वाला (घातक)
घँड़ियार - गद्दी दार गुरु
घाल - कमाई सत् की

च

चराचर - स्थावर जंगम, चर अचर
चार पदारथ - धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष
चरंजीव - अमर
चकरवर्त - सब दुनियाँ का राज्य
चारखानी - अण्डज, जेरज (पिण्डज), उद्भिज, स्वेदज
चार कुण्ट - चारों दिशाएं
चाख - चखना
चारबानी - परा, पश्यन्ति, मध्यमा, बैखरी
चार, अठारह- चार वेद, अठाहर
नौ - पुराण, नौ स्मृतियाँ
चार चौदां - चार अवस्थाएं-जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरिया।
चौदह - पाँच ज्ञान इन्द्रिया, पाँच कर्म इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि चित्त, अहंकार
चितार - याद कर
चीने - जानना, पहचानना
चीता - शेर की जाति
चुनारा - उत्पन्न करना
चूके - समाप्त हो जाए
चोग - प्रेम की धारणा
चोवे - टपकना
चौदस चन्दर- चौदहवीं का चाँद
चौदां लोक - पाँच ज्ञान इन्द्रियाँ, पाँच कर्म इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार।
चौगान - खेल (पोलो), नाम का सिमरण
चौंप - लगन
चंगेरी - अच्छी

छ

छतर - राजा के सिर पर तानने वाली छतरी
छर - क्षर, नाशवान
छरे-छरावे - नाश होने वाला
छार - राख
छांड - छोड़ना
छीना - मिट जाना, नाश हो जाना
छीर - दूध
छिन-छिन - क्षण-क्षण

ज

जरा - बुढ़ापा
जकात - दान
जलाल - प्रकाश
जबत - काबू कर लेना
जन्नत - स्वर्ग
जनत - जन्त, जीव, स्वर्ग
जस - यश
जहूरा - जाहिर होना
जती - यती, सन्यासी
जतन - यत्न
जन्त - जीव

जामी - चोला, जन्म
जाता - जान लिया
जावेद - हमेशा (जीवन दे रहा)
जानाई - ज्ञान
जामनी - जमानत
जात - जाति
जिकर - कहना
जीया - जीव
जुगत - युक्ति
जून - योनी
जोजन - योजन
जोवे - पाए (ढूँढ कर)
जोत - ज्योति
जोवन - यौवन
जोए - पैदा करता
जंत - जीव जन्तु
जंगम - चलने वाले

झ

(दु:ख) झागी- सहन करना पड़ता है
झूरा - दु:ख, संताप

ट

टहल - सेवा अर्थात् स्मरण ध्यान
टाटी - परदा
टाटरी - परदा
टेक - आश्रय, सहारा

ठ

ठाके - रोके
ठाम - ठिकाना
ठौर - ठिकाना

ड

डहकाए - भटकाए
डीठ - दर्शन

ढ

ढहकाई - भटकना
ढोई - ठिकाना

त

तकसीर - गुनाह, पाप कर्म
तजो - छाड़ो
तरासा, तिरास- डर
तकबीर - मन्त्र, कलमा
तदबीर - उपाय, तरकीब
तसब्वर - ध्यान, ख्याल
तसबी - माला
तमा - लालच, लोभ
तरीकत - तरीका, युक्ति
तबक - मुसलमानी शरह अनुसार सात जमीन और सात आसमान के स्तर
तरबेनी - त्रिबेणी, त्रिकुटी
तरवर - वृक्ष
तरावत - प्रेम अश्रु
तहकीक - खोज
तसबीह - माला
तग, तज्ञ - फाँस
तरक - छोड़ना
तास्सुब - द्वेष
तारीकी - अँधेरा
ताता - गर्म
तिरखाया - प्यासा तृष्णा से
तिमर - अंधेरा
तिरिया - स्त्री, नारी
तिरास - भय
तीन काल - भूत, वर्तमान, भविष्य
तीन ताप - आधि, व्याधि, उपाधि

तीन भवन - पृथ्वी, आकाश, पाताल
तीखन बाट - कठिन रास्ता
तीन अवस्था - जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति
तुद माई - तेरे अन्दर
तुट्ठा - दर्शन पाया
तुल - समान, बराबर
तूर - शब्द की ध्वनि
तेग - तलवार
तोड़ - आखीर, अंत
तोबा - प्रायश्चित
तोसा - सफर का सामान, संतोष
तौक - हार, गले का जेवर
तौरेत - यहूदियों की धार्मिक पुस्तक
तंदी - स्वास की धारा

थ

थाप - लगा, आवाज़
थाओ, थाई - स्थान
थोयो - है
थोथा - खोखला, व्यर्थ

द

दरसाऊँ - देखूँ
दरवेश - फकीर
दम्भ - पाखण्ड
दगबाज - धोखेबाज
दलिद्दर - आलस्य, मलीनता
दात - देन
दारा - स्त्री
दामन - पल्ला
दा - का
दायम - हमेशा
दारूद - समाप्ति
दारू - शराब
दिवस - दिन
दिलगीर - चिंतित
दीदार - दर्शन
दीख - दात, देन
दुस्तर - जो तरने में कठिन हो
दुरमत - मलीन बुद्धि
दु:खभन्जन - दु:ख नाशक
दुर्गम - कठिन
दुर्लभ - विरला
दुबधा - संदेह
दुर्भिख - अकाल
दुतिया - दुई (द्वन्द्व)
दूषना - मलीनता
दूजा - दूसरा
देवल - देवता (देह रूपी मंदिर)
दोज़ख - नर्क
दोख - दोष
द्रब - धन

ध

धरनी - धरती
धन्दुकार - अज्ञानता, अंधकार
धृगकार - धिक्कार
धाए, धावे - दौड़ना
धावन - दौड़ना
धीरा - धैर्य
धीया - बेटी
धूड़ी - चरण रज
धैन - (सुख) देने वाला
धंदा - कर्म

न

नफस - मनोकामना
नबेड़ा - निपटारा

नया - न्याय
नभचर - उड़ने वाले पक्षी
नरद - शतरंज की गोटी
न्यूँ - अनन्य प्रेम, प्रीती
नरखे - देखे
नलनी सूआ - जैसे तोते को नली का भ्रम होता है
नदरी नदर - कृपा दृष्टि
नाद - आत्म ध्वनि
नासूत - जागृत अवस्था
नाथा - मालिक, स्वामी
नाठे - भाग जाना
निरंजन - निर्विकार, माया से रहित
निधान - खजाना, भण्डार
निहाल - प्रसन्नचित्त
निरधार - जो किसी पर आश्रित न हो
निराकार - आकार रहित
निवाऊँ - झुकाना
निस्तारी - छुटकारा
निमख-निमख- प्रत्येक क्षण
निर्वाच - जो वाणी में न आ सके
निवारी - दूर करना
निरवाना - बन्धन मुक्त
निदान - इलाज
निरंकन - जो अनुमान में आ सके
(गरीब) निवाजा- दयालु
निरत - स्वासों की गति, कुण्डलिनी
निरालम - बिना किसी सहारे
निरविरत - वृत्ति रहित
निध्यास - व्यवहार के योग्य, अमल करना
निमाना - दीन-हीन
निदा - (आत्मिक) ध्वनि
निजात - छुटकारा
नित - हर समय
निरनय - फैसला
निबनी - बनावटी नम्रता एवं क्षमा
निहथावाँ - जिसका ठिकाना न हो
निव - नीचे झुक कर
निरोल - निर्मल, केवल
निरमायल - निर्मान
निरपख - पक्षपात रहित
निषंक - निस्संदेह, निर्भय
निरमाया - परम पवित्र
निरतन - बिना शरीर (पुरुष)
नियाँ - न्याय
निखुटा - समाप्ति पर
नीवत - नीची (जगह)
नेहचल - स्थिर
नेह - प्रेम
नेहसंग - असंग, संग रहित
नौ निध - नौ प्रकार के भण्डार
निसबासुर - रात-दिन

प

पसारा - विस्तार, फैलाव
पतितपावन - पतितों को पवित्र करने वाला, ईश्वर
परसूँ - पहुँचना, प्राप्त करना
पराजय - आधीन, हार
प्रभता - सर्व श्रेष्ठता, महानता
परवान - सम्पन्न
पछाता - पहचाना
परतीत - विश्वास
परमान - प्रभुत्व, महानता
पच्चीस प्राकृत- पाँच तत्वों (भूत) की पाँच-पाँच प्रकृतियाँ या गुण।
- पवन-दौड़ना, धावना, अकड़ना, सुकड़ना, फैलना
- अग्नि-भूख, प्यास, निद्रा,

		आलस्य, कान्ति
	-	जल-खून, वीर्य, थूक, पेशाव, पसीना
	-	धरती-चाम, मज्जा, नाड़ी, हड्डी, बाल।
	-	आकाश-शोक, मोह, भय, लज्जा, कीर्ति।
पख	-	पक्षपात, पक्ष (15 दिन)
परखीना	-	परखना
पखवाद	-	पक्षपात
परमाद	-	आलस्य
परविरत	-	प्रवृत्ति
परसन	-	पहुँचना, प्राप्त करना, प्रसन्न
परनाम	-	नमस्कार
परीत	-	अति प्रेम
परगास	-	अजाला, प्रकाश
परसंग	-	प्रसंग, विषय
परहरे	-	दूर करना
परीत्याग	-	त्यागना
परवीन	-	प्रवीण, कुशल
परचे	-	परिचित होना
पखारे	-	पवित्र करना, सूक्ष्म बनाना
परवेसे	-	प्रवेश करना
पतयावे	-	सन्तुष्ट
पन्ध	-	मार्ग
(उदरमाहिं)		
परीखे	-	पेट में डालना
प्रतिपाला	-	पालनहार
परानी	-	प्राणी, जीव
पलीती	-	अपवित्रता
(हाट) पटन	-	योग की ऊँची अवस्था
परतीजे	-	तृप्ति
पत	-	आत्म सम्मान
पखावज	-	बैजंतर
प्रबोध	-	ज्ञान प्राप्ति
पच-पच	-	भटक-भटक कर
पड़दा	-	पर्दा
परेट	-	परेड
परेरे	-	बहुत दूर
पटम्बर	-	रेशमी कपड़ा
पसरवन	-	प्रसार, फैलाव
पाँच भूत	-	पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश
पाँच दोख	-	पाँच दोष (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार)
पारगरामी	-	सर्व व्यापक
पारावार	-	अंत
पावक	-	अग्नि
पासे	-	साथ रहना
पाँच पनिहार	-	पाँच तत्व
पाक	-	पवित्र
पाँच पचीस	-	पाँच तत्व तथा पच्चीस प्रकृतियाँ
पिंगू	-	लंगड़ा
पिण्डज	-	जेरज अर्थात् जेर (गर्भ) से उत्पन्न होने वाले
पुनीत	-	पवित्र
पुरख	-	पुरुष
पुरियाँ	-	नगर
पुगात	-	पूरा करना
पेख	-	देख
पैराएँ	-	चोगा (पहनने वाला)
पेज	-	पाँच

फ

फरमान	-	आदेश
फरश	-	पृथ्वी
फनाह	-	फानी, नश्वर
फजल	-	कृपा
फरमूद	-	फरमान, हुक्म
फानी	-	नाशवान

फाही - फाँसी

ब

बखशीश - उपहार
बन्दगी - पूजा
बखान - ब्याख्यान
बरोले - मथना
बराजा - बिराजमान होना
बदी - बुराई, दुष्टता
बखशनहार - माफ करने वाला
बकतर - ज्ञान ध्यान का वेष-भूषा
बखशंद - क्षमा करने वाला
बल - बलिहार जाना
बलोड़े - मथना
बगल - बगुला
बखीली - कंजूसी
बड़वानल - भारी जलन
बटमारी - रास्ते के लुटेरे (राहजन)
बाँछूँ - माँगूँ
बाट - रास्ता
बाल - बचपन
बानी - सदुपदेश
बाद - वाद-विवाद
बासन - शरीर
बासर - दिन
बाझ - बिना
बिसमाद - आश्चर्य-जनक
बिसरामी - विश्राम
बिलास - रमण
बिनसे - नाश होना
बिधाता - विधान बनाने वाला, ईश्वर
बिमल - मल रहित
बिकराल - भयानक
बिख - विष
बिन्दे - अनुभव करना
बिगोचा - असमर्थ
बिन्द - केन्द्र, वीर्य
बिलम - देरी
बिजिया - नशीली वस्तु
बीजाई - नाम रूपी बीज बोना
बुरज - निशान
बूझ - जानना
बेदीन - ईमान रहित, अधर्मी
बेखुद - बेहोश
बेकालिब - अशरीरी
बेधे - प्राप्त करना
बेहरमती - बेइज्जती
बेपीर - निगुरा
बेथाई - बे ठिकाना
बेहयाई - बेशर्मी
बेगैरत - बेशर्म, निर्लज्ज
बौहड़ - बार-बार
बंकनी - सुषम्ना नाड़ी

भ

भव - संसार
भरमाया - भटका हुआ
भरतारा - पालन पोषण करने वाला
भरवास - भरोसा
भवचर - पृथ्वी पर रहने वाले जीव
भरता - पति-परमात्मा
भगूनी - कर्म फल भोगना
भवेत - हो जाता है
भाल - खोजना, देखना
भाख - जानना
भावी - प्रारब्ध, पूर्व कर्म फल
भाये - अच्छा लगना
भिख्यारी - भीख माँगने वाला
भाने - प्रभु इच्छा
भीत - दीवार

भुलेखा - भ्रमित होना
भूखन - भूषण, जेवर
भूपाल - राजा
भेख - भेष

म

मनूर - प्रकाशवान
महरम - सच्चा मित्र
मइयल - आकाश
मसीत - मस्जिद
मरदन - मलना
मत कित - कदाचित, संयोग वश
मस - प्रेम रूपी मस्ती
मन्दरोई - मंत्र जानने वाला
मसान - शमशान
मगरूर - घमण्डी, अहंकारी
मनबांछित - मनचाहा
मखमूर - लवनीन होना
21600 मनियाँ-24 घंटों में स्वासों की गिनती
महताब - सूर्य
मलकूत - स्वप्न अवस्था
मसैहरी - मच्छरदानी, प्रभु प्रेम में विकारों से बचने का उपाय
मजाहब - मजहब का बहुवचन, मतान्तर
मण्डन - समर्थन करना
मज्जन - स्नान
मातरा - विवरण
मानी - सर्वशक्तिमान
मारफत - आध्यात्मिक, द्वारा
मानक - मणी
(गत) मित - अस्तित्व
मिथ्या - झूठा
मीर - राजा
मीरास - कमाई पूँजी
मित्त - मित्र
मुकत - मुक्त, बन्धन रहित
मुदगर - यम का दण्ड
मुआ - मरा हुआ
मुसाफ़त - सफर
मुकाए - चुकाए
मुकंदा - आनंदस्वरूप
मुगध - मुग्ध
मुनीश - ऋषि-मुनी
मुकाम - जगह, ठिकाना
मुहिम - अभियान, कठिन कार्य
मुरीद - चेला
मुरशिद - गुरु
मुश्क - कस्तूरी, सुगंधि
मुशक्कत - मेहनत, परिश्रम
मूढ़ी - बार-बार जन्म न पाए
मूल - जड़
मेहर - दया
मोमिन - परहेजगार, साधक

य

यगाना - अपना
युगत - युक्ति
यखनी - यक्षणी (डायन, चुड़ैल)

र

रखयक - रक्षक
रवाल - (हुक्म) चलाने वाला
रत्ते - रमे हुए
रसना - आनंद
रछपाल - रक्षा करने वाला
रजाई - आज्ञा
रब - ईश्वर, परमेश्वर
रयाजत - अभ्यास, भक्ति

रबाब - सितार, बैजन्तर
रमज - भेद
रफीक - दोस्त, मित्र
रहमत - कृपा
रमीत - धारण करना
रनक - बहुत थोड़ी
(प्रभ) राया - परमेश्वर
रास - पूँजी
राता - लीन
राजक - रिजक देने वाला, रोजी देने वाला
राँछे - समझे, जाने
रिखी - ऋषि
रिजक - रोजी
रीत - रीति-रिवाज
रीता - सुख दु:ख देने वाला
रीजावे - (दर्शन से) तृप्त कर देवे
रुत - मौसम
रूबानी - खुदाई, ईश्वरीय
रैन - रात

ल

लखना - देखना, लिखना
लवलीना - गर्क होना, प्रेम में लीन होना
लश्कर - फौज
लटापट - अगाध (प्रेम)
लहिए - कीजिए
लाह - लाभ
लावजूद - जिसका वजूद न हो, बिना शरीर वाला
लाहुत - तुरिया अवस्था
लावन - पहनावा
लामकान - मकान रहित
लिब - चित्त से लवनीन होना
लुगधिया - मोहित हो गया
लूझे - जलना
लूने (खेत) - बंजर खेत (संसार)
लेप - लगाव
लोह - तख्ती
लोचे - ढूँढ़ता है
लोए - (सब शरीरों में) एक का प्रकाश
लोड़े - खोजना

व

वडियाई - महानता
वनज - व्यापार
वक्खर - कर्म फल
वरतीजे - बाँटना, वरताना
वत्सल - कृपा करने वाला
वरंच - ब्रह्म
वरन - वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिए, वैश्य, शूद्र)
वरखे - वर्षा होना
वशेखी - विशेषी
वचित्तर - विचित्र
वन्त - बनाई हुई रचना
वसूरे - झंझट, बखेड़े
वहदत परस्ती- प्रभु परायणता
वरख - वर्ष
वासना - इच्छा
वारापार - असीमित, बेअंत
(घाट) वाध - (घटना) बढ़ना
वापारी - ब्यापारी
वाट - मार्ग
वाली - मालिक
वाचे - वर्णन करना
विखेप - (मन की) चलायमानता
विरध - बार-बार जो नाम जपा जाता है
वितरया - विधि
वियाप - समाया हुआ, व्याप
विरत - वृत्ति (मनोभाव)
वियाधी - शारीरिक रोग (ताप)

विगुन, विगन- दोष
विनास - नाश होना
विसराई - भूली हुई
विसमाद - आश्चर्यजनक
विखाद - विषाद, दु:ख
विटाए - परिवर्तन होना
विखे - विषे
विहाए - बीतना
विच - बीच
विसाल - मेल-जोल
विखमी सन्ध - कुण्डलनी
विखया - विषयों की अग्नि
विख - जहर, विष
विछोड़ा - वियोग
विहार - व्योहार
विमल - निर्मल
विखयों - विषयों
विख्यान - व्याख्यान
विखमी - कठिन
विगासे - बहाना (जल का)
वाँग - तरह
वजोग - वियोग
वँजाए - व्यापारी
वेख - देख कर

श

शरह, शरीयत- विधि विधान
शगूनी - शगुन
शमशीर - तलवार
शाहाना - शाही, राजसी
शिखरत - ऊँची से ऊँची
शिंग - शेर

स

सरजनहार - सृष्टि रचयिता, ईश्वर
सकल - सब
सयानफ - चतुराई
सनमुख - मनमानी करने वाला, सामने
सन्ताप - दु:ख
समत बुद्धि - समता बुद्धि
सलाहिए - प्रशंसा कीजिए
सम्मत - सद्बुद्धि, अच्छी मति
सखग्य - सर्वज्ञान सम्पन्न
सम्पे - इकट्ठे किए
समेर - पर्वत का नाम (सुमेर), पृथ्वी
सनैया, सनेहया-नाम के साथ प्रेम रखने वाला
सरजीत - अध्यात्म मार्ग में मन को जगाती है (प्रभु की याद)
सजदा - डंडवत प्रणाम
सतंजा - वुजू (नमाज से पहले हाथ वगैरह साफ करने की क्रिया)
सगूनी - शगुन
सवान - स्वान, कुत्ता
सरजे - रचे
सरूर - प्रेम खुमारी
सलीम - कुल होश बुद्धि
सरनी - शरण
सरिश्ट - सृष्टि
सवामी - स्वामी
समरथ्थ - समर्थ, सर्वशक्तिमान
सदाकत - सच्चाई
सरिया - पूरा होना
सरभंग - परमात्मा की प्रशंसा
सद वरखा - सौ वर्ष का
सलल-सल्लल- पानी संग पानी
स्वपज - अति नीच
सबूरी - दृढ़ निश्चय से
सयाना - चतुर, बुद्धिमान

समूआ - समाया
साख - भाव
साक - संबंधी
साहिब - ईश्वर
साट - ध्वनि
सादिक - सच्चा, सत् विश्वासी
सारंग - सर्व रंग ईश्वरीय (वाणी)
सालिक - जिज्ञासु
साखी - साक्षी
साँधा - सन्धि करना
साकत - देह अध्यासी (शारीरिक सुख दु:ख में लिप्त)
सिमर - याद करना
सिदक - सच्चाई
सिफत - विशेष गुण
सिख - शिष्य
सिदक सबूरी- सच्चाई, दृढ़ ईश्वर विश्वास
सिमरती - सिमरन, याददाश्त
सील - मधुर स्वभाव
सीस - सिर
सीर - सींचना
सुखथाई - सुख देने वाला
सुकृत - श्रेष्ठ, उत्तम
सुरती - ध्यान (सूक्ष्म), बुद्धि
सुख धाम, सुन्न सिखर - कपाली के अन्दर का स्थान
सुजान - बुद्धिमान
सुत - पुत्र
सुलखनी - अच्छे लक्षण वाली
सुरजन - दैविक गुणों वाला
सुखमन - सुषम्ना नाड़ी
सुन्नत - भाव (त्याग का)
सुथराई - सफाई
सुभाए - समाए, स्वभाव
सुखाल - आसान
सुखोपत - सुषुप्ति अवस्था (गहरी नींद)
सेती - साथ
सेली - बालों की रस्सी
सेमी - शांति
सेतज - पसीने से पैदा होने वाले जीव
सोझी - जानकारी
सोग - शोक, गर्मी
सोहबत - संगत
सोधिया - साधना करके पा लिया
सोहला - ईश्वरीय गुणगान
सोलह कला -

1. एकीकरण-जीवन शक्ति के साथ
2. श्रद्धा-गुरु और शास्त्र में विश्वास
3. प्रसन्न चित्त
4. गतिशीलता (आलस्य और प्रमाद का न होना)
5. ज्ञान प्रकाश (आत्म ज्ञान)
6. नम्रता (बड़ों का आदर)
7. सहनशीलता (पीड़ा को सहन करना)
8. इन्द्रियों का दमन
9. सत् विचार
10. मन पर संयम
11. धर्म का साक्षात स्वरूप
12. तप
13. वीर्य रक्षा
14. सत् पुरुषार्थ
15. लोक सेवा
16. यश

सौरी - अनुभव करना
संचारे - सींचे
संदेशा - संदेश
संसा - संशय
संजोग - संयोग, मेल, भेंट

संथा - सबक
संगड़ी - गूढ़ी
संकटमोचन - संकट से छुड़ाने वाला

ह

हरख - खुशी
हस्ती - हाथी, वजूद
हलाक - मार डालना
हबास - कामनाएं
हकानी - ईश्वरीय
हयाती - सच्चा जीवन
हदीसा - इस्लाम की धार्मिक पुस्तक (हदीस)
हण्डयाई - पहनना
हातिम - हातिमताई (दानी पुरुष)
हाटपटन - दसवें द्वार के अन्दर का स्थान
हिरदे - हृदय
हिकमत - तरकीव
हिरस - लालच, लोभ
हिरख - खुश होना
हीये - हृदय में
हूत - परमात्मा
हेत - हित
हंग - मैं-पना, अहंकार
हंता, हंकार - अहंकार

त्र

त्रन, तृन - तिनका
त्रैगुन - सत, रज, तम
तृश्ना - भोगों की प्यास
त्रास - डर, भय
त्राहेमान - डर मानना

हिन्दी ग्रन्थ 'श्री समता प्रकाश' (पंचम संस्करण) तथा 'अमर वाणी' की तुलनात्मक शब्द संख्या

'अमर वाणी' के शब्दों का ग्रंथ 'श्री समता प्रकाश' में
पता लगाने हेतु निम्नलिखित तालिका दी जा रही है।

अमर वाणी की शब्द संख्या	श्री समता प्रकाश की शब्द संख्या	अमर वाणी की शब्द संख्या	श्री समता प्रकाश की शब्द संख्या
1	521	31	728
2	466	32	729
3	467	33	743
4	1	34	979
5	2	35	980
6	3	36	981
7	4	37	1007
8	92	38	1008
9	103	39	1036
10	174	40	1040
11	175	41	1053
12	237	42	1054
13	293	43	1102
14	458	44	1103
15	468	45	1201
16	469	46	1289
17	470	47	1290
18	476	48	1371
19	541	49	5
20	598	50	6
21	626	51	8
22	627	52	20
23	680	53	200
24	681	54	334
25	682	55	338
26	683	56	357
27	684	57	432
28	722	58	464
29	725	59	534
30	727	60	542

अमर वाणी की शब्द संख्या	श्री समता प्रकाश की शब्द संख्या	अमर वाणी की शब्द संख्या	श्री समता प्रकाश की शब्द संख्या
61	592	98	1561
62	628	99	452
63	685	100	453
64	720	101	799
65	721	102	800
66	723	103	801
67	1093	104	802
68	1152	105	1276
69	1203	106	382
70	811	107	383
71	812	108	384
72	813	109	385
73	561	110	386
74	562	111	387
75	564	112	388
76	837	113	560
77	555	114	618
78	569	115	1293
79	1347	116	1294
80	1638	117	324
81	1639	118	318
82	1640	119	319
83	1641	120	352
84	1642	121	353
85	43	122	360
86	1661	123	596
87	1662	124	597
88	445	125	599
89	326	126	600
90	233	127	355
91	335	128	358
92	864	129	354
93	417	130	602
94	996	131	362
95	997	132	363
96	1126	133	876
97	1128	134	877

अमर वाणी की शब्द संख्या	श्री समता प्रकाश की शब्द संख्या	अमर वाणी की शब्द संख्या	श्री समता प्रकाश की शब्द संख्या
135	974	171	148
136	902	172	149
137	1354	173	150
138	603	174	151
139	616	175	152
140	617	176	153
141	882	177	154
142	992	178	155
143	723	179	156
144	648	180	368
145	649	181	369
146	41	182	370
147	42	183	1349
148	162	184	371
149	400	185	372
150	1015	186	373
151	1274	187	374
152	1277	188	378
153	1278	189	454
154	1279	190	1088
155	1280	191	185
156	1281	192	186
157	572	193	1352
158	573	194	1560
159	574	195	548
160	575	196	549
161	576	197	550
162	440	198	536
163	581	199	537
164	615	200	538
165	142	201	1039
166	143	202	205
167	144	203	822
168	145	204	823
169	146	205	824
170	147	206	1292

अमर वाणी की शब्द संख्या	श्री समता प्रकाश की शब्द संख्या	अमर वाणी की शब्द संख्या	श्री समता प्रकाश की शब्द संख्या
207	703	244	1273
208	704	245	171
209	705	246	806
210	441	247	115
211	442	248	116
212	444	249	117
213	525	250	118
214	584	251	119
215	586	252	120
216	589	253	359
217	590	254	535
218	619	255	905
219	446	256	1421
220	447	257	1425
221	448	258	1436
222	449	259	540
223	593	260	971
224	1558	261	286
225	1275	262	24
226	1284	263	510
227	1324	264	836
228	851	265	1338
229	425	266	336
230	72	267	337
231	853	268	496
232	403	269	915
233	406	270	916
234	789	271	917
235	790	272	919
236	791	273	920
237	74	274	921
238	75	275	196
239	407	276	163
240	76	277	609
241	77	278	724
242	1271	279	1363
243	1272	280	44

अमर वाणी की शब्द संख्या	श्री समता प्रकाश की शब्द संख्या	अमर वाणी की शब्द संख्या	श्री समता प्रकाश की शब्द संख्या
281	1668	317	212
282	1669	318	221
283	1670	319	300
284	477	320	310
285	478	321	311
286	479	322	312
287	484	323	521
288	485	324	1566
289	486	325	1571
290	708	326	1572
291	709	327	81
292	710	328	111
293	711	329	112
294	714	330	409
295	439	331	676
296	568	332	862
297	613	333	863
298	533	334	1000
299	1056	335	1001
300	1260	336	1261
301	1390	337	1262
302	907	338	1295
303	908	339	1348
304	909	340	1678
305	910	341	1408
306	911	342	1409
307	912		
308	913		
309	914		
310	54		
311	127		
312	204		
313	206		
314	207		
315	208		
316	209		